साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-२५ ❖ अंक-५ ❖ पृष्ठ ८४ | मार्गशीर्ष-पौष, संवत्-२०७६ | दिसंबर २०१९

संस्थापक संपादक

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

❖

पूर्व संपादक

स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

❖

संपादक

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

❖

प्रबंध संपादक

श्यामसुंदर

❖

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

❖

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२

फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

शुल्क

एक अंक —₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा
४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२
से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६,
कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

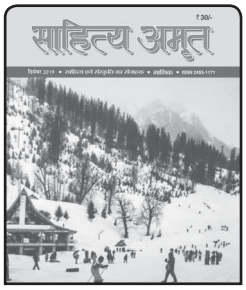

इस अंक में

संपादकीय

रामजन्मभूमि विवाद का पटाक्षेप ४

प्रतिस्मृति

पूस की रात/ *प्रेमचंद* १०

कहानी

आँसुओं की त्रिधारा/ *श्रीधर द्विवेदी* १३

चलें गाँव की ओर/ एम.डी. मिश्रा आनंद २०

कामचोर/ *राहिला रईस* २६

झरबेरा/ *वेद मित्र शुक्ल* ३६

जीवनसाथी/ *अनिता सिंह चौहान* ४४

बौनी दादी/ *पी.सी. वशिष्ठ* ५२

नई सुबह/ *मंजरी शुक्ला* ६४

आलेख

रचना और आलोचना के रिश्ते/ *बी.एल. आच्छा* १८

ऊर्जा बचाएँ और ऊर्जस्वी बनें/ *दुर्गादत्त ओझा* २८

लोकतंत्र की शोभा : राजनीति या लोकनीति/ *अखिलेश सिंह श्रीवास्तव* ४०

भारत-रक्षक सम्राट् स्कंदगुप्त/ *राकेश कुमार उपाध्याय* ५४

लघुकथा

माँ का दिल/ *मार्टिन जॉन* १२

शुरुआत/ *मार्टिन जॉन* ७७

कविता

बैलन की घंटी गरे बाजे/ *प्रतिमा अखिलेश* १७

बादल की ओट से/ *नीरजा माधव* ३३

शब्द ईश्वर/ *पुरुषोत्तम व्यास* ३९

वनकन्या/ *हेमंत कुमार चावड़ा* ४६

पीछे छूट गई आवाजें/ *राजकुमार कुंभज* ५७

किसी की उधारी है जिंदगी/ *जॉनी अहमद* ६५

कहिए अम्माँ/ *रमेशचंद्र पंत* ६८

जिंदा रहने की खातिर/ *विनय मिश्र* ६९

ललित-निबंध

पत्ता टूटा डाल से/ *नर्मदा प्रसाद उपाध्याय* ३४

राम झरोखे बैठ के

नए भारत का निर्माण और हम/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४२

संस्मरण

एक दिन : एक जीवन/ *राजशेखर व्यास* ४७

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

दक्षिण अफ्रीका का दामाद/ *ज्योतिर्लता गिरिजा* ५८

व्यंग्य

काहे प्रिंसिपल माथुर भए त्यागी/ *हरीश नवल* ६२

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

किस्सा नीलकंठ/ *मार्क ट्वेन* ६६

यात्रा-संस्मरण

दिल्ली से हेग/ *ओम प्रकाश शर्मा 'प्रकाश'* ७०

बाल-संसार

पॉलीथिन और गौ-हत्या/ *राजीव नामदेव* ७५

पक्षियों से प्रेम/ *वंदनागोपाल शर्मा 'शैली'* ७६

●

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७८

वर्ग-पहेली ७९

साहित्यिक गतिविधियाँ ८०

संपादकीय

रामजन्मभूमि विवाद का पटाक्षेप

रामजन्मभूमि और बाबरी मसजिद के करीब एक सौ पैंतीस साल से चले आ रहे विवाद का पटाक्षेप शीर्ष न्यायालय के निर्णय के बाद हो जाएगा, देश में ऐसी आशा थी। पिछले दस-पंद्रह साल से देश में एक विचित्र सा तनाव का माहौल बना हुआ था, जिससे देश के विकास की गति अवरुद्ध हो रही थी। आशा का कारण यह था कि कुछ लोगों के एतराज के बाद भी शीर्ष न्यायालय ने दिन-प्रति-दिन मुकदमा सुनने का फैसला किया। यह भी स्पष्ट हो गया कि फैसला १७ नवंबर के पहले आ जाएगा, क्योंकि पाँच न्यायाधीशों की पीठ के अध्यक्ष मुख्य न्यायाधीश रंजन गोगोई १७ नवंबर को अपने पद से निवृत्त हो जाएँगे। शीर्ष न्यायालय ने कुछ दावेदारों के कहने पर कि शायद विवाद का हल मध्यस्थों के माध्यम से हो जाए, तो तीन सदस्यों की एक समिति गठित कर दी, जिसके अध्यक्ष सर्वोच्च न्यायालय के एक निवर्तमान न्यायाधीश जस्टिस कैफुल्ला थे। एक हिंदू संत श्री श्री रविशंकर और एक मध्यस्थता विशेषज्ञ भी सदस्य थे, पर समय-सीमा बढ़ाने पर भी आपसी समझौता न हो सका। अतएव सर्वोच्च न्यायालय ने मुकदमे की सुनवाई शुरू करना ही उचित समझा। किंतु सुनवाई के बीच में भी सर्वोच्च न्यायालय के पास फिर कुछ मुद्दई पहुँचे और मध्यस्थता का मुद्दा उठाया तो उसने कहा, ठीक है, प्रयास कीजिए और यदि समझौता बातचीत से हो जाता है तो अदालत उस पर विचार करेगी, ताकि मध्यस्थता और बातचीत द्वारा किए गए समझौते पर न्यायालय की मुहर लग जाए। पर बात बनी नहीं और विवादित मामले की जिम्मेदारी शीर्ष न्यायालय की ही रही।

आशा का एक कारण और भी था कि मुसलिम समुदाय के बड़े रहनुमाओं एवं उनके अनेक नामी-गिरामी नेताओं ने बार-बार कहा कि सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय उन्हें मान्य होगा। उसी प्रकार विश्व हिंदू परिषद्, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ तथा अन्य हिंदू संगठनों और राजनीतिक दलों एवं देश के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने भी कहा कि शीर्ष न्यायालय का निर्णय सबको मान्य होना चाहिए। ऐसा प्रतीत होने लगा कि शीर्ष न्यायालय का जो निर्णय होगा, वह सभी दावेदारों व दोनों समुदाय के लोगों को मान्य होगा। इस आम सहमति के कारण भी अच्छा वातावरण बनता दिखाई दिया।

शीर्ष न्यायालय ने शनिवार ९ नवंबर को अपना निर्णय दे दिया और निर्णय में पाँचों न्यायाधीशों की सहमति रही। एक न्यायाधीश ने कुछ विषयों को स्पष्ट करने की दृष्टि से एक एपेंडिक्स जोड़ दिया। लेकिन निर्णय एकमत से हुआ, यानी पाँचों न्यायाधीशों, चीफ जस्टिस रंजन गोगोई, जस्टिस बोबडे, जस्टिस चंद्रचूड़, जस्टिस भूषण और जस्टिस नजीर अहमद, सबका फैसला एक ही था एवं सर्वसम्मति से था। गंभीर व विवादास्पद मुकदमों में ऐसा बहुत कम होता है। कोई-न-कोई असहमति या dissenting judgment दे देता है। यदि ऐसा न भी हो और निर्णय से सब सहमत हों, तब भी न्यायाधीश अपने-अपने तर्क देते हुए अलग लिखे फैसले देते हैं। यहाँ प्रसन्नता की बात यह है कि पूरी बेंच का एकमत से एक ही फैसला रहा। टी.वी. और समाचार-पत्रों से लगा कि अब कोई कठिनाई नहीं है। सर्वसम्मति से देश को यह स्वीकार्य है और इसी के अनुसार सरकार की आगे की काररवाई होगी। वैसे अत्यंत संवेदनशील मुकदमा होने के कारण तथा पिछले दंगों को ध्यान में रखते हुए सुरक्षा तथा अमन-शांति बनी रहे, इसके लिए केंद्र सरकार ने बहुत अच्छी व्यवस्था की थी। शांति स्थापित रहे, इसके लिए राज्य सरकारों को भी केंद्र ने विशेष परामर्श-पत्र जारी किया। उत्तर प्रदेश में शांति और सुरक्षा का विशेष प्रबंध हुआ। अयोध्या में भी केंद्र और राज्य सरकार द्वारा बड़ी संख्या में सुरक्षा बल तैनात किए गए। परमात्मा की कृपा से पूरे देश में शांति का माहौल रहा। हिंदुओं और मुसलमानों, दोनों के मुख्य प्रतिनिधि संगठनों ने भी निर्णय जैसा भी हो, जनता से शांति बनाए रखने की अपील की।

प्रधानमंत्री ने भी अपने दो उद्बोधनों में हर हाल में शांति बनाए रखने के लिए आमजन से अनुरोध किया। उन्होंने कहा कि शीर्ष न्यायालय के निर्णय से न किसी की जीत और न किसी की हार होगी, वहाँ तो केवल निष्पक्ष न्याय की ही वाणी ध्वनित होगी। न किसी के रंज का और न किसी की खुशी का इजहार, वहाँ धर्म, समुदाय या और किसी बात का प्रश्न नहीं। संविधान, विधि-विधान तथा साक्ष्य व तथ्यों पर आधारित निर्णय होगा, जो सभी देशवासियों को मान्य होना चाहिए। फिर भी शांति बनाए रखने के लिए जुलूस और प्रदर्शन आदि प्रतिबंधित कर दिए गए। यह भी कि मीटिंग न की जाए, वहाँ भड़काऊ भाषण न दिए जाएँ, जिससे उत्तेजना न फैले। सोशल मीडिया पर भी निगरानी रखी गई, ताकि अफवाहों को रोका जाए, गलत बातों को या उत्तेजित करनेवाली बातों का प्रचार न हो सके। फिर भी सोशल मीडिया पर अनुचित बात प्रसारित करनेवाले सौ से अधिक लोगों के खिलाफ पुलिस को काररवाई करनी पड़ी। ९ नवंबर को शीर्ष न्यायालय का निर्णय आने के बाद भी प्रधानमंत्री मोदी ने देश की जनता को उद्बोधित करते हुए कहा कि संयोग है, आज के दिन बर्लिन की दीवार ध्वस्त हुई थी, उसी प्रकार समुदायों के बीच भी अविश्वास की दीवार टूटनी चाहिए और सौहार्द व मेल-मिलाप का वातावरण पैदा होना चाहिए।

जैसाकि पहले कहा जा चुका है, अधिकतर प्रतिक्रियाएँ सकारात्मक

थीं। ओवैसी, सी.पी.एम. तथा सी.पी.आई. के महासचिवों ने प्रश्न उठाए कि १९४९ में जो रामलला की मूर्ति मसजिद में रखी गई तो उनके खिलाफ काररवाई के आदेश क्यों नहीं दिए गए? ज्ञात नहीं कि उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री गोविंद वल्लभ पंत ने कोई जाँच कमेटी बैठाई थी या नहीं; उस समय के प्रधानमंत्री नेहरू के आदेश से इसका पता नहीं चलता है। फिर यह भी सोचने का मुद्दा है कि अब उनमें से कितने अधिकारी या अन्य व्यक्ति जीवित हैं। निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि बाबरी मसजिद का ढाँचा जिस प्रकार ६ दिसंबर १९९६ को ध्वस्त किया गया, वह एक बड़ा अपराध था। उस समय तथाकथित अपराधियों को गिरफ्तार किया गया और मुकदमे दाखिल हुए। मुकदमे में देरी की शिकायत और कुछ व्यक्तियों के खिलाफ षड्यंत्र का मामला निरस्त कर दिया गया था। सर्वोच्च न्यायालय की एक दूसरी पीठ ने संविधान के अनुच्छेद १२५ के टोटल जस्टिस अथवा संपूर्ण न्याय के विशेषाधिकार के अंतर्गत बाबरी मसजिद गिराने के सब मुकदमे एकत्र कर एक अदालत सुने और समय-सीमा भी निर्धारित कर दी, जिसमें संबंधित अदालत को फैसला करना है। यही नहीं, बल्कि अदालत ने आदेश दिया कि अदालत के जज का स्थानांतरण नहीं होना चाहिए। चूँकि जज महोदय रिटायर होनेवाले थे, सर्वोच्च न्यायालय ने उत्तर प्रदेश सरकार को आदेश दिया कि मुकदमे के निर्णय तक उनका कार्यकाल बढ़ा दिया जाए। उत्तर प्रदेश सरकार इसका अनुपालन कर रही है। व्यर्थ में भ्रम फैलाने की कोशिश की जा रही है, गड़े हुए मुरदे उखाड़ने का प्रयास है। मंतव्य है केवल मोदी सरकार को कठघरे में खड़े करने का, ताकि मुसलिम अल्पमत का परोक्ष रूप से वोटों की खातिर तुष्टीकरण हो, वह इस तरह की माँग करनेवालों को अपना पक्षधर समझे।

एक मुद्दा ओवैसी ने उठाया कि इस फैसले से काशी और मथुरा में जो विवाद हैं, उनको उठाया जाएगा, यह भी गलत है। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने फैसले में स्पष्ट किया है कि मुगलों के समय अन्य मंदिर या पुण्य स्थल तोड़े गए, उनको उठाने का सवाल ही नहीं है और न वह उसमें जाएँगे। इसके अतिरिक्त उन्होंने कहा कि बाबरी मसजिद के ढाँचे के टूटने के उपरांत प्रधानमंत्री नरसिंह राव की पहल पर पार्लियामेंट ने कानून पारित किया था कि १५ अगस्त, १९४८ में जो स्थिति थी, उसमें रद्दोबदल का सवाल नहीं है, वह यथावत् रहेगी। इस तरह की अनर्गल बातें केवल भावनाएँ भड़काने के लिए की जाती हैं, जो अनुचित है। हिंदुओं की भावनाओं के बावजूद काशी में शिवमंदिर और मथुरा में कृष्ण जन्मस्थान के विषय में एक प्रकार से कानूनी भाषा में 'इस्टापेल' लगा है। वहाँ स्थिति यथावत् रहेगी। रामभूमि के मुकदमे के निर्णय में आए तर्कों के आधार पर उनको पुनः अदालत के विचारार्थ नहीं लाया जा सकता। शीर्ष अदालत ने २.७७ एकड़ विवादित भूमि रामलला को दी है और उसकी व्यवस्था के लिए सरकार को एक न्यास बनाना होगा। अतएव भूमि पर विश्व हिंदू परिषद् का ट्रस्ट नहीं, प्रत्युत जो नया ट्रस्ट सरकार बनाएगी, उसके द्वारा राम मंदिर का निर्माण होगा। विश्वास यह है कि नया ट्रस्ट हिंदू समुदाय का उचित प्रकार से प्रतिनिधित्व करनेवाला न्यास या ट्रस्ट होगा। मुसलमानों को मसजिद बनाने के लिए पाँच एकड़ जमीन अयोध्या में उचित स्थान पर दी जाएगी। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने फैसले में तथ्यों के साथ पूर्ण रूप से मुसलमानों की भावनाओं की संवेदनशीलता का पूरा ध्यान रखा है।

ध्यातव्य है कि मुकदमे की सुनवाई प्रारंभ होने के समय ही सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट कर दिया था कि वह इस विवाद को 'मालिकाना हक किसका' इस दृष्टि से देखेगा। उनके लिए यह सिविल विवाद है, वे किसी धार्मिक या थियोलॉजिकल क्षेत्र में नहीं जाएँगे। उन्होंने निरंतर इस पर पूरा ध्यान रखा। पक्षधरों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से अपने-अपने सबूत पेश किए। एक हजार पृष्ठों से अधिक का यह निर्णय और इतने कम समय में दिया गया निर्णय अभूतपूर्व है। पूरे विवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा दोनों ओर के पक्षधरों के तर्कों व साक्षियों का समुचित विश्लेषण है। न्यायालय का ध्यान विवाद के सिविल नेचर अथवा किसका मालिकाना हक है, इस पर रहा है। उन्होंने सब साक्षियों और तर्कों का विवेचन करने पर पाया कि दो विरोधी प्राबेबिलिटीज अथवा संभावनाओं का आकलन करते हुए रामलला के पक्ष का पलड़ा भारी लगा, रामलला को अपना जन्मस्थान मिल गया। निर्णय सुविचारित और अत्यंत संतुलित है। इसीलिए आशा है कि विवाद का अंत होगा। सुन्नी वक्फ बोर्ड ने कहा है कि वे पूर्णतया संतुष्ट न होते हुए भी पुनर्विचार के लिए न्यायालय नहीं जाएँगे। मौ. मदनी ने भी पहले यही कहा, फिर राय बदल ली। जमीयत-उलेमा-ए-हिंद के अध्यक्ष मौ. अरशद मदनी ने कहा है कि उनका संगठन पुनर्विचार की याचिका पेश करेगा। मुकदमे में पक्षधर रहे सुन्नी वक्फ बोर्ड न्यायालय न जाने की अपनी राय पर कायम है। मुख्य वादी इकबाल अंसारी, जिनके पिता १९४९ से यह मुकदमा लड़ रहे थे, ने कहा कि पुनर्विचार की माँग का कोई मतलब नहीं है। नतीजा वही रहेगा। यह कदम सौहार्दपूर्ण वातावरण को केवल खराब करेगा।

सुन्नी वक्फ बोर्ड के अध्यक्ष जफर फारुखी ने कहा कि अजीब जात है, पहले मुसलिम पर्सनल लॉ बोर्ड बार-बार कह रहा था, निर्णय मान्य होगा, अब पैंतरा बदल गया। जफर फारुखी ने यह अवश्य कहा कि बाबरी मसजिद के एवज में पाँच एकड़ जमीन लेने के विषय में सुन्नी वक्फ बोर्ड २७ नवंबर को फैसला करेगा। जामा मसजिद के इमाम ने भी रिव्यू में न जाने की राय व्यक्त की। जफरयाब जिलानी, जो सुन्नी वक्फ बोर्ड और मुसलिम पर्सनल लॉ बोर्ड के वकील थे, ने कहा कि १७ नवंबर की अपनी बैठक में फैसला किया कि मुसलिम पर्सनल लॉ बोर्ड शीर्ष न्यायालय के ९ नवंबर के निर्णय पर पुनर्विचार करने का आवेदन करेगा। देखादेखी हिंदुओं के एक संगठन 'हिंदू महासभा' और कुछ अन्य दावेदारों ने भी कहा कि वे भी पुनर्विचार के लिए न्यायालय जाएँगे। पर विधि विद्वानों का मत है कि रिव्यू हेतु कोई ठोस सामग्री बची नहीं है। देखना है कि अब क्या होता है!

रामजन्मभूमि के विवाद को शीर्ष न्यायालय के निर्णय के उपरांत और बढ़ाने की किसी प्रकार की कोशिश देश के हित में नहीं होगी। काँटों से भरा एक मार्ग समाप्त हुआ है; अब काँटों से उलझना व्यर्थ है। डर इस बात का है कि टी.वी. की बहस में कभी-कभी भागीदार ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हैं, जो दूसरे पक्ष को आहत कर सकते हैं। इससे वैमनस्य बढ़ने की आशंका बनी रहती है। मुसलिम समाचार-पत्र किस प्रकार से निर्णय पर राय व्यक्त करते हैं, वह महत्त्वपूर्ण है। क्यों अखबार

मुसलिम समुदाय में नीचे से नीचे के तबकों तक पहुँचते हैं और उनकी राय बनाते हैं। उनमें नकारात्मक बातें नहीं होनी चाहिए। दूसरा डर है कि मसजिदों में जुम्मा की नमाज में इस मामले पर क्या कहा जा रहा है, यह भी अपनी अहमियत रखता है। इसके अतिरिक्त देखने में आता है कि एक तथाकथित और अपने को उदारवादी कहलानेवालों का गुट है, जिसे नरेंद्र मोदी और भाजपा से मानसिक घृणा है, जो अवसर ढूँढ़ता रहता है कि कैसे दोषारोपण किया जाए। निर्णय में गलतियाँ निकालने की कोशिश करने वाले लिख-छप रहे हैं। अधिकतर इनकी पहुँच अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं के पढ़नेवालों में ही है, वह भी सीमित है। वे स्वयं क्या सही है, क्या नहीं, इसका विवेचन करने की क्षमता रखते हैं। इस मध्यम वर्ग को देशहित और राष्ट्रीयता के महत्त्व की भी पहचान है। अब एक नया वर्ग उभरता दिखता है, उसमें कुछ विधिवेत्ता भी शामिल होते हैं, जिन्हें सर्वोच्च न्यायालय की आलोचना करके अपने महत्त्व को बढ़ाने की ललक दिखाई देती है। कुछ और अकादमिक, पत्रकार भी इस श्रेणी में आते हैं। वे कुछ इस प्रकार से लिखते हैं, मानो शीर्ष न्यायालय ने एक कठिन सवाल का हल नहीं निकाला है, वरन् उनके निर्णय से अल्पसंख्यकों में दहशत व्याप्त हो रही है, उनको दूसरे दर्जे का नागरिक समझा जाता है, उनकी भावनाओं की हर तरह से अवमानना हो रही है, ऐसी गंध उन लेखों से निकलती है। हम अभिव्यक्ति के अधिकार के समर्थक हैं, किंतु हम पर समय की नजाकत को याद रखने का दायित्व है। हम मानव अधिकारों के हर प्रकार से पक्षधर हैं। भारतीय संविधान ने अल्पसंख्यकों को विशेष अधिकार दिए हैं। हमारा संवैधानिक न्यायालय इन विशेष अधिकारों के सजग प्रहरी है, इसमें संदेह की गुंजाइश नहीं है। इंदिरा गांधी के आपात काल के दौरान भी कई उच्च न्यायालयों के फैसले और शीर्ष न्यायालय में भी न्यायमूर्ति एच.आर. खन्ना का एडीम जबलपुर के मामले में अपना एकल dissenting judgment न्यायपालिका की संवैधानिक प्रतिबद्धता के प्रमाण हैं। मुसलिम लॉ बोर्ड की पैंतरेबाजी कुछ रहस्यमय लगती है। टी.वी. पर उनके रहनुमाओं ने मुसलमानों के घाव आदि की बात की। हिंदुओं की भी प्रतिक्रिया हो सकती है तो हमारे हजार सालों के घाव का क्या होगा। संवेदनशील मामले में शब्दावली का इस्तेमाल सोच-समझकर करना चाहिए। दोनों समुदायों के पक्षधरों को संयम से व्यवहार करना चाहिए। कुछ समझदार मुसलिम बुद्धिजीवियों ने कहा है कि आपस में समझौता हो जाता और रामजन्म की भूमि हिंदुओं को सौंप देने पाँच एकड़ जमीन न लें तो अच्छा है, अगर लें भी तो मंदिर की जगह अनाथालय आदि स्थापित करें। आगे के लिए शांति का वातावरण ही सबके लिए वांछित है और उस ओर ध्यान देना चाहिए।

इस प्रकरण से कुछ अलग, किंतु मानव अधिकारों व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से संबंधित एक प्रकरण में हम गृह मंत्रालय के एक निर्णय से नितांत असहमत हैं, वह है—आतिश तासीर को ओवरसीज इंडियन सिटीजन के अधिकार से वंचित करना। ऐसा करने के पहले उससे पूछना तो चाहिए कि क्यों उन्होंने अपना पाकिस्तानी संबंध स्पष्ट नहीं किया। वैसे समाचार पढ़नेवाला हर एक जानता है कि वह प्रसिद्ध पत्रकार तलबीन सिंह के लड़के हैं। तलबीन सिंह ने स्वयं यह कई बार लिखा है। उन्होंने ही उसका लालन-पालन किया। इंग्लैंड में शादी के बगैर तासीर के पिता सलमान से उनके संबंध हो गए थे, जो पाकिस्तानी मूल के ब्रिटिश नागरिक थे। बाद में वह पाकिस्तान में मंत्री भी रहे और पंजाब के गवर्नर थे, जब उनके सुरक्षा गार्ड ने गोली मारकर उनकी हत्या कर दी, क्योंकि सलमान तासीर ईश निंदा बिल के विरुद्ध थे और उन्होंने ईसाई मत की महिला, जो इस कानून के मातहत दोषी पाई गई थी, उसकी हिमायत की थी। यदि तासीर ने कुछ छिपाया था तो गृह मंत्रालय क्यों निष्क्रिय रहा। उनके पास तो पूरी जानकारी होनी चाहिए थी। उसके अपने तंत्र हैं। गृह मंत्रालय में अखबार भी जाते हैं। उन्हें मना कर देना चाहिए था। टेक्नीकली गृह मंत्रालय की काररवाई सही है, पर यह समय प्रतिकूल है। इस प्रकार से यकायक निरस्त कर देने के कारण मोदी विरोधियों को सरकार को कोसने का एक मौका मिल गया।

'टाइम' मैगजीन में उसके लेख को, जिसमें उसने प्रधानमंत्री मोदी को 'मुख्य विभाजक', डिवाइडर इन चीफ कहा था, उससे जोड़ दिया। आतिश तासीर ने एक और लेख 'टाइम' मैगजीन को दे दिया। गृह मंत्रालय को सोचना चाहिए था कि आखिर भारत में कितने लोग 'टाइम' मैगजीन पढ़ते हैं! जिन्होंने भारत के अखबारों में अगर इस बारे में कुछ पढ़ा भी, वह भी शायद अबतक भूल चुके थे। लेकिन गृह मंत्रालय की काररवाई ने उनको भी याद दिला दिया। जल्दबाजी में किया हुआ काम शैतान का होता है। आतिश तासीर ने एक प्रश्न के उत्तर में कहा है कि अब उसने गृह मंत्रालय के निरस्त करने के निर्णय को अदालत में कानूनी चुनौती देने का निश्चय किया है। यही नहीं, विश्व के करीब २१८ प्रतिष्ठित बुद्धिजीवियों और लेखकों ने प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर निवेदन किया है कि गृह मंत्रालय अपने निर्णय पर पुनर्विचार करे। विदेशी अखबारों में वैसे भी भारत के खिलाफ काफी कुप्रचार हो रहा है। शायद हम अपनी बात को अच्छी तरह प्रस्तुत नहीं कर पा रहे हैं। विदेशी मीडिया से हमें अपने अच्छे संबंध बनाने की कोशिश करनी चाहिए। छोटी-छोटी घटनाएँ अतिरंजित होकर विदेशों में प्रकाशित होती हैं। भारतीय नागरिक और भारतीय मूल के अन्य देशों के नागरिक असमंजस में पड़ जाते हैं। इसी प्रकार की और छोटी-छोटी घटनाएँ हैं, जैसे बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में शाखा के लिए आरोपित ध्वज का विवाद। एक घटनाक्रम का बयान है शाखा का और दूसरा है डिप्टी प्रॉक्टर का। उसने इस्तीफा भी दे दिया है। पुलिस में प्राथमिकी दर्ज कराने की कोशिश उचित नहीं लगती। उसने तैश में कार्य किया, क्षमा माँग ली। यह अध्याय समाप्त हो जाना चाहिए, वरना बातों का बतंगड़ बनेगा। इसी भाँति एक मुसलमान फिरोज खाँ सहायक प्रोफेसर की संस्कृति विभाग में नियुक्त का विरोध। हमें खुश होना चाहिए कि अन्य धर्मावलंबी संस्कृत पढ़ रहे हैं। वे हमारे धर्मग्रंथ पढ़ेंगे तो उनको भारतीय सांस्कृतिक परंपरा और धरोहर की जानकारी होगी। नियुक्ति के नियमों के अनुसार है। अठारह और उन्नीसवीं शताब्दी में ब्राह्मणों ने योरप के ईसाइयों को संस्कृत पढ़ाई और इस आदान-प्रदान से नवजागरण का प्रारंभ हुआ। दारा शिकोह को बनारस के पंडितों ने संस्कृत पढ़ाई और ५२ उपनिषदों का अनुवाद हुआ। कमलापति त्रिपाठी के पूर्वज उनमें से थे। बदलते समय की नब्ज परखने में ही बुद्धिमानी है। हम अपने मुख्य विषय से विलग हो गए कि शीर्ष न्यायालय का रामजन्मभूमि संबंधी निर्णय पूरी तरह संवैधानिक है और अपने में ऐतिहासिक महत्त्व का

है। भविष्य में बौद्धिक स्तर पर पोथे-के-पोथे इस निर्णय के विषय में विश्लेषण होगा। हमें संतोष है कि आज की विषम परिस्थितियों में शीर्ष न्यायालय ने एक दीर्घकालीन विवादग्रस्त मुकदमे का निस्तारण कर आगे बढ़ने का मार्ग प्रशस्त किया।

पाँचों न्यायमूर्ति तो हमारी बधाई के पात्र हैं ही, चीफ जस्टिस रंजन गोगोई ने न्यायिक नेतृत्व का एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया। एक सर्वसम्मति का निर्णय देश को उपलब्ध हुआ। साथ ही साथ हमें दोनों दावेदारों के मुख्य अधिवक्ताओं की भी प्रशंसा करनी चाहिए। गरमागरमी के माहौल में भी उनकी विद्वत्ता और प्रतिबद्धता प्रतिलक्षित होती है। रामलला की पैरवी करनेवाले भारत के पूर्व अटॉर्नी जनरल के. परासरन से हमारा पुराना परिचय है। वे विधिवेत्ता होने के साथ-साथ अत्यंत आध्यात्मिक व्यक्ति हैं। संस्कृत के प्रकांड विद्वान् होने के कारण उन्होंने हिंदू धर्मग्रंथों का गहरा अवगाहन किया है। अत्यंत सज्जन एवं जीवन-मूल्यों और आदर्शों से प्रेरित व्यक्ति हैं। श्रीमती गांधी के द्वितीय कार्यकाल में जब हम भारत सरकार के गृह सचिव और वित्त मंत्रालय के न्याय विभाग के सचिव थे, प्राय: उनसे अनेक महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर परामर्श करते थे, कानूनी राय लेते थे और अनेक विषयों पर विचार-विमर्श करते थे। वे धैर्यवान और न्यायालय की गरिमा को ध्यान में रखते थे। रामजन्मभूमि विवाद के समय भी सर्वोच्च न्यायालय ने उनसे उनकी वय और स्वास्थ्य के कारण बैठकर अपनी बहस करने को कहा, पर उनका उत्तर था कि न्यायालय की मर्यादा का ध्यान रखते हुए सदैव की तरह वे खड़े होकर ही अपना पक्ष प्रस्तुत करना चाहेंगे। परासरनजी की सफलता पर हम उनको आदरपूर्वक बधाई देना चाहेंगे। निर्णय से उन्हें अत्यंत संतोष तो होगा ही, हिंदू समुदाय को भी लंबे समय के बाद सांत्वना प्राप्त हो सकी।

मुसलिम संगठनों के पैरोकार डॉ. धवन साहब ख्याति प्राप्त वरिष्ठ एडवोकेट हैं। मिजाज के तेज-तर्रार, सिद्धांतप्रिय धवन अपनी बात बड़ी स्पष्टता से रखते हैं। इसलिए बहस के समय कभी-कभी गरमी नजर आई, लेकिन धावन अति सुसंस्कृत एवं विचारशील व्यक्ति हैं। गोष्ठियों में हमारी और उनकी कई बार भागीदारी रही है। अच्छी जान-पहचान है। उनके पिता डॉ. धवन इलाहाबाद उच्च न्यायालय के जानेमाने एडवोकेट थे। वे इलाहाबाद विश्वविद्यालय में पार्टटाइम लैक्चरर भी थे। एल-एल. बी. के एक कोर्स में उन्होंने हमें पढ़ाया भी था। आनंद भवन से उनके अच्छे संबंध थे। वे लेफ्टिस्ट विचारधारा के चिंतकों में माने जाते थे। प्रधानमंत्री पं. नेहरू ने उन्हें पश्चिम बंगाल का राज्यपाल भी नियुक्त किया था। सर्वोच्च न्यायालय में धवन अपने पूज्य पिता की धरोहर सँजोऐ हुए हैं। न्यायालय में एक पेशेवर वरिष्ठ विधिवेत्ता के नाते धवन साहब ने मुसलिम पक्ष को जिस कुशलता से प्रस्तुत किया, वह भी सराहनीय है। वह उनका वकालत पेशे का कर्तव्य था, वह बखूबी उन्होंने पूरा किया।

वीर सावरकर के खिलाफ जिहाद

पिछले कुछ दिनों से वीर सावरकर के खिलाफ, विशेषतया उनको 'भारत रत्न' से अलंकृत करने के प्रस्ताव के उपरांत एक जिहाद शुरू कर दिया गया। प्रस्ताव भाजपा और शिवसेना के मैनीफेस्टो में सन्निहित था। वैसे भारत रत्न देने या न देने का निर्णय भारत सरकार और राष्ट्रपति महोदय करेंगे। भाजपा और शिवसेना के चुनाव के पहले गठबंधन के बावजूद सरकार बनाने के समय शिवसेना की माँग कि उनका मुख्यमंत्री हो अथवा ढाई-ढाई साल के लिए दोनों दलों का मुख्यमंत्री हो; और मंत्रियों के पद आधे-आधे दोनों दलों में बाँटे जाएँ। इस माँग को भाजपा ने नकार दिया और कहा कि चुनाव के पहले ऐसा कोई निर्णय नहीं हुआ था। भाजपा अध्यक्ष और प्रधानमंत्री ने अपने चुनावी भाषणों में साफ-साफ कहा था कि फड़णवीस ही अगली सरकार में मुख्यमंत्री बनेंगे। लिखते समय तो ऐसा प्रतीत हो रहा है कि न्यूनतम साझा कार्यक्रम के आधार पर शिवसेना, शरद पवार की एन.आर.सी.पी. और कांग्रेस मिलकर सरकार बनाएँगे। यही नहीं, यह भी खबर है कि जो समझौता इन तीन दलों में हुआ है, उसमें वीर सावरकर को 'भारत रत्न' प्रदान करने के मुद्दे को हटा दिया गया है। फिर भी टी.वी. पर और कुछ समाचार-पत्रों में वीर सावरकर के व्यक्तित्व एवं कार्यकलापों की जमकर आलोचना हो रही है।

चंद बुद्धिजीवी, जो अपने को उदारवादी और सहिष्णु भी कहलाने का दम भरते हैं, कभी इस चैनल पर तो कभी उस चैनल पर अपने कुतर्कों को दोहराते रहते हैं। गोइवोल्स की तरह उनका विश्वास है कि दिनोदिन आलोचना की जाए तो झूठ भी सच लगने लगेगा, खासकर उन लोगों को, जिन्हें इस विषय की विस्तृत जानकारी नहीं है। हद तो तब हो गई, जब राहुल गांधी ने वीर सावरकर को भीरू-डरपोक (कावर्ड) कहा। काश, वीर सावरकर के विषय में उनकी दादी ने क्या कहा, किस प्रकार के शब्द उनके सम्मान में कहे, वे उनको पढ़ लेते। करीब ७० वर्ष पूर्व धनंजय कीर की लिखी जीवनी के पन्ने उलट लेते तो शायद उन्हें वीर सावरकर के त्याग, तपस्या, बलिदान और देशभक्ति का कुछ ज्ञान हो जाता। चूँकि महाराष्ट्र में चुनावी माहौल था, अत: डॉ. मनमोहन सिंह ने स्थिति को सँभालने की कोशिश की, क्योंकि वे जानते हैं कि महाराष्ट्र में वीर सावरकर के प्रति जनसाधारण में कितनी श्रद्धा है। डॉ. सिंह ने कहा कि हम सावरकर का आदर करते हैं, किंतु उनकी हिंदुत्व की विचारधारा से असहमत हैं। यह ठीक है कि विचारधाराओं की भिन्नता तो लोकतंत्र का आधार है। यह जरूरी नहीं है कि किसी महान् विभूति की हर बात से सहमत हुआ ही जाए। वीर सावरकर के बहुत से विचार हमें भी हृदयग्राही नहीं हैं। वैचारिक मतभेद के कारण उनके व्यक्तित्व और राष्ट्रीय अवदान की अवमानना तो नहीं होनी चाहिए। वीर सावरकर के अदम्य साहसी व्यक्तित्व पर कीचड़ उछालने की कोशिश चंद्रमा पर कीचड़ उछालने जैसा बेहूदा कार्य है। वीर सावरकर की '१८५७ का प्रथम स्वातंत्र्य समर' पुस्तक ने, जो प्रकाशित होने के पहले ही अंग्रेजों द्वारा जप्त कर ली गई थी, हजारों भारतवासियों को प्रेरणा प्रदान की।

वीर सावरकर को लांछित करने की मुहिम के दो मुख्य तर्क हैं। पहला यह कि उन्होंने अंडमान से ब्रिटिश सरकार को पाँच बार माफीनामा दिया। ऐसा कहनेवाले लोग उस समय की पृष्ठभूमि भूल जाते हैं। मांटेस्यू चेम्सफोर्ड सुधारों से आशा बनी थी कि अब अपने अधिकारों का वैधानिक रास्ता खुल रहा है। ऐसा नहीं था कि क्रांतिकारी अंग्रेजों के खून के प्यासे थे। बाद के क्रांतिकारियों की पीढ़ी ने गांधीजी के साथ विवाद में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट किया था। यह प्रकाशित 'गांधी साहित्य' में उपलब्ध है। प्रथम महायुद्ध के समाप्त होने पर ब्रिटिश शहंशाह ने बहुत

से क्रांतिकारियों को कालेपानी से छोड़ दिया था तो उन्होंने भी इस प्रकार के शर्तनामों पर हस्ताक्षर किए थे। प्रसिद्ध क्रांतिकारी शचींद्र सान्याल ने अपने संस्मरण 'बंदी जीवन' में इसकी चर्चा की है। वारींद्र घोष और मनिक लोका केस के अभियुक्त अन्य क्रांतिकारी साथियों ने भी शर्तनामे की शर्तों को स्वीकार किया था। वीर सावरकर राजनैतिक कैदियों के आमरण अनशन का विरोध करते रहते थे। उनका कथन था कि किसी प्रकार यातना सहते हुए, विरोध करते हुए जीवित रहना बेहतर है, ताकि फिर से ब्रिटिश साम्राज्यवाद से टक्कर लेने का अवसर मिले।

अंडमान जेल में राजनैतिक कैदियों के साथ हुए तरह-तरह के दुर्व्यवहार के समाचार सुरेंद्रनाथ बनर्जी के अखबार 'बंगाली' में छपे। भारत में भी इसकी अधिक जानकारी की माँग हुई। ब्रिटिश पार्लियामेंट में सवाल पूछे गए। तब उस समय वायसराय की कार्यकारिणी के होम मेंबर (आज के गृहमंत्री) सर रेजीनॉल्ड क्रैडक स्थिति के अध्ययन के लिए स्वयं अंडमान गए। क्रेडक ने सावरकर से भी दो बार लंबी बातचीत की। पर अंत में लिखा कि सावरकर खतरनाक व्यक्ति है। उसकी बात पर विश्वास नहीं कर सकते हैं; और उनको नहीं छोड़ा गया। प्रथम विश्वयुद्ध के समय ब्रिटिश शासन परेशान था, क्योंकि उसके पास ऐसी सूचना थी कि जर्मन जहाज 'एमडेन' प्रशांत महासागर में चक्कर लगा रहा है और उसमें एक अन्य क्रांतिकारी चंपक पिल्लई हैं; संभवत: सावरकर को मुक्त कराने की कोशिश की जाएगी।

एक और बात ध्यान देने की है कि क्रांतिकारी छूटकर पुन: अपने लक्ष्य-प्राप्ति में संलग्न हो जाते थे। यह एक स्ट्रेटेजी थी। वीर सावरकर शठ के साथ शठ जैसा व्यवहार करने में विश्वास रखते थे। उनके सामने शिवाजी का उदाहरण था, जो कई बार सत्तारूढ़ नवाबों आदि से खेद व्यक्त किया और स्वामिभक्त का नाटक किया। औरंगजेब के साथ भी उनहोंने ऐसा ही किया और किसी प्रकार मुगलों के चंगुल से भाग निकले। श्रीकृष्ण ने हथियार न उठाने का प्रण लिया था और अपनी सेना कौरवों को दे दी थी, किंतु पूरे महाभारत के युद्ध में उनके शब्द व व्यवहार पांडवों के प्रोत्साहन के स्रोत थे। सावरकर ने मैजिनी और उसके आंदोलन को पढ़ा था और लिखा भी। भारत की स्वतंत्रता सावरकर का लक्ष्य था। स्वराज प्राप्त करना उनका साध्य या उसके लिए वे हर प्रकार के साधनों का उपयोग करने को तत्पर थे। जहाँ तक देश की आजादी का सवाल था, उनके लिए साध्य और साधन के वैषम्य का कोई प्रश्न नहीं था।

दूसरा कारण, जिसकी वजह से उन पर लांछन लगाए जा रहे हैं, वह कि वे गांधीजी की हत्या के षड्यंत्र में शामिल थे और उन पर लालकिले में मुकदमा चला। दो जीवन के लिए कालापानी को निष्कासित वीर सावरकर को आशा नहीं थी कि आजाद भारत में, जिसके लिए उन्होंने पूरा जीवन समर्पित किया, उन्हें पुन: जेल जाना पड़ेगा। अधिक लोगों को पता नहीं है कि १९०९ के पहले लंदन में दो बार गांधीजी और सावरकर की मुलाकात हुई थी। विजयादशमी के अवसर पर एक मीटिंग में गांधीजी ने अध्यक्षता की, जहाँ सावरकर को भी बोलना था। दोनों की विचारधारा स्पष्ट हो गई थी। आसफ अली, जो विजयादशमी की बैठक में मौजूद थे, ने लिखा है कि सावरकर का भाषण सबसे प्रभावी था। तेंदुलकर और प्यारेलाल की कई वॉल्युम की जीवनी में उसको देखा जा सकता है। गांधीजी की अन्य जीवनियों में भी इसका जिक्र है। सावरकर को जनता की माँग पर अंडमान से भारत में लाने के बाद, जेल में रखा गया। बाद में उनको रत्नागिरि में रहने के आदेश हुए। वे जिले के बाहर नहीं जा सकते थे। यह हाउस एरेस्ट की तरह था। वहाँ सावरकर से मिलने गांधीजी और कस्तूरबा गए और काफी समय तक बातचीत होती रही। अछूत समस्या पर विचार-विमर्श हुआ, पर दोनों के राजनैतिक विचारों और समस्याओं के विषय में साम्य नहीं हो सका। सावरकर को गांधी हत्याकांड में तत्कालीन प्रधानमंत्री की जिद के कारण शामिल किया गया। डॉ. अंबेडकर, जो कानून मंत्री थे, उनको पूरे मामले से अलग रखा गया। डॉ. अंबेडकर ने किस प्रकार एल.बी. भोपटकर, जो सावरकर के वकील थे, को गोपनीय रूप से बताया कि वीर सावरकर के विरुद्ध कोई सबूत नहीं है और वे शीघ्र छूट जाएँगे। इस पूरे प्रकरण को मोहन मोलगाँवकर की पुस्तक 'द मेन हू किल्ड द' में सुधी पाठक देख सकते हैं। विशेष अदालत के न्यायाधीश जस्टिस आत्माचरण ने उन्हें रिहा कर दिया कि सावरकर के खिलाफ कोई विश्वसनीय सबूत नहीं है। इसका तात्पर्य है कि वे निर्दोष हैं। यही कानून की मान्यता है कि नामी-गिरामी एडवोकेट श्री पी.आर. दास, जिन्होंने सावरकर की पैरवी की, वे प्रसिद्ध कांग्रेस नेता सी.आर. दास के छोटे भाई थे। फैसले के उपरांत जब वीर सावरकर ने उनको धन्यवाद दिया तो पी.आर. दास ने कहा कि भाई, आपके खिलाफ कोई उचित साक्ष्य था ही नहीं, आपको हर हालत में रिहा होना ही था। एल.बी. भोपटकर चाहते थे कि एक इनक्वायरी की माँग रखी जाए कि सावरकर को गांधी हत्याकांड में क्यों फँसाया गया? वीर सावरकर ने कहा कि इसकी कोई आवश्यकता नहीं, इससे कटुता ही बढ़ेगी। देश की आवश्यकता है—एकता की और एकजुट होकर देश को मजबूत बनाने की। फिर भी कुछ कांग्रेसी तथा कम्युनिष्ट नेता वीर सावरकर का नाम गांधी हत्याकांड से जोड़ते रहते हैं।

सावरकर बंधुओं को रिहा करने के लिए १९२० के करीब अपने पत्र में जोरदार सिफारिश की थी। उसमें विशेषकर गांधीजी ने छोटे भाई दामोदर सावरकर के विषय में लिखा कि वह उनको लंदन के दिनों से जानते हैं। वह एक महान् देशप्रेमी हैं। उनके राजनैतिक विचारों से उनका मतिभेद है, यह भी गांधीजी ने कहा। सावरकर के गोडसे और आपटे के पुराने संबंधों के कारण उन्हें अभियुक्त बना दिया गया। 'गिल्ट वाई एसोशियन' अथवा संबंधों के आधार पर उनको गांधीजी के हत्याकांड के मामले में शामिल किया गया। कोई सीधा साक्ष्य था ही नहीं। वीर सावरकर जैसा दूरदर्शी चिंतक गांधीजी की हत्या के बारे में सोच ही कैसे सकता था। गांधीजी की हत्या से लाभ क्या था? गांधीजी स्वयं उन दिनों बार-बार कहते थे कि अब उनकी बात कोई नहीं सुनता। १५ अगस्त को उन्होंने कोई संदेश नहीं दिया। वे विभाजन के खिलाफ थे, पर उनके प्रमुख अनुयायियों ने दूसरा ही निर्णय उनकी पीठ पीछे ले लिया। सांकेतिक रूप से कहा जाए तो गोडसे ने एक नहीं तीन गोलियाँ चलाईं। एक ने गांधीजी की जघन्य हत्या की। दूसरी ने सावरकर को निशाना बनाया और उनको जेल जाना पड़ा तथा सदैव के लिए उनको संदेह के घेरे में डाल दिया। तीसरी गोली ने हिंदू महासभा को मृतप्राय कर दिया। आज की महासभा तो कुछ सिरफिरों का डेरा है।

सावरकर के देहांत के बाद जाँच के लिए 'कपूर कमीशन' की घोषणा की गई। यह जान-बूझकर सावरकर को बदनाम करने का एक 'मोटिवेटेड' प्रयास था। उनकी रिपोर्ट में इतनी खामियाँ हैं कि उसके विवरण में जाना व्यर्थ है। यदि नेहरू सरकार को जस्टिस आत्माचरण के फैसले से संतोष नहीं था तो उसके लिए सीधा रास्ता था कि हाई कोर्ट में अपील करते। वह नहीं किया गया, क्योंकि सफलता की आशा नहीं थी। वीर सावरकर के देहांत के बाद 'कपूर कमीशन' बनाया गया। प्रधानमंत्री नेहरू से जस्टिस कपूर के अच्छे सलूक रहे थे; और वे अपनी वामपंथी विचारधारा के लिए जाने जाते थे। इस विषय में विस्तृत जानकारी के लिए हम सुधी पाठकों से निवेदन करेंगे कि वे आशुतोष देशमुख रचित सावरकर की जीवनी 'ब्रेवहार्ट सावरकर : कीपर ऑफ द सेकुलर सैफ्टन फ्लेम' को देखने का कष्ट करें। 'साहित्य अमृत' के एक अंक में हमने इस पुस्तक की चर्चा की थी। २०१९ में 'द राइट प्लेस' द्वारा मुंबई से प्रकाशित। अमेजन पर सुविधा से उपलब्ध है। खेद है कि हम अधिक विवरण में नहीं जा पा रहे हैं।

साथ ही वैभव पुरंदरे की पुस्तक 'सावरकर द ट्रयू स्टोरी ऑफ द फादर ऑफ हिंदुत्व' (जगरनाट, नई दिल्ली) को भी देखें तो सच्चाई पता लग सकती है। तटस्थ दृष्टि से बिना पढ़े, जो भी मन में आए टी. वी. की बहस में अंटशंट कहते हैं। १५ नवंबर को नेहरू मेमोरियल और लाइब्रेरी में माननीय उपराष्ट्रपति श्री वेंकैया नायडू ने विक्रम संपत के बृहत् ग्रंथ 'सावरकर इ'कोज फ्रॉम द फारगाटेन पास्ट' अर्थात् 'भूले हुए समय की गूँज' का लोकार्पण किया था। अत्यंत विशद शोध पर आधारित वीर सावरकर की १८८१-१९२४ तक की जीवनी है। उपराष्ट्रपति महोदय ने इस अवसर पर वीर सावरकर की बहुमुखी प्रतिभा और बहुपक्षीय कृतित्व पर प्रकाश डाला। अगले वर्ष जीवनी के दूसरे भाग के आने की संभावना है। यह अपने में वीर सावरकर का एक आधिकारिक एक और जीवन-चरित्र होगा। प्रकाशक है—पेंगुइन। उपर्युक्त तीन लेखकों ने पूरे मराठी लेखन का भी अच्छा इस्तेमाल किया है। सत्य को समझने के लिए इन पुस्तकों का अध्ययन भारतीय राजनीति के विद्यार्थियों के लिए आवश्यक है। इससे जानबूझकर जो भूल और गलतफहमियाँ फैलाई जा रही हैं, उनका निराकरण होगा।

बहुत लोगों को इस बात की जानकारी नहीं है कि जब वीर सावरकर रत्नागिरि में थे, उन्हें जिले से बाहर जाने की इजाजत नहीं थी, तब वे अछूतों द्वारा छुआछूत के उन्मूलन के लिए और तथाकथित दलितों के शिक्षा प्रबंधन में संलग्न रहे। यही नहीं, जब उनको सांस्कृतिक विषयों पर बोलने की आज्ञा मिल गई तो बड़ी चतुराई से वे इस सुविधा का उपयोग करने लगे, अपने भाषणों में, जिससे परोक्ष रूप से सुननेवालों का देशभक्ति और स्वराज प्राप्ति की इच्छा को बल मिले। संयोग से वहाँ के एक पारसी कलेक्टर ने आगाह किया कि आपके ऊपर तरह-तरह की निगरानी है, इसलिए आपको अपने कथन में सावधानी बरतनी होगी। अन्यथा रत्नागिरि में जिन शर्तों पर रहने की इजाजत मिली है, बॉम्बे सरकार उसको वापस ले सकती है और शर्तों को तोड़ने के अपराध में पुरानी सजा की फिर शुरुआत कर सकती है। किंतु वीर सावरकर कभी भी अपनी स्वतंत्रता के लिए सवार धुन से अलग नहीं हुए।

एक महाशय ने टी.वी. पर यह बार-बार कहा कि जब नेताजी की आई.एन.ए. देश की पूर्वी सीमा पर थी, तब सावरकर हिंदुओं को सेना में भरती होने को कह रहे थे। यह विदित है कि आई.एन.ए. को स्थानीय सहयोग प्राप्त न हो सका। सुभाष बोस सावरकर का बहुत आदर करते थे। उनसे मिलने बंबई भी गए थे। सिंगापुर और मलाया में उन्होंने वीर सावरकर की पुस्तक का पुन: प्रकाशन कराया और उसे वितरित किया गया। वीर सावरकर का मंतव्य था कि अधिक-से-अधिक हिंदू सेना में शामिल होकर शस्त्र प्रयोग करना सीखें। उनका नारा था, 'हिंदुआइज पॉलिटिक्स और मिलीटराइज हिंदूज्म' अर्थात् राजनीति में हिंदू हितों का ध्यान रखो और हिंदू समुदाय का सैनीकरण करो, ताकि वह डरपोक व कमजोर न माना जाए। उन्होंने कोई रेक्रूटिंग एजेंट का काम नहीं किया। जो कहा, वह समय की माँग थी, आवश्यकता थी। ब्रिटिश सरकार और वायसराय ने मोहम्मद अली जिन्ना को हर तरह का प्रोत्साहन दिया, पर वीर सावरकर की सदैव अवहेलना ही की। ब्रिटिश सरकार सदैव उनको संदेह की दृष्टि से देखती रही और उसी प्रकार का व्यवहार करती रही।

वीर सावरकर को 'भारत रत्न' देने की माँग आज की नहीं है, यह पुरानी है। उनका विरोध भी पुराना है। जब वीर सावरकर के चित्र को संसद् के केंद्रीय हॉल में लगाने का निश्चय हुआ, तत्कालीन राष्ट्रपति के.आर. नारायणन ने चित्र के उद्घाटन या परदा हटाने की रस्म में आनाकानी की। किंतु वीर सावरकर का चित्र आज संसद् के सेंट्रल हॉल में आदर का पात्र है, और प्रतिवर्ष उनके जन्मदिवस पर उनके प्रति अपनी श्रद्धांजलि व्यक्त की जाती है। आमजन को यह जानकारी भी नहीं है कि वाजपेयी सरकार ने राष्ट्रपति महोदय के पास 'भारत रत्न' वाला प्रस्ताव प्रेषित किया था, किंतु राष्ट्रपति ने अपनी विचारधारा के अनुसार स्वीकृति प्रदान न करके फाइल अपने पास रख ली। प्रधानमंत्री वाजपेयीजी की शालीनता प्रसिद्ध है। राष्ट्रपति ने 'हाँ' या 'ना' कर प्रस्ताव वापस नहीं किया। वाजपेयीजी ने स्मरण पत्र नहीं भेजा। यदि सरकार द्वारा प्रस्ताव दुबारा भेजते तो राष्ट्रपति को संविधान के अनुसार स्वीकृति देनी ही पड़ती। वाजपेयीजी धैर्यवान् थे। वे तत्कालीन राष्ट्रपति की भावनाओं को किसी प्रकार चोट पहुँचे, यह नहीं चाहते थे। इसीलिए यह मामला अधर में लटक गया। वीर सावरकर के लिए 'भारत रत्न' अब क्या मूल्य रखता है। ऐसे इतिहास-पुरुष के उत्कृष्ट देशप्रेम, आत्मोत्सर्ग की ललक, निडरता और साहस के मूल्य का कोई आकलन नहीं हो सकता। हम अपने को सौभाग्यशाली मानते हैं कि कानपुर हिंदू महासभा के तीन दिवस के सत्र में कई बार वीर सावरकर के दर्शन करने और सुनने का अवसर मिला, उस समय मैं इंटरमीडिएट का विद्यार्थी था और अपने चाचा के साथ कानपुर के हिंदू महासभा के अधिवेशन में गया था। उस समय की वीर सावरकर की सौम्य छवि और उनके जोशीले शब्द चलचित्र की तरह आज भी आँखों के सामने तैर रहे हैं।

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी)

पूस की रात

● प्रेमचंद

हल्कू ने आकर स्त्री से कहा, ''सहना आया है। लाओ, जो रुपए रखे हैं, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे।''

मुन्नी झाड़ू लगा रही थी। पीछे फिरकर बोली, ''तीन ही रुपए हैं, दे दोगे तो कंबल कहाँ से आवेगा? माघ-पूस की रात हार में कैसे कटेगी? उससे कह दो, फसल पर दे देंगे। अभी नहीं।

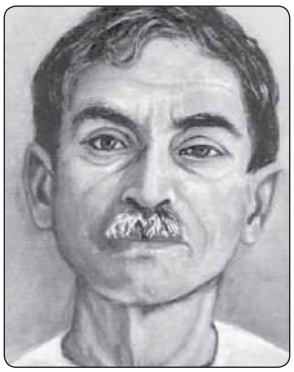

हल्कू एक क्षण अनिश्चित दशा में खड़ा रहा। पूस सिर पर आ गया, कंबल के बिना हार में रात को वह किसी तरह सो नहीं सकता। मगर सहना मानेगा नहीं, घुड़कियाँ जमावेगा, गालियाँ देगा। बला से जाड़ों में मरेंगे, बला तो सिर से टल जाएगी। यह सोचता हुआ, वह अपना भारी-भरकम डील लिये हुए (जो उसके नाम को झूठ सिद्ध करता था) स्त्री के समीप आ गया और खुशामद करके बोला, ''दे दे, गला तो छूटे। कंबल के लिए कोई दूसरा उपाय सोचूँगा।''

मुन्नी उसके पास से दूर हट गई और आँखें तरेरती हुई बोली, ''कर चुके दूसरा उपाय! जरा सुनूँ तो कौन सा उपाय करोगे? कोई खैरात दे देगा कंबल? न जान कितनी बाकी है, जो किसी तरह चुकने ही नहीं आती। मैं कहती हूँ, तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते? मर-मर काम करो, उपज हो तो बाकी दे दो, चलो छुट्टी हुई। बाकी चुकाने के लिए ही तो हमारा जन्म हुआ है। पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज आएँ। मैं रुपए न दूँगी, न दूँगी।'' हल्कू उदास होकर बोला, ''तो क्या गाली खाऊँ?'' मुन्नी ने तड़पकर कहा, ''गाली क्यों देगा, क्या उसका राज है?'' मगर यह कहने के साथ ही उसकी तनी हुई भौंहें ढीली पड़ गईं। हल्कू के उस वाक्य में जो कठोर सत्य था, वह मानो एक भीषण जंतु की भाँति उसे घूर रहा था। उसने जाकर आले पर से रुपए निकाले और लाकर हल्कू के हाथ पर रख दिए। फिर बोली, ''तुम छोड़ दो अबकी से खेती। मजूरी में सुख से एक रोटी तो खाने को मिलेगी। किसी की धौंस तो न रहेगी। अच्छी खेती है! मजूरी करके लाओ, वह भी उसी में झोंक दो, उस पर धौंस।'' हल्कू ने रुपए लिये और इस तरह बाहर चला, मानो अपना हृदय निकालकर देने जा रहा हो। उसने मजूरी से एक-एक पैसा काट-काटकर तीन रुपए कंबल के लिए जमा किए थे। वह आज निकले जा रहे थे। एक-एक पग के साथ उसका मस्तक पानी दीनता के भार से दबा जा रहा था।

□

पूस की अँधेरी रात! आकाश पर तारे भी ठिठुरते हुए मालूम होते थे। हल्कू अपने खेत के किनारे ऊख के पत्तों की एक छतरी के नीचे बाँस के खटाले पर अपनी पुरानी गाढ़े की चादर ओढ़े पड़ा काँप रहा था। खाट के नीचे उसका संगी कुत्ता जबरा पेट में मुँह डाले सर्दी से कूँ-कूँ कर रहा था। दो में से एक को भी नींद नहीं आ रही थी। हल्कू ने घुटनियों को गरदन में चिपकाते हुए कहा, ''क्यों जबरा, जाड़ा लगता है? कहता तो था, घर में पुआल पर लेट रह, तो यहाँ क्या लेने आए थे? अब खाओ ठंड, मैं क्या करूँ? जानते थे, मैं। यहाँ हलुआ-पूरी खाने आ रहा हूँ, दौड़े-दौड़े आगे-आगे चले आए। अब रोओ नानी के नाम को।'' जबरा ने पड़े-पड़े दुम हिलाई और अपनी कूँ-कूँ को दीर्घ बनाता हुआ कहा, ''कल से मत आना मेरे साथ, नहीं तो ठंडे हो जाओगे। यह राँड पछुआ न जाने कहाँ से बर्फ लिये आ रही है। उठूँ, फिर एक चिलम भरूँ। किसी तरह रात तो कटे! आठ चिलम तो पी चुका। यह खेती का मजा है! और एक भगवान् ऐसे पड़े हैं, जिनके पास जाड़ा आए तो गरमी से घबड़ाकर भागे। मोटे-मोटे गद्दे, लिहाफ, कंबल। मजाल है, जाड़े का गुजर हो जाए। जकदीर की खूबी! मजूरी हम करें, मजा दूसरे लूटें! हल्कू उठा, गड्ढे में से जरा-सी आग निकालकर चिलम भरी। जबरा भी उठ बैठा। हल्कू ने चिलम पीते हुए कहा, ''पिएगा चिलम, जाड़ा तो क्या जाता है, हाँ जरा, मन बदल जाता है।'' जबरा ने उनके मुँह की ओर प्रेम से छलकती हुई आँखों से देखा। हल्कू, ''आज और जाड़ा खा ले। कल से मैं यहाँ पुआल बिछा दूँगा। उसी में घुसकर बैठना, तब जाड़ा न लगेगा।'' जबरा ने अपने पंजे

उसकी घुटनियों पर रख दिए और उसके मुँह के पास अपना मुँह ले गया। हल्कू को उसकी गरम साँस लगी। चिलम पीकर हल्कू फिर लेटा और निश्चय करके लेटा कि चाहे कुछ हो अबकी सो जाऊँगा, पर एक ही क्षण में उसके हृदय में कंपन होने लगा। कभी इस करवट लेटता, कभी उस करवट, पर जाड़ा किसी पिशाच की भाँति उसकी छाती को दबाए हुए था। जब किसी तरह न रहा गया, उसने जबरा को धीरे से उठाया और उसके सिर को थपथपाकर उसे अपनी गोद में सुला लिया। कुत्ते की देह से जाने कैसी दुर्गंध आ रही थी, पर वह उसे अपनी गोद में चिपटाए हुए ऐसे सुख का अनुभव कर रहा था, जो इधर महीनों से उसे न मिला था। जबरा शायद यह समझ रहा था कि स्वर्ग यहीं है, और हल्कू की पवित्र आत्मा में तो उस कुत्ते के प्रति घृणा की गंध तक न थी। अपने किसी अभिन्न मित्र या भाई को भी वह इतनी ही तत्परता से गले लगाता। वह अपनी दीनता से आहत न था, जिसने आज उसे इस दशा को पहुँचा दिया। नहीं, इस अनोखी मैत्री ने जैसे उसकी आत्मा के सब द्वार खोल दिए थे और उनका एक-एक अणु प्रकाश से चमक रहा था। सहसा जबरा ने किसी जानवर की आहट पाई। इस विशेष आत्मीयता ने उसमें एक नई स्फूर्ति पैदा कर रही थी, जो हवा के ठंडे झोंकों को तुच्छ समझती थी। वह झपटकर उठा और छपरी से बाहर आकर भौंकने लगा। हल्कू ने उसे कई बार चुमकारकर बुलाया, पर वह उसके पास न आया। हार में चारों तरफ दौड़-दौड़कर भौंकता रहा। एक क्षण के लिए आ भी जाता, तो तुरंत ही फिर दौड़ता। कर्तव्य उसके हृदय में अरमान की भाँति ही उछल रहा था।

☐

एक घंटा और गुजर गया। रात ने शीत को हवा से धधकाना शुरू किया। हल्कू दठ बैठा और दोनों घुटनों को छाती से मिलाकर सिर को उसमें छिपा लिया, फिर भी ठंड कम न हुई, ऐसा जान पड़ता था, सारा रक्त जम गया है, धमनियों में रक्त की जगह हिम बह रही है। उसने झुककर आकाश की ओर देखा, अभी कितनी रात बाकी है! सप्तर्षि अभी आकाश में आधे भी नहीं चढ़े। ऊपर आ जाएँगे, तब कहीं सवेरा होगा। अभी पहर से ऊपर रात है। हल्कू के खेत से कोई एक गोली के टप्पे पर आमों का एक बाग था। पतझड़ शुरू हो गई थी। बाग में पत्तियों को ढेर लगा हुआ था। हल्कू ने सोचा, चलकर पत्तियाँ बटोरूँ और उन्हें जलाकर खूब तापूँ। रात को कोई मुझे पत्तियाँ बटोरते देखे, तो समझे, कोई भूत है। कौन जाने, कोई जानवर ही छिपा बैठा हो, मगर अब तो बैठे नहीं रहा जाता। उसने पास के अरहर के खेत में जाकर कई पौधे उखाड़ लिये और उनका एक झाड़ू बनाकर हाथ में सुलगता हुआ उपला लिये बगीचे की तरफ चला। जबरा ने उसे आते देखा, पास आया और दुम हिलाने लगा। हल्कू ने कहा, ''अब तो नहीं रहा जाता जबरू। चलो बगीचे में पत्तियाँ बटोरकर तापें। टाँटे हो जाएँगे, तो फिर आकर सोएँगे। अभी तो बहुत रात है।'' जबरा ने कूँ-कूँ कर, सहमति प्रकट की और आगे बगीचे की ओर चला। बगीचे में खूब अँधेरा छाया हुआ था और अंधकार में निर्दय पवन पत्तियों को कुचलता हुआ चला जाता था। वृक्षों से ओस की बूँदें टप-टप नीचे टपक रही थीं। एकाएक एक झोंका मेहँदी के फूलों की खूशबू लिये हुए आया। हल्कू ने कहा, ''कैसी अच्छी महक आई जबरू! तुम्हारी नाक में भी तो सुगंध आ रही है?'' जबरा को कहीं जमीन पर एक हड्डी पड़ी मिल गई थी। उसे चिंचोड़ रहा था। हल्कू ने आग जमीन पर रख दी और पत्तियाँ बठारने लगा। जरा देर में पत्तियों का ढेर लग गया था। हाथ ठिठुरे जाते थे। नंगे पाँव गले जाते थे। और वह पत्तियों का पहाड़ खड़ा कर रहा था। इसी अलाव में वह ठंड को जलाकर भस्म कर देगा। थोड़ी देर में अलाव जल उठा। उसकी लौ ऊपर वाले वृक्ष की पत्तियों को छू-छूकर भागने लगी। उस अस्थिर प्रकाश में बगीचे के विशाल वृक्ष ऐसे मालूम होते थे, मानो उस अथाह अंधकार को अपने सिरों पर सँभाले हुए हों। अंधकार के उस अनंत सागर में यह प्रकाश एक नौका के समान हिलता, मचलता हुआ जान पड़ता था। हल्कू अलाव के सामने बैठा आग ताप रहा था। एक क्षण में उसने दोहर उतारकर बगल में दबा ली, दोनों पाँव फैला दिए, मानो ठंड को ललकार रहा हो, तेरेजी में आए सो कर। ठंड की असीम शक्ति पर विजय पाकर वह विजय-गर्व को हृदय में छिपा न सकता था। उसने जबरा से कहा, ''क्यों जब्बर, अब ठंड नहीं लग रही है?'' जब्बर ने कूँ-कूँ करके मानो कहा, ''अब क्या ठंड लगती ही रहेगी? पहले से यह उपाय न सूझा, नहीं इतनी ठंड क्यों खाते?'' जब्बर ने पूँछ हिलाई। अच्छा आओ, इस अलाव को कूदकर पार करें। देखें, कौन निकल जाता है। अगर जल गए बचा, तो मैं दवा न करूँगा। जब्बर ने उस अग्नि-राशि की ओर कातर नेत्रों से देखा! मुन्नी से कल न कह देना, नहीं लड़ाई करेगी। यह कहता हुआ वह उछला और उस अलाव के ऊपर से साफ निकल गया। पैरों में जरा लपट लगी, पर वह कोई बात न थी। जबरा आग के इर्द-गिर्द घूमकर उसके पास आ खड़ा हुआ। हल्कू ने कहा, ''चलो-चलो इसकी सही नहीं! ऊपर से कूदकर आओ।'' वह फिर कूदा और अलाव के इस पार आ गया।

☐

पत्तियाँ जल चुकी थीं। बगीचे में फिर अँधेरा छा गया था। राख के नीचे कुछ-कुछ आग बाकी थी, जो हवा का झोंका आ जाने पर जरा जाग उठती थी, पर एक क्षण में फिर आँखें बंद कर लेती थी! हल्कू ने

फिर चादर ओढ़ ली और गरम राख के पास बैठा हुआ एक गीत गुनगुनाने लगा। उसके बदन में गरमी आ गई थी, पर ज्यों-ज्यों शीत बढ़ती जाती थी, उसे आलस्य दबाए लेता था। जबरा जोर से भौंककर खेत की ओर भागा। हल्कू को ऐसा मालूम हुआ कि जानवरों का एक झुंड खेत में आया है। शायद नील गायों का झुंड था। उनके कूदने-दौड़ने की आवाजें साफ कान में आ रही थीं। फिर ऐसा मालूम हुआ कि खेत में चर रही हैं। उनके चबाने की आवाज चर-चर सुनाई देने लगी। उसने दिल में कहा, ''नहीं, जबरा के होते कोई जानवर खेत में नहीं आ सकता। नोच ही डाले।'' मुझे भ्रम हो रहा है। कहाँ! अब तो कुछ नहीं सुनाई देता। मुझे भी कैसा धोखा हुआ! उसने जोर से आवाज लगाई, जबरा, जबरा।'' जबरा भौंकता रहा। उसके पास न आया। फिर खेत के चरे जाने की आहट मिली। अब वह अपने को धोखा न दे सका। उसे अपनी जगह से हिलना जहर लग रहा था। कैसा दँदाया हुआ बैठा था। इस जाड़े-पाले में खेत में जाना, जानवरों के पीछे दौड़ना असह्य जान पड़ा। वह अपनी जगह से न हिला। उसने जोर से आवाज लगाई, ''हिलो! हिलो! हिलो!'' जबरा फिर भौंक उठा। जानवर खेत चर रहे थे। फसल तैयार है। कैसी अच्छी खेती थी, पर ये दुष्ट जानवर उसका सर्वनाश किए डालते हैं। हल्कू पक्का इरादा करके उठा और दो-तीन कदम चला, पर एकाएक हवा का ऐसा ठंडा, चुभनेवाला, बिच्छू के डंक का-सा झोंका लगा कि वह फिर बुझते हुए अलाव के पास आ बैठा और राख को कुरेदकर अपनी ठंडी देह को गरमाने लगा। जबरा अपना गला फाड़ डालता था, नील गायें खेत का सफाया किए डालती थीं और हल्कू गरम राख के पास शांत बैठा हुआ था। अकर्मण्यता ने रस्सियों की भाँति उसे चारों तरफ से जकड़ रखा था। उसी राख के पास गरम जमीन पर वहीं चादर ओढ़कर सो गया। सवेरे जब उसकी नींद खुली, तब चारों तरफ धूप फैल गई थी और मुन्नी कह रही थी, ''क्या आज सोते ही रहोगे? तुम यहाँ आकर रम गए और उधर सारा खेत चौपट हो गया।'' हल्कू ने उठकर कहा, ''क्या तू खेत से होकर आ रही है?'' मुन्नी बोली, ''हाँ, सारे खेत का सत्यानाश हो गया। भला, ऐसा भी कोई सोता है। तुम्हारे यहाँ मँड़ैया डालने से क्या हुआ?'' हल्कू ने बहाना किया, ''मैं मरते-मरते बचा, तुझे अपने खेत की पड़ी हैं। पेट में ऐसा दरद हुआ, ऐसा दरद हुआ कि मैं नहीं जानता हूँ!'' दोनों फिर खेत के डाँड पर आए। देखा सारा खेत रौंदा पड़ा हुआ है और जबरा मँड़ैया के नीचे चित लेटा है, मानो प्राण ही न हों। दोनों खेत की दशा देख रहे थे। मुन्नी के मुख पर उदासी छायी थी, पर हल्कू प्रसन्न था। मुन्नी ने चिंतित होकर कहा, ''अब मजूरी करके मालगुजारी भरनी पड़ेगी।'' हल्कू ने प्रसन्न मुख से कहा, ''रात को ठंड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा।''

लघुकथा

माँ का दिल

• मार्टिन जॉन

''किससे बातें हो रही थीं?''

''माँ का फोन था।''

''क्यों बोल रही थीं?''

''कुछ नहीं, बस यों ही… समय पर खाना खा लेने, समय पर सोने की हिदायतें और…''

''माँ भूल जा रही हैं कि अब हम शादीशुदा हैं, हमारा लाइफ रुटीन बदल चुका है, हमारी जिंदगी में कई बदलाव आ चुके हैं। बच्चोंवाली हिदायतों की जरूरत नहीं।''

''अभी तुम नहीं समझोगी माँ का दिल!''

''ऊँह!'' वह झटके से उठकर जूठे प्यालों को किचन में रखने चली गई। शीला की इस हरकत पर वह मुसकराकर अखबार के पन्ने पलटने में मशरूफ हो गया।

बरसों बाद।

''देख बेटा, खाने-पीने पर ध्यान देना, रात को ज्यादा जागना मत और हाँ, रात को सोने से पहले दूध ले लेना, सुबह उठकर थोड़ी कसरत कर लेना। इससे सारा दिन तरोताजा महसूस करोगे और पढ़ाई में भी ध्यान लगा रहेगा। और सुन बेटा…''

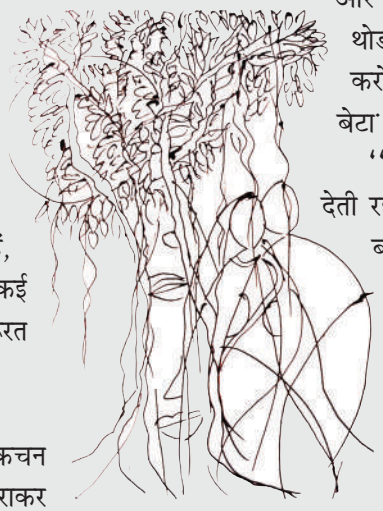

''बस भी करो शीला! रोज-रोज इतनी सारी हिदायतें देती रहती हो। तुम भूल जा रही हो कि हमारा बेटा अब बच्चा नहीं रहा। इंजीनियरिंग कॉलेज का स्टूडेंट है। उसमें मैच्योरिटी आ चुकी है।''

शीला ने उसे भरपूर नजरों से देखा, ''तुम नहीं समझ सकते माँ का दिल!''

बरसों पहले वाली मुसकराहट उसके होंठों पर चस्पाँ हो गई। वह रिमोट से खबरिया चैनल ढूँढ़ने लगा।

अपर बेनियासोल, पो. आद्रा
जिला-पुरुलिया (पश्चिम बंगाल)
दूरभाष : ०९८००९४०४७७

आँसुओं की त्रिधारा

• श्रीधर द्विवेदी

आँसू अधिकतर अपार दु:ख, असीम कष्ट और गहरी वेदना के प्रतीक होते हैं, कभी-कभी हर्षाश्रु भी होते हैं—काल, परिस्थिति, पात्र और चोट की गंभीरता के अनुसार अश्रु का स्वरूप भी बदलता रहता है। जो बात एक पीढ़ी में आँखों में जलधारा बहा सकती है, वही बात दूसरी पीढ़ी में नेत्रों को केवल गीला कर सकती है और तीसरी पीढ़ी तक पहुँचते-पहुँचते व्यक्ति को अंदर से मथ तो सकती है, पर व्यक्ति रोता नहीं, क्योंकि वह अति आधुनिकता का मुखौटा ओढ़े हुए होता है—यदि उसी परिवार की तीसरी पीढ़ी का व्यक्ति रो रहा है तो बात अंतस्तल को छू गई है और व्यक्ति अत्यंत मर्माहत हो चुका होता है।

बात स्वतंत्रता पूर्व की है, आज से सत्तर साल पहले की बात होगी, अंग्रेज भारत पर मजबूती से कब्जा जमाए हुए थे—गांधी बाबा आजादी का बिगुल बजा चुके थे, गाँवों की दशा अत्यंत शोचनीय थी, लखनऊ से सटे सुलतानपुर में मिसिरपुर नाम का एक छोटा सा गाँव था—पुरानी बसी बस्ती थी, उस समय मुश्किल से पच्चीस-तीस लोगों के घर होंगे। अधिकांश घर कच्चे-खपरैल के थे। सबकी एक हल की खेती थी। ज्यादातर परिवार मिश्र ब्राह्मण लोगों के थे। एक-दो तिवारी, पांडेय, पाठक लोग भी नवासे पर आकर दूसरे जिलों से बस गए थे। सब खाते-पीते लोग थे। उस गाँव के बहुत लोग पास के लखनऊ शहर में रोजी-रोटी के फेर में चले गए थे। सभी लोग पंडिताई और कर्मकांड कर अपनी रोजी-रोटी चलाते थे। पंडित जयशंकर मिश्र भी अपने बड़े पुत्र त्रिवेणी प्रसाद के साथ पैसा कमाने और घर-गृहस्थी की आर्थिक स्थिति ठीक करने के उद्देश्य से लखनऊ चले गए। वहाँ पहले से जमे-बसे गाँववालों से मिले। अमीनाबाद की एक धर्मशाला में ठहर गए। आस-पास के क्षेत्र में पंडिताई-कर्मकांड का काम ढूँढ़ने लगे। लोगों ने बताया, थोड़ी दूर पर एक हनुमानजी का मंदिर है, उसके मालिक एक पंडित की खोज में हैं, जो मंदिर में नियमित शिवार्चन कर दिया करे, बदले में उसे मंदिर में ही मुफ्त निवास मिल जाएगा।

पंडित जयशंकर को तो मानो मुँहमाँगी मुराद मिल गई। पुत्र त्रिवेणी प्रसाद के साथ वहीं डेरा डाल दिया। त्रिवेणी प्रसाद की आयु उस समय

चिकित्सा विषय पर हिंदी में लिखनेवाले प्रतिनिधि लेखक। नई दिल्ली स्थित जामिया हमदर्द के 'हमदर्द इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज एंड रिसर्च' में फाउंडर डीन रहे। संप्रति नेशनल हर्ट इंस्टीट्यूट, दिल्ली में सीनियर कंसल्टेंट कार्डियोलोजिस्ट। 'हृदयवाणी' (काव्य-संग्रह), 'तंबाकू चित्रावली' प्रकाशित।

मुश्किल से पंद्रह-सोलह की होगी। त्रिवेणी प्रसाद भी बाप की तरह गाँव से काम चलाऊ पूजा-पाठ भर का संस्कृत ज्ञान लेकर लखनऊ आ गया था। बुद्धि से प्रखर था। मन में आगे पढ़ने की प्रबल इच्छा थी। हनुमान मंदिर में रहते-रहते उसे अमीनाबाद के आगे सौभाग्य से स्टेशन रोड के पास वैद्य क्षमापति पांडेय का संरक्षण मिल गया। उसने उनके निर्देशन में आयुर्वेदाचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। वैद्य की उपाधि मिल गई। अब युवा त्रिवेणी प्रसाद धीरे-धीरे करके कर्मकांडी कम वैद्य अधिक बन गया। वहीं पास के यहियागंज में एक दुकान पर स्वतंत्र वैद्यकी शुरू कर दी। अब यह उसकी आजीविका का प्रमुख साधन बन गई। थोड़े दिनों बाद जब गाँव गया तो अपने साथ बड़े पुत्र राम प्रसाद को भी ले आया। धीरे-धीरे करके जब आर्थिक स्थिति सुधरने लगी और हाथ में कुछ पैसा आ गया तो वैद्य त्रिवेणी प्रसाद ने अमीनाबाद में हनुमान मंदिर के बगल में ही जमीन खरीदकर एक मकान बनवा लिया।

त्रिवेणी प्रसाद ने कालांतर में छोटे पुत्र शिव प्रसाद और भतीजे राम किंकर को भी लखनऊ अपने पास बुला लिया। बड़े राम प्रसाद का नाम पास के मौलवीगंज के सरकारी स्कूल में लिखवा दिया। वहाँ ज्यादातर अंग्रेजी की पढ़ाई होती थी। राम प्रसाद की उम्र मात्र सात वर्ष की थी। गाँव के वातावरण से नया-नया आया था। अंग्रेजी कुछ भी नहीं समझ में आती थी। ऊपर से पूरे देश में गांधी बाबा के प्रभाव में लोग अंग्रेजी भाषा, अंग्रेजी वेश-भूषा और अंग्रेजी खान-पान के प्रति काफी नफरत रखते थे। लखनऊ में हजरतगंज, अमीनाबाद और चौक के अंदर जगह-जगह सड़कों पर नौजवानों की टोलियाँ अंग्रेज-अंग्रेजी के विरुद्ध नारे लगाती रहती थीं। बालक राम प्रसाद के कोमल मन पर इसका

जबरदस्त प्रभाव पड़ा। वह स्कूल न जाकर दिनभर इधर-उधर घूमकर समय बिता देता और स्कूल की छुट्टी के समय घर वापस लौट आता। यह क्रम शुरू के एक सप्ताह तक चलता रहा। संयोग से उस स्कूल के हेड मास्टर साहेब की मुलाकात मौलवीगंज में ही वैद्य त्रिवेणी प्रसाद से हो गई। हेड मास्टर साहेब बोले, वैद्यजी आपका बेटा ठीक तो है? वह स्कूल नहीं आ रहा है। वैद्यजी के होश उड़ गए। अपने को संयत करके बोले, बिल्कुल ठीक है। घर से तो रोज स्कूल के लिए निकलता है। मास्टर साहेब, क्षमा कीजिए, आज उससे पूछूँगा, आखिर क्या बात है?

घर आकर पुत्र राम प्रसाद से बोले, का राम प्रसाद स्कूल जा रहे हो न? उत्तर मिला—हाँ, बाबू हाँ। वैद्यजी कुछ नहीं बोले, दूसरे दिन स्कूल लौटने के समय घर के बाहर चबूतरे पर बैठकर राम प्रसाद के वापस आने की प्रतीक्षा करने लगे। थोड़ी देर बाद जब राम प्रसाद स्कूल का झोला लटकाए लौटा तो वैद्य राम प्रसाद ने पूछा, का भैया स्कूल हो आए? उत्तर मिला—हाँ। पिता ने कहा, किताब-कॉपी दिखाओ, आज क्या पढ़ा-लिखा। इस पर राम प्रसाद ने चुप्पी साध ली और निरुत्तर खड़ा हो गया। वैद्यजी ने गुस्से में आव देखा न ताव उसके गाल पर दो चाँटे जड़ दिए। राम प्रसाद फूट-फूटकर रोने लगा। आँखों से जलधारा बहने लगी। यह पहला अवसर था, जब-जब राम प्रसाद के ऊपर वैद्यजी का हाथ उठा था। कठोर पिता पुत्र को रोते देखकर पसीज उठे। समझ गए, माँ के आँचल से दूर इस अनजान सफर में ये अश्रुबिंदु उसके मर्म हृदय से निकल रहे हैं। ये अश्रु बिंदु उसकी विवशता और विकलता के प्रतीक हैं। उनके नेत्र भी साश्रु हो उठे। बोले—क्या बात है? राम प्रसाद ने रूठे स्वरों में कहा—मुझे अंग्रेजी नहीं पढ़नी। स्कूल में मुझे अपमानित होना पड़ता है। मैं अपने घर की विद्या संस्कृत पढ़ूँगा।

वैद्यजी को सारी बात समझ में आ गई। उन्होंने दूसरे दिन राम प्रसाद का नाम एक संस्कृत पाठशाला में लिखवा दिया। वहाँ राम प्रसाद का मन लग गया। थोड़े समय में उसने प्रथम और मध्यमा की संस्कृत परीक्षाएँ पास कर लीं। शास्त्री की डिग्री के लिए उसे काशी के संस्कृत कॉलेज से परीक्षा देनी पड़ी। शास्त्री में भी अच्छे अंकों से उत्तीर्ण हुआ। शास्त्री होते-होते घरवालों ने उसे शादी के बंधन में बाँध दिया। दो बच्चे भी हो गए। पत्नी शहर आने के लिए अलग से जिद कर रही थी। शास्त्री करने के बाद आचार्य करने को मन था। संस्कृत में व्याकरण उसे अच्छी लगती थी। वह भी पाणिनीय व्याकरण। पिता का जोर था, बेटा कमा-धमाकर घर के विस्तार और निर्माण में हाथ बँटाए।

राम प्रसाद बड़े पसोपेश में था। कुछ बड़े सेठ प्रकार के घरों में नियमित पूजा-पाठ का काम मिल गया था। घर की गाड़ी चल पड़ी। लखनऊ विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के व्याकरण आचार्य कोर्स में प्रवेश मिल गया। फीस न के बराबर थी। अपने संकल्प, अध्यवसाय, कठोर परिश्रम और भगवतकृपा से व्याकरण आचार्य की परीक्षा भी पास कर ली। आचार्य उत्तीर्ण करने के बाद शुभचिंतकों ने सलाह दी कि केवल अंग्रेजी विषय से हाई स्कूल कर लो, नहीं तो भविष्य में उन्नति के अवसर नहीं मिलेंगे। देश स्वाधीन जरूर हो गया था, पर अंग्रेजी के बिना गाड़ी आगे नहीं बढ़नेवाली। इसलिए दिन-रात मेहनत करके अंग्रेजी से हाई स्कूल भी कर लिया। लखनऊ विश्वविद्यालय में उसे कई ऐसे सहपाठी मिले, जो संस्कृत में धाराप्रवाह बात करते। इसी में से एक राजेश्वर दत्त ने उसे नगर के प्रसिद्ध वैद्य तारा शंकर से परिचय करा दिया। वैद्य तारा शंकर युवा राम प्रसाद के शुद्ध पथ और संस्कृत ज्ञान से प्रभावित होकर अपने अंतेवासी के रूप में स्वीकार कर लिया। इसका फल यह हुआ कि राम प्रसाद व्याकरणाचार्य समाप्त होते-होते आयुर्वेद विशारद भी हो गया। ताराशंकर उसे अपने वैद्यकत्व में लेकर सफल वैद्य बनाना चाहते थे, परंतु राम प्रसाद के घर की परिस्थितियाँ ऐसी थीं कि उसे अमीनाबाद इंटर कॉलेज में संस्कृत अध्यापक का पद स्वीकार करना पड़ा। इस पद पर हर महीने नियमित वेतन मिलने की गारंटी थी, जो स्वतंत्र वैद्य के रूप में संदिग्ध थी। संस्कृत अध्यापन के अतिरिक्त वह आस-पास के कुछ प्रतिष्ठित घरों में नियमित पूजा-पाठ, कर्मकांड और बच्चों को संस्कृत शिक्षण का काम भी कर लेता था। तब तक उसके चार बच्चे—दो बेटे मनमोहन और कृष्णमोहन तथा दो बेटियाँ सरस्वती और विशालाक्षी भी हो चुके थे। बड़ी बेटी सरस्वती गाँव की मान्यता के हिसाब से विवाह के योग्य हो रही थी। पिता और गाँववाले मालिक चचा का दबाव था, बेटी के हाथ पीले करो और इस उत्तरदायित्व से मुक्ति पाओ। उसके लिए पैसा जुटाना था। अच्छा वर मिलते ही बेटी सरस्वती की शादी मिसिरपुर गाँव में कर दी।

पंडितजी या राम प्रसाद के शुद्ध पाठ और सुकंठ की हर जगह प्रशंसा होती। लखनऊ में खासकर अमीनाबाद के आस-पास के कई रईस उन्हें अपने यहाँ होनेवाले मांगलिक कार्यों में अवश्य बुलाते और सम्मानित करते। इन कार्यों से होनेवाली आमदनी उनके स्कूल में होनेवाली नियमित आय को अच्छा-खासा संपूरित करती थी। उन्होंने अपने मन में दोनों बेटों को उच्च शिक्षा देने का दृढ-संकल्प कर रखा था। जहाँ ऊपर से होनेवाली यह आमदनी काम आएगी। वे बड़े पुत्र को इंजीनियर और छोटे चिरंजीव को डॉक्टर बनाना चाहते थे। उन्हें अपने दिल में कहीं-न-कहीं यह बात जरूर कचोटती रहती थी कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी संस्कृत को उतना सम्मान नहीं मिला, जितने की वह अधिकारिणी थी। उसे लोग पूजा-पाठ की भाषा समझते थे। उनके अनुसार संस्कृत में ज्ञान-विज्ञान-दर्शन के अध्ययन-अध्यापन की क्षमता थी। इस विषय पर उनके अपने कॉलेज के सहयोगियों से अकसर बहस होती थी। यद्यपि कॉलेज के सभी अध्यापक निजी तौर पर उन्हें बड़े सम्मान की दृष्टि से देखते थे। प्रणाम-नमस्कार करते, पंडितजी या राम प्रसादजी कहकर संबोधित करते, पर संस्कृत विषय के प्रति उन सबके अपने अलग-अलग विचार थे। गाँव में संस्कृत के प्रति अभी भी आदर था, सम्मान था। लोग उन्हें ही शास्त्री कहकर संबोधित करते। उनकी

दृष्टि में काशी से शास्त्री की डिग्री अंतिम और सबसे बड़ी डिग्री थी। उन्हें लखनऊ से आचार्यत्व से क्या लेना-देना? उनके ससुरालवाले भी बहुत वर्षों तक उनके संस्कृत ज्ञान से प्रभावित होकर हर शादी-विवाह में होनेवाले शास्त्रार्थ में उन्हें आगे कर देते और प्रतिद्वंद्वी पंडित के तर्कों को बिना समझे-बूझे हूँ-हाँ करने लगते। सारा शास्त्रार्थ शोर-शराबे में डूब जाता। शास्त्रार्थ की रस्म समाप्त होने के बाद दोनों पंडितद्वय आपस में मिल-बैठ स्नेह और सौहार्दपूर्ण वातावरण में परस्पर विचार-विमर्श करते रहते।

ज्येष्ठ पुत्री के विवाह के बाद लौटकर जब लखनऊ आए तो दोनों पुत्रों की पढ़ाई पर ध्यान देना शुरू किया। बड़ा मनमोहन बहुत कुशाग्र और होनहार था। कॉलेज के सभी अध्यापक किशोर मनमोहन की गणित और विज्ञान की पकड़ पर पंडितजी से प्रशंसा करते न थकते। उसे इंजीनियर बनाने का आग्रह करते। वह जमाना ऐसा था, जब मनमोहन के बहुत से हमउम्र आर.एस.एस. नामक सामाजिक संस्था से प्रभावित थे। वह भी अमीनाबाद की आर.एस.एस. शाखा में नियमित जाने लगा। आर.एस.एस. के साहित्य और प्रवचन में रुचि लेने लगा। फल यह हुआ कि कॉलेज की नियमित पढ़ाई से उसका ध्यान हट गया। विद्यालय के अध्यापक उसके विषय में अरुचि की पंडित राम प्रसाद से शिकायत करने लगे। पंडित राम प्रसाद को अपने बाल्यकाल का स्मरण हो आया, कैसे शुरुआती दिनों में अंग्रेजी स्कूल नहीं गए। पिता की डाँट सही। संस्कृत की शिक्षा स्वीकार की। उसे मनोयोग से पढ़ा। उसकी सर्वोच्च डिग्री ली। पर आज के दिन संस्कृत पढ़कर क्या मिला? एक स्कूल की मास्टरी, जिसके अकेले बल पर गृहस्थी चलाना मुश्किल। बिना ज्ञान-विज्ञान की विधिवत् पढ़ाई के आगे कुछ नहीं होने का। अपने होनहार पुत्र को, जिससे उन्हें बड़ी आशाएँ थीं, विपथगामी होता देखकर वे अंदर-ही-अंदर बहुत उद्विग्न थे। घर में राय बनी कि विवाह-सूत्र में बाँध दो। चंद्रमुखी मिल जाएगी, शाखा-वाखा सब भूल जाएगा। शादी कर दी, पर शाखा का चस्का ऐसा, जो सहज छूटनेवाला नहीं था।

साथी अध्यापक उलाहना देते, पंडितजी आपका बेटा पढ़ाई पर उतना ध्यान नहीं दे रहा, जितना देना चाहिए। पंडित राम प्रसाद ने घर आकर पत्नी के सामने बड़े पुत्र की शाखावाले कार्य-कलाप और उसके फलस्वरूप अध्ययन पर दुष्प्रभाव का जिक्र किया। अपने सपने को टूटते हुए देखकर उनकी आँखों में आँसू उतर आए। फफक-फफककर एकांत में रोने लगे। पत्नी बहुत समझदार थी। बोली, ईश्वर पर भरोसा रखिए, सबकुछ ठीक हो जाएगा। पर पंडितजी के आँसू थे कि रुकने का नाम न लेते थे। यह उस परिवार के दूसरी पीढ़ी का अश्रु-प्रपात था। इसी बीच बड़ा चिरंजीव मनमोहन भी आ गया। पिता को साश्रु देखकर वह भी भाव-विह्वल हो गया, रोने लगा। पिता को वचन दिया, पढ़ाई में कोई कोर-कसर नहीं रखूँगा। हुआ भी यही, इंटर बोर्ड की परीक्षा में मनमोहन प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ। पंडित राम प्रसाद की बाँछें खिल गईं। उनके किसी शुभेच्छु ने सलाह दी, पंडितजी टेलीफोन विभाग में डिप्लोमा अप्रेंटिसशिप का आवेदन-पत्र माँगा जा रहा है। प्रार्थना-पत्र भरवा दीजिए। आगे चलकर फोन-इंजीनियर हो जाएगा। हाई स्कूल और इंटर प्राप्तांक के बल पर मनमोहन का अप्रेंटिसशिप में चयन हो गया। अब वह जब नियमित सरकारी नौकरी और प्रणय-सूत्र के दो बंधनों में बँध गया तो थोड़े दिनों के लिए ही अन्य सभी बातें भूल जाएगा। सरकारी कार्य और वैवाहिक उत्तरदायित्व के दो पाटों के बीच जीवन नौका चल पड़ी।

बड़े चिरंजीव के लाइन पर हो जाने के बाद अब पंडित राम प्रसाद का ध्यान अपने छोटे पुत्र पर गया। पंडितजी के ज्योतिषी मित्र कहते थे, लड़का डॉक्टर बनेगा। पंडितजी यह सुनकर अत्यंत पुलकित होते। पर छोटे बेटे की अभिरुचि विज्ञान की अपेक्षा हिंदी, अंग्रेजी जैसे विषयों पर अधिक थी। बोर्ड की परीक्षा में उसे हिंदी-अंग्रेजी में काफी अच्छे अंक मिले। विज्ञान में उतने अच्छे अंक नहीं मिले, फिर भी पंडितजी बेटे को डॉक्टर बनाने का अपना सपना नहीं छोड़ा। आखिर उनके विश्वस्त ज्योतिषी मित्र की भविष्यवाणी जो थी। इंटर पास करते ही उसकी शादी अपने पैतृक घर कादीपुर गाँव जाकर कर दी। बड़े-बूढ़ों और धर्मपत्नी का आग्रह जो था। शादी से लौटकर आने के बाद उसे प्री-मेडिकल टेस्ट में बैठाया। संयोग से एम.बी.बी.एस. में उसका चयन पास के इलाहाबाद मेडिकल कॉलेज में हो गया। पंडितजी बड़े खुश थे। इलाहाबाद कोई दूर नहीं। सरकारी कॉलेज है। फीस भी अधिक नहीं होगी। कृष्णमोहन का एम.बी.बी.एस. में विधिवत् एडमिशन होने के बाद बड़े धूमधाम से घर पर गणेश पूजन कराया। शुद्ध वैदिक मंत्रोच्चार और सस्वर पाठ के बीच पूजा संपन्न हुई। उनके समस्त आत्मीय मित्र और पंडितगण खुशी के इस अवसर पर सम्मिलित हुए। समय बीतता गया। कृष्णमोहन की एम.बी.बी.एस. की पढ़ाई यथासमय पूरी हुई। मनोनुकूल विषय था। एक दिन भी बिना नष्ट किए उसने अपनी पढ़ाई पूरी की। फिर एम.डी. भी की। संयोग से वहीं काम भी मिल गया। इलाहाबाद रहकर कृष्णमोहन का संपर्क अपने जन्मस्थान कादीपुर और ननिहाल दोनों स्थानों से बना रहा इस बीच बड़े पुत्र को भी अपने विभाग में उच्च पद पर पदोन्नति मिल चुकी थी। वह दिल्ली में कार्यरत था।

पंडित राम प्रसाद की सेवानिवृत्ति का समय अब नजदीक आ रहा था। उन्हें शीघ्र ही तय करना था कि कादीपुर अपनी जन्मभूमि लौट चलें या लखनऊ में रम जाएँ। बड़े अंतर्द्वंद्व में थे। उनकी अंतरात्मा जन्मभूमि के पक्ष में थी। इसी उधेड़बुन के बीच एक दिन वह लखनऊ से कादीपुर पहुँच गए। रिटायर होने के बाद गाँव लौटने के विचार से कादीपुर जाकर वहाँ की स्थिति का आकलन करने के लिए गए थे। करीब पंद्रह वर्ष के लंबे अंतराल के पश्चात् वह गाँव पहुँचे थे। सोचा था, अब जीवन के शेष दिन यहीं व्यतीत करूँगा। बहुत दिन शहर में काट लिये। शुरू के दिन तो ठीक-ठाक बीते, परंतु जैसे ही वहाँ जमे स्वजनों को पंडित रामप्रसाद के कादीपुर स्थायी रूप से लौट आने का और शेष जीवन वहीं व्यतीत करने का पता चला तो उन सबके हाव-भाव ही बदल गए। उन्हीं के अपने आत्मीय बंधु-बांधव कहने लगे—यहाँ आपका रखा क्या है? पंडित राम प्रसाद अपने मन में सोचने लगे, क्या यह वही कादीपुर

है, जिसे मैं छोड़कर लखनऊ गया था? मेरे बचपन का कादीपुर कितना अलबेला था? अत्यंत उदार और सहिष्णु, यहाँ सभी तो थे—मास्टर, प्रोफेसर, कंपाउंडर, डॉक्टर, होमगार्ड, मेजर, मदनमोहन मालवीय के नाम से पुकारे जानेवाले लोग। कोई नंबरदार तो कोई डिप्टी। कोई शास्त्री, कोई कलेक्टर, मुफ्त में अधिकारी कहलानेवाले साहिब लोग। यह बात दीगर थी की इनमें से अधिकांश ने कॉलेज या यूनिवर्सिटी का मुँह भी नहीं देखा था।

पर आज उन्हें उस सदाशयता में विकट परिवर्तन दिखा रहा था। अब लोग बात-बात में झगड़ा कर रहे थे। तेरी नाँद यहाँ कैसे? मेरा खूँटा यहीं गड़ेगा? मेरे सेहन के आगे तेरा परनाला कैसे? मेरी नीम के नीचे तेरी चारपाई बिछी कैसे? ये मेरी मेंड़ है, मेरा खेत है। आजी की बगिया का असली वारिस मैं हूँ। वास्तविक नवासे पर मैं हूँ। आम तुमने कैसे बीने? बात तू-तू, मैं-मैं से होकर फौजदारी में बदल जाती है। झूठे मुकदमे गढ़े जाते हैं। गाँव के कई लोग छोटी-छोटी बातों पर कोर्ट-कचहरी के चक्कर लगा रहे थे। इस चक्कर में एक घर की पूरी पीढ़ी खप गई थी। तबाह हो गई थी, पर कोर्ट का सिलसिला समाप्त होता दिखाई नहीं दिख रहा था। एक परिवार में बाप लड़के से भाई-भाई से मुकदमा लड़ रहा था। डॉक्टर, मुंसिफ, इंजीनियर होकर भी लोग मुकदमा लड़ना नहीं छोड़ना चाहते। उन्होंने अपनी आँखों से देखा कोर्ट का ऐसा चस्का है, जो छुड़ाए नहीं छूटता। पुश्तैनी मकान ढह गया था। खेत बटैया पर चले गए थे। कई जमीनें इस चक्कर में बंजर हो गई थीं। किसी-किसी के घर में दीवाली बिना दीया जलाए घोर अँधेरे में बीत गई थी। पर लोग हैं कि मुकदमा लड़ना नहीं छोड़ना चाहते। कोर्ट-कचहरी का चक्कर लगाना उनकी दिनचर्या का अभिन्न अंग बन गया था। इसके बिना उनका खाना हजम नहीं होता था। निपटान साफ नहीं होती थी। ऐसे ही मुकदमेबाज परिवार के मुखिया को संयोग से विधाता ने अपने पास बुला लिया था। पर उनके योग्य वंशज मुकदमेबाजी की परंपरा को जारी रखे हुए थे। आखिर पिता की आत्मा को शांति मिलेगी कैसे? मुकदमेबाजी के नशे में जो मजा है, वह कहीं और कहाँ मिलेगा? अपने आत्मीयों का बेरुखापन और गाँव की ऐसी स्थिति देखकर पंडित रामप्रसाद की आँखों में आँसू आ गए। लखनऊ में रुकूँ या कादीपुर अपनी जन्मस्थली में रहूँ, इस अनिश्चय और अंतर्द्वंद्व के बीच पंडित रामप्रसाद लखनऊ वापस लौट आए।

लखनऊ आकर गाँव में रहने के विषय पर विचार कर ही रहे थे कि एक दिन अचानक उनका पेशाब रुक गया। संयोग से उस दिन बड़े पुत्र मनमोहन भी किसी आधिकारिक कार्य से लखनऊ आए हुए थे। उन्हें मेडिकल कॉलेज के इमरजेंसी में ले गए। मूत्राशय में कैथीटर डालकर पेशाब निकाल दिया गया। उपस्थित डॉक्टरों ने बताया, पंडितजी का प्रोस्टेट बढ़ा हुआ है। ऑपरेशन की जरूरत है। इमरजेंसी में थोड़ी देर रखकर उन्हें छुट्टी दे दी गई। घर पहुँचकर बड़े पुत्र ने कहा, मेरे साथ दिल्ली चलिए। वहीं पर प्रोस्टेट का ऑपरेशन करा देंगे। परंतु पंडित राम प्रसाद इलाहाबाद स्थित अपने डॉक्टर पुत्र के यहाँ जाने के पक्ष में थे। इसलिए उन्हें उसी रात ट्रेन से इलाहाबाद ले जाया गया। भोर होते ही कृष्णमोहन के सरकारी आवास पर पहुँच गए। अचानक बिना किसी पूर्व सूचना के पिता को बीमार पाकर डॉक्टर कृष्णमोहन थोड़ी देर के लिए स्तब्ध हो गए। बड़े भाई मनमोहन ने बताया कि पिताजी को पेट में भयंकर दर्द है। पेशाब रुक गया है। कृष्णमोहन बिना एक क्षण गँवाए पिता को अस्पताल की एमरजेंसी में ले गए। मूत्र विशेषज्ञ आए। उन्होंने कहा, प्रोस्टेट बढ़ा हुआ है। कैथीटर डालते हैं। खून, पेशाब, एक्स-रे करते हैं। सुबह ऑपरेशन का निर्णय लेंगे।

अर्धरात्रि में पंडित राम प्रसाद को एक उल्टी हुई। उल्टी करने का ढंग और उसकी तीव्रता ऐसी थी कि चिकित्सक पुत्र को यह भाँपने में देर न लगी कि यह उल्टी प्रोस्टेट के कारण न होकर आँत के अंदर किसी अन्य जटिलता के कारण हुई है। सबेरा होते-होते उस विद्यालय के सबसे कुशल और सुप्रसिद्ध सर्जन डॉक्टर सेठ को दिखाया। उन्होंने पंडित रामप्रसाद को विधिवत् देखा और हो न हो, यह एपेंडिसाइटिस हो, जिसके फलस्वरूप खून में इन्फेक्शन फैल गया है और धीरे-धीरे गुर्दे विफल हो रहे हैं। तुरंत ऑपरेशन जरूरी है। इधर ऑपरेशन अपरिहार्य था, उधर पंडित राम प्रसाद की हालत क्षण-प्रतिक्षण बिगड़ती जा रही थी। ब्लड प्रेशर गिर रहा था। बड़े भाई मनमोहन पिता को भरती कराकर दिल्ली जा चुके थे। घर पर पत्नी तीन छोटे-छोटे बच्चों को लेकर अकेले सारी घर-गृहस्थी सँभाल रही थी। मुश्किल से तीन महीने की एक बच्ची गोद में थी। कृष्णमोहन बड़ी दुविधा में थे। ऐसे में ऑपरेशन कराएँ, न कराएँ? एक-एक क्षण कीमती था। कृष्णमोहन के अपने आचार्य, जिनके अंदर उसने अपनी एम.डी. की थी, से बात की, उन्होंने कहा कृष्णमोहन, ऑपरेशन नहीं कराने पर तुम्हारे पिता बचेंगे नहीं। रक्तपूयता इतनी बढ़ जाएगी कि गुर्दे काम करना बिल्कुल बंद कर देंगे, ऐसी दशा में मृत्यु सुनिश्चित है। उस समय पूरे इलाहाबाद में कहीं भी कृत्रिम गुर्दे की सुविधा उपलब्ध नहीं थी। भगवान् पर भरोसा रखो और ऑपरेशन करा डालो।

कृष्णमोहन ने तत्काल ऑपरेशन में मृत्यु की संभावना का खतरा मोल लेकर शल्य क्रिया के लिए अपनी सहमति दे दी। अपने विश्वस्त मित्रों और संबंधियों को काम बाँटकर खुद ऑपरेशन थिएटर से सटे एक कक्ष में अपने इष्ट देव की ध्यान-प्रार्थना में लग गए। ऑपरेशन करीब आधे घंटे तक चला। सर्जन सेठ ने ऑपरेशन के बाद बताया, एपेंडिक्स पेट के अंदर फट गया था। मवाद उसके चारों ओर फोड़े की भाँति फैल गया था। आँतें विषमय और लाल थीं। पंडितजी की नाजुक अवस्था को देखते हुए वहाँ के मवाद को बाहर निकलने का साधन बना पेट बंद कर दिया गया था। पेट से मवाद खून के रास्ते गुर्दे को प्रभावित कर रहा था। उन्हें पिछले छह घंटे से बहुत कम पेशाब हुई थी। यह सब देखते हुए आगे के चौबीस घंटे बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होंगे। अब सबकुछ विधि के

हाथों में है। ऑपरेशन वाली रात कृष्णमोहन पिता के बिस्तर के किनारे बेंच पर बैठकर अपलक मूत्राशय में पड़ी रबर नलिका को निहारता रहा। कब उसमें से मूत्र की बूँदें टप-टप कर गिरें और गुर्दे के सक्रिय होने का प्रमाण मिले।

ऑपरेशन के चार घंटे बीत चुके थे। मूत्र गिरने का कोई नामोनिशान न था। कृष्णमोहन को एक-एक पल भारी हो रहा था। तब तक लखनऊ अमीनाबाद और दिल्ली ट्रंकाल द्वारा सूचना दी जा चुकी थी। सब लोग धड़ाधड़ ट्रेन से इलाहाबाद सीधे अस्पताल में पहुँच रहे थे। सबसे पहले माँ पहुँची। आते ही उन्होंने पंडित रामप्रसाद की नाड़ी पर हाथ रखा। हथेली छुई, पैरों के दोनों तलुए छुए। फिर एक अनुभवी वैद्य की तरह पुत्र को आश्वस्त करती हुई बोली, भैया हाथ-पैर गरम हैं। नाड़ी ठीक चल रही है। सब ठीक हो जाएगा। फिक्र मत करो। यह कहने के पूर्व वह अपने श्वसुर वैद्य सरयू प्रसाद के चित्र के सम्मुख हाथ जोड़कर प्रार्थना करके आई थीं—'बाबू, अपने यहाँ सब सुहागिन होकर गई हैं, फिर मैं ही ऐसी क्या अभागिन हूँ? आशीर्वाद दीजिए, आपका पुत्र जल्दी ठीक हो जाए।' इस प्रार्थना के पीछे बहुत बल था, यही संबल उन्हें पुत्र को ढाढ़स बँधाने का काम कर रह था। तब तक कृष्णमोहन को मूत्राशय से जुड़ी पारदर्शी रबर नलिका में मूत्र की बूँदें टपकती दिखाई दीं। ये बूँदें उसे अमृततुल्य लगीं। वह हर्षोन्मत्त हो उठा। माँ से बोला देखो, पेशाब बनना शुरू हो गया। माँ यह सुनकर साश्रु हो उठीं। पुत्र भी भावुक होकर अश्रुवत् हो गया। माँ के अंक से लिपट गया। युग्म आँसुओं की जलधारा बहने लगी। अत्यंत अद्‍भुत दृश्य था। मिश्र परिवार की तीसरी पीढ़ी अश्रुमय थी। माँ के करुणाश्रु, पुत्र के हर्षाश्रु और रुग्ण पिता के सुप्ताश्रु की त्रिधारा का सम्मिलन का क्षण था यह।

हमदर्द इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंस ऐंड रिसर्च
एसोसिएटेड हकीम अब्दुल हमीद सेंटेनरी हॉस्पीटल
जामिया हमदर्द (हमदर्द यूनिवर्सिटी)
नई दिल्ली-११००६२
दूरभाष : ९८१८९२९६५९

लोरी गीत

बैलन की घंटी गरे बाजे

• प्रतिमा अखिलेश

: एक :

अरी सो गओ सबरो गाँव री!
पुरा-परौसन सो गओ पूरो, सो गई नदिया-नाव री!
टुकुर टुकुर जो तकै ललनवा, मारे पलना पाँव री!
अरी सो गओ सबरो गाँव री!

बैलन की घंटी गरे बाजे, बदरा गरज गरज के गावै,
कौनऊ बारी के बेर झरावे, नौनी-नीकी नींद भगावे।
सुअना टेरे अलख जगावे, कहाँ नींद को ठाँव री!
अरी सो गओ सबरो गाँव री!

मोरे ललना तुमखौ पाई, तुम्हे देख जिये तुम्हरी माई,
पढ़ा-लिखा के ठांडो करिहै, करियो लल्ला खूब कमाई।
भरी दुफैरी हम पा जाई, तुम सी ठंडी छाँव री!
अरी सो गओ सबरो गाँव री!

: दो :

निबुआ महक उठो आजा री!
हरी हरी बिरछा की डारी पे डारो झूला मुनियाँ रानी।
अमरैया पे बैठी गावै न आवै निदिया रानी।
निबुआ महक उठो आजा री, महुआ महक उठो आजा री!
अरी अँखियन में आजा री निदिया अँखियन में आजा री!
हरी हरी···

ऊँघन लगी फसल खेतन की, बगियन की तरकारी,
गैया बच्छा सो गए सबरे, और लरकी लरका री!

कैंथा महक उठो, आजा री, मुनगा महक उठो आजा री!
अरी अँखियन में आजा री निदिया अँखियन में आजा री!
हरी हरी···

भुंसारे पूजेगी पुतरिया अकती की मोरी मुनियाँ,
खाके दार, चना, गुड़ लाडो बन जाएगी गुइयाँ।

सतुआ महक उठो आजा री, गन्ना महक उठो आजा री!
अरी अँखियन में आजा री, निदिया अँखियन में आजा री!
हरी हरी···

दादू मोहल्ला, दादू साहब का बाड़ा,
संजयवार्ड, सिवनी-४८०६६१ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४०७८१४९७५

रचना और आलोचना के रिश्ते

● बी.एल. आच्छा

साहित्य एक व्यापक संज्ञा है और विधाएँ उसकी अभिव्यक्ति का सहज प्रतिबिंबन। विधाओं की विषयगत या भावगत अनुरूपता होती है। मसलन गीत के लिए जो अंतरंग भावसघनता की लय चाहिए, तो कथा-कुल के लिए गद्य का पठार। पर ऐसा भी नहीं कि कविता में लय ही लय होती है और गद्य-कुल की विधाओं में भावसघनता से रिश्ता-नाता न होता हो। आज की कविता में गद्य अभिव्यक्ति ने भी ताल ठोककर पहचान बनाई है और कथा-साहित्य या ललित-निबंधों भी गद्य-गीत की लय संक्रमित हुई है। विधागत संक्रमण तो आज के सृजन की विशिष्टता बन गई है।

यह परिवर्तन जब रचनाओं में घटित होता है, तो आलोचक की दृष्टि इस बदलाव को परखती है। और जब युग-सापेक्ष संवेदन या वैचारिक संबोध में भावांतर आता है तो वह भी पड़ताल का विषय बनता है। तो क्या इस बदलाव को किसी निर्धारित शास्त्र से, विधा के फॉर्मेट से सुनिश्चित मानकों से तौलना या मापना चाहिए? स्पष्ट है कि रचना में बदलाव आया है और वह प्रवाह यदि कंटेंट तथा फॉर्म में भी उभरा है, तो मूल्यांकन के मापदंड स्थायी नहीं हो सकते। रचना का तापमान अलग तरह का है, तो बेरोमीटर भी बदलाव के लिए प्रतिश्रुत है। पर इसका अर्थ यह नहीं कि पुराना शास्त्र खारिज हो जाता है और नए को परखने की दृष्टि ही पुराने शास्त्र के हिसाब से बेमानी हो जाती है। कालिदास जब 'पुराणमित्येव न साधु सर्वम्…' की बात करते हुए नए की प्रतिष्ठा भी करते हैं, तो तय है कि रचनाधर्मिता में बदलाव आया है। फिर तो कसौटी में भी बदलाव आएगा। आखिरकार बासी उत्तरों से भी नए सवाल खड़े होते हैं। और साहित्य तो उस रमणीयता का उपासक रहा है, जो कहता है, 'क्षणे क्षणे यन्नवतामुपैति तदैव रूपं रमणीयतायाः।' कालिदास साहित्य में इसी प्रयोगविज्ञान के उपासक थे और लघुकथा हो, कविता हो या साहित्य की कोई अन्य विधा, ये सभी नवोन्मेषी प्रयोगशीलता की माँग करते हैं। क्योंकि यह युग बहुत गतिशील है, तकनीक और विचार में भी, इसलिए साहित्य में यह गतिशीलता और बदलाव दशक और पंचक में उतर आए हैं।

समीक्षा या आलोचना रचनापेक्षी है। शास्त्र तो एक तरह से नवशिक्षुओं के लिए सधी हुई सीढ़ियाँ हैं। पर वे भी इतनी सुगठित हैं कि न छठी शताब्दी के आचार्य भामह की सर्वथा अनदेखी की जा सकती है, न आचार्य भरत के नाट्य-शास्त्र की। हिंदी में यह बात आचार्य शुक्ल और हजारीप्रसाद द्विवेदी आदि अनेक आलोचकों की परंपरा में पुनराविष्कृत हुई है। वामपंथ में भी और रसवादी आनंद धारणा में भी। पर बदलाव बहुत आए हैं। मार्क्सवाद, फ्रायडवाद, पूँजीवाद, आधुनिकता, उत्तर-आधुनिकता और ग्लोबल से गुजरते हुए। और नई विधाओं के रूपांकन के साथ उनके निरंतर बदलाव में भी। ऐसी किसी फॉर्मेट या चौखट में बँधकर लिखना संभव नहीं है। यों भी साहित्य हर काल में परंपरा का अतिक्रमण करता है। यदि घनानंद लिखते हैं, 'लोग हैं लागि कवित्त बनावत मोहि तो मोरे कवित्त बनावत।' लक्षणों के आधार पर निर्मित काव्य व्यक्तित्व एक बात है और स्वानुभूत प्रयोगविज्ञान से निर्मित व्यक्तित्व नितांत अलहदा। इसीलिए शास्त्र को रचनात्मक व्यक्तित्व के विकास की सीढ़ियाँ कहा गया है, व्यक्तित्व का मूर्ति स्थापन नहीं।

श्रेष्ठ रचनाकार पुरानी मूर्तियों को गला देता है, नए आविष्करण के लिए। इलियट इसे ट्रेडिशन एंड इंडिविजुअल कहते हैं। हम भी जानते हैं कि जब कोई विधा ऑटोमेटिक सी हो जाती है, यहाँ तक कि रचना का इकहरा प्रवाह या वाद भी, तो नएपन के लिए उस पर आघात होता है। नई रचनाधर्मिता अतिक्रमण करती है। छायावाद के पतन का इसे एक बड़ा कारक कहा गया है। पर आलोचक के लिए इन्हीं सोपानों का यानी शास्त्र का ज्ञान जरूरी है और रचनाधर्मिता में आ रहे बदलावों को चीरकर देखने की नई दृष्टि भी। साथ ही इन बदलावों के पैटर्न को समझकर शास्त्रीय दृष्टि को नवनवीन बनाने की। रचना भी बदलती है

सुपरिचित लेखक। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यास, सर्जनात्मक भाषा और आलोचना, 'जल टूटता हुआ की पहचान', 'आस्था के बैंगन', 'पिताजी का डैडी' संस्करण व्यंग्य प्रकाशित। देवराज उपाध्याय आलोचना पुरस्कार, पं. नंददुलारे वाजपेयी आलोचना पुरस्कार, समीक्षा सम्मान, भाषा भूषण सम्मान इत्यादि प्राप्त।

और शास्त्र भी बदलता है। रचना को समझने के लिए शास्त्र भी जरूरी है और रचना के बदलाव को समझने के लिए लोचदार शास्त्रीय दृष्टि की भी।

रचना का अस्तित्व भाषा की सत्ता में होता है। भाव-संवेदन की दृष्टि से और बनावट की दृष्टि से भी। रचनाकार भाषा की अनेक कोटियों का संदर्भित विषय के अनुसार चयन करता है और यह संगठित रूपांकन ही रचना के भीतर उसकी अंतर्वस्तु तक ले जाता है। अलबत्ता संस्कृत काव्यशास्त्र में भाषा को आधारभूत मानते हुए भी रस और ध्वनि की वकालत की है। आत्मवादी तथा देहवादी संप्रदायों के तात्त्विक भेद से अलगाए रखा है। पर रचना की अखंड सत्ता कथ्य और रूप के अद्वैत में है। इसीलिए भाषा में बसी अंतर्वस्तु तक भाषा के सिंहद्वार से ही जाया जा सकता है। समूची रचना एक महावाक्य है और त्वचा को फोड़कर निकलने वाला शक्तिमान चूजा या ध्वन्यार्थ उसी संरचना से फूटता है। रचना की बनावट और बुनावट के भीतर जो ध्वनि है, संदेश है, संवेदना है, वह भाषा की ही अंतर्जात है। उसका मीनिंग एरिया बहुत दूर-दूरतर हो सकता है, शब्दों के कोशीय या लाक्षणिक अर्थों को छिटकाकर हो सकता है, पर वह फूटता तो रचनात्मक भाषा से ही है।

नंददुलारे वाजपेयी छायावाद की शक्तिमानता उसकी सांस्कृतिक ऊर्जा में पहचानते हैं। यही नई दृष्टि प्रेमचंद को प्रगतिशीलता से जोड़ती है। इसीलिए तो हिंदी आलोचना संस्कृत की तत्त्ववादी विश्लेषणा से अलग वैचारिक अभिमुखीकरण से न केवल आधुनिक बनती है बल्कि पश्चिम के मनोविश्लेषण, न्यू क्रिटिसिज्म, मिथकीय आलोचना, शैलीविज्ञान से जोड़ती है। भाषिक तौर पर नवप्रवृत्तियों को पुराने में योजक बनाकर शास्त्र को भी नवनवीन बनाती रहती है। तात्पर्य यही कि शास्त्र और विचारधाराएँ, युगीन परिप्रेक्ष्य और प्रयोगविज्ञान के शैलीगत नवाचार समीक्षक के अंतरंग पार्श्व में सक्रिय रहते हैं। पर वे रचना के संवेदनात्मक प्रवाह में बाधक नहीं बल्कि संप्रेषणीयता के सतर्क साधक या प्रश्नशील संवेदी के रूप में बने रहते हैं।

पुन: शास्त्र पर लौटना चाहूँगा। समीक्षा के दौरान रचना जितना प्रभाव छोड़ती है, उतना ही समीक्षा शास्त्र या आलोचना के मापदंड बिन कहे सहयात्री हो जाते हैं। इसका तात्पर्य यह नहीं कि वे उन्हीं शास्त्रीय पायदानों से गुजरकर सफल होते हैं, बल्कि रचना में नए बदलाव दिखते हैं तो पुराने हूक नहीं मचाते, बल्कि बदलाव को रेखांकित करते हैं। उस बदलाव से रचना में आए नए आस्वाद को तौलते हैं और यदि वह युगीन या व्यक्ति वैशिष्ट्य से अनुप्राणित हैं तो शास्त्र को भी परिमार्जित या संशोधित करते हैं। यह रचना की ताकत है। इसीलिए तो रामचरितमानस आचार्य शुक्ल को लोकमंगलवादी उन्मेष देती है और उनकी समीक्षा दृष्टि का आधार बन जाती है। वे संचारी भावों में नए संचारियों को जोड़ते हैं। छायावाद की लाक्षणिक शैली को रेखांकित करते हैं। नंददुलारे वाजपेयी छायावाद की शक्तिमानता उसकी सांस्कृतिक ऊर्जा में पहचानते हैं। यही नई दृष्टि प्रेमचंद को प्रगतिशीलता से जोड़ती है। इसीलिए तो हिंदी आलोचना संस्कृत की तत्त्ववादी विश्लेषणा से अलग वैचारिक अभिमुखीकरण से न केवल आधुनिक बनती है बल्कि पश्चिम के मनोविश्लेषण, न्यू क्रिटिसिज्म, मिथकीय आलोचना, शैलीविज्ञान से जोड़ती है। भाषिक तौर पर नवप्रवृत्तियों को पुराने में योजक बनाकर शास्त्र को भी नवनवीन बनाती रहती है। तात्पर्य यही कि शास्त्र और विचारधाराएँ, युगीन परिप्रेक्ष्य और प्रयोगविज्ञान के शैलीगत नवाचार समीक्षक के अंतरंग पार्श्व में सक्रिय रहते हैं। पर वे रचना के संवेदनात्मक प्रवाह में बाधक नहीं बल्कि संप्रेषणीयता के सतर्क साधक या प्रश्नशील संवेदी के रूप में बने रहते हैं।

अब सभी विधाओं की अपनी विशिष्टताएँ हैं और साहित्य-मनीषी किसी एक विधा का ही पारखी बनकर नहीं रह जाता। यों भी कलाएँ अंतर-अनुशासी होती हैं। संवेदन भी अनेक ज्ञानधाराओं से अंतर्भूत होता है। और प्रयोगशील रचनाकार समय के संवेदन से अपने भीतर के साहित्यिक तर्क को जितना पुष्ट करता है, उतना ही अभिव्यक्ति के नए शिल्पों की तलाश करता है। और करते करते अन्य विधाओं की विशेषताओं से अपने रचनाविन्यास या विधाविन्यास को नया रूप देने के नएपन तक जाता है। तो विधाओं में अंत:संक्रमण से विधाओं में जो विशिष्टता आती है, उसे भी पहचानना ही होगा। मसलन लघुकथा का उपदेशात्मक या बोधात्मक रूप अपने नरेटिव में ही होता था, कथाकथन की पद्धति में। जब उसे नाट्य और विज्युअल से रचा गया तो शिल्प के साथ संवेदन की प्रेषणीयता का नया प्रतिमान बना। लघु कथा जीवंत हो गई। अभिनय के योग्य भी। अब तो विज्युअल माध्यमों में भी प्रभावी। इसलिए रचना को शास्त्र के अनुरूप तौलने के बजाय रचना को चीरकर नए शिल्प संवेदन की पड़ताल करते हुए शास्त्र को भी, नजरिए को भी संशोधित और नवनवीन बनाना होगा। पढ़ते समय रचना कहाँ-कहाँ झटका देती है, कहाँ-कहाँ शब्द अलग ही अर्थ ध्वनित करते हैं, कहाँ मोड़ और यति-गति चौंकाकर नए अर्थ तक ले जाती है। एक संवेदनशील सहयात्री और अर्थविज्ञानी के तौर पर आलोचक हर घुमाव और बदलाव को पकड़ता है। वह जितना सहृदय है, उतना ही तत्त्वान्वेषी भी। इसीलिए अवधानतापूर्वक पाठ को भारतीय काव्यशास्त्र में केंद्रीय माना गया है और कविता के नए प्रतिमान में डॉ.नामवर सिंह ने इसे कसौटी बनाया है।

साअ

३६, क्लीमेंट्स रोड
सरवना स्टोर्स के पीछे, पुरुषवाकम्
चेन्नई-६०००० ७ (तमिलनाडु)
दूरभाष : ०९४२५०८३३३५

चलें गाँव की ओर

• एम.डी. मिश्रा 'आनंद'

'बावन पत्ते ताश, करते धन की नाश।'

जिस दीवाल पर यह लिखा था, उसी के नीचे प्रतिदिन चार-छह लोग ताश खेलते थे। रामधन ने उन्हें टोका—हमारी बैठक सभी के लिए खुली है, लेकिन कोई गलत काम यहाँ नहीं होना चाहिए। इसलिए तो मैंने दीवाल पर यह लिख दिया है, किंतु आप लोग मानते ही नहीं हो। गपोड़ी ने दाँत निपोरते हुए कहा कि देख छकोड़ी, हम लोग यहाँ कोई जुआ तो खेल नहीं रहे हैं। बस फालतू समय काटने के लिए हाथ आजमा लेते हैं। दीवाल पर लिखी बात का तो ऐसा है कि जहाँ लिखा रहता है कि यहाँ थूकना मना है, तो लोग उसी जगह कोने में थूकते हैं। इतना कहकर वह उठ खड़ा हुआ और बाहर चला गया। देखो, मैं तो गुटका-तंबाखू बाहर जाकर थूकता हूँ। रामधन ने कहा कि लोग मुझे वैसे ही बदनाम करते हैं कि मैं अपनी बैठक में जुआ कराता हूँ।

छकोड़ी ने कहा, कक्कू! हम लोगों के पास फसल बोउनी और कटनी के अतिरिक्त कोई दूसरा काम नहीं है, तो चार लोग ताश खेलकर समय बिताते हैं। जो लोग फालतू बैठते हैं, उनके समाचार तो पता लग ही गए होंगे। कल लटकन ने दमरू की पिटाई कर दी। रिपोर्ट हो गई और लटकन को पुलिस पकड़कर ले गई। अब हाथ-पाँव की मालिश हुई जात है। जो कुछ मेहनत-मजदूरी करके बाहर से कमाकर लाया था, वह भी ठिकाने लग जाएगा। यह कोई नई घटना नहीं है, यह तो पुरानी दुश्मनी है। जिसकी वजह से लटकन उसके पीछे पड़ा रहता है। मुख्य बात तो यह है कि लटकन के पिता से ग्राम के सरपंच खलकसिंह का जो मुकदमा अदालत में चल रहा था, उसमें दमरू ने खलकसिंह के पक्ष में गवाही दी थी और वह मुकदमा जीत गए थे। इससे ढाई बीघा जमीन चली गई थी। रामधन ने कहा कि लटकन के पिता मुकदमा जीत भी जाते तो क्या भूमि पर कब्जा कर पाते। अरे, मुकदमे तो चलते हैं। फैसला सुनाते हैं। किंतु स्थल पर तो पक्षकारों को ही निपटना पड़ता है। आज भी हालत जस-की-तस बनी है। 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' यह बात तो सही है। जमीन-जायदाद के मुकदमे तो अदालतों में झूले की पलकियों की तरह ऊपर-नीचे होते रहते हैं। अब यही देख लो, सब गाँव

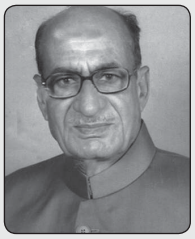

जाने-माने कथाकार। प्रमुख कृतियाँ हैं—'मोक्ष की राह', 'मैं कौन हूँ', 'पंख' (काव्य-संग्रह), 'इंद्रधनुष से रंग जीवन के संग' (कहानी-संग्रह)। आकाशवाणी छतरपुर से काव्यधारा तथा सब टीवी पर कार्यक्रमों का प्रसारण। म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति भोपाल एवं साहित्य मंडल, नाथद्वारा सहित छोटे-बड़े दर्जनभर सम्मान प्राप्त।

वासियों को पता है कि जमीन लटकन के पुरखों की है, किंतु जिंदगी भर लड़ते-झगड़ते वह राम को प्यारा हो गया है। लटकन का लड़का क्या खलकसिंह से जमीन वापस ले पाया है। मतलब नहीं ले पाया। लटकन ने कहा कि वह सरपंच का चुनाव जीत गया। उसने लोगों को शराब पिलाई, मुरगे खिलाए तो जीत गया। अब अपना घर बना रहा, रुपया कमा रहा, गाँववालों की भलाई के क्या काम किए हैं। और जो काम कराए गए हैं, सब टूट-फूट रहे हैं। कुछ रास्ते पक्के कराए हैं। हैंडपंप लगवाए हैं। उनमें आधे से ज्यादा रकम स्वयं गटक गया है। ग्राम में शौचालय बनवाए, उनमें एक भी उपयोग नहीं हो रहा है। लोगों ने उनके अंदर लकड़ी-कंडे भर लिये हैं। दिल्ले मुखिया ने कहा कि गाँव में एक मुखिया होता था। भइया अब तो घर-घर में मुखिया हो रहे हैं। जब से ये पंचायतें बनी हैं, तो वोट की वजह से गाँव-गाँव में दुश्मनी बढ़ रही है।

गाँवों में जो भाईचारा था, पंचायत चुनाव में वोट के कारण अब समाप्त हो गया है, दुश्मनी में बदल गया है। रामधन ने कहा, मुखिया ये सब पुरानी बातें हैं। अब तो पूरे देश में चुनाव से ही सरकार बनती है। चुनाव होना अच्छी बात है। हम लोगों के वोट से सरपंच और प्रधानमंत्री बनते हैं। दलित बस्ती में साफ-सफाई, लाइट की व्यवस्था कराई जा रही थी। गाँव के सभी लोगों को शाम के समय चौपाल पर बुलाया गया। जिसमें ग्राम के सरपंच और राजनीतिक कार्यकर्ता शामिल थे तथा जिला कलेक्टर भी आए। सभी को यह बताया गया कि आप लोगों के साथ आपके घर मंत्रीजी भोजन करेंगे। सभी को बड़ी प्रसन्नता हुई। कलेक्टर साहब ने कहा कि यहाँ जो सबसे बुजुर्ग हों, उनसे बात करनी है। दिल्ले मुखिया को बुलाया गया और कलेक्टर ने गाँव और समाज के संबंध

में देर तक बात की। अधिकारियों के जाने के पश्चात् लोगों ने दिल्ले मुखिया से पूछा कि क्या बात हुई कलेक्टर साहब से ? तो दिल्ले मुखिया चुप रहे। एक शब्द भी नहीं बोले।

उन्होंने अपने घर पहुँचकर परिवारवालों से भी कोई बात नहीं की। किसी बात का जबाव नहीं दिया, तो घरवाले परेशान हो गए। प्रात: यह बात अपने पड़ोसियों को बताई। सभी ने अस्पताल चलकर डॉक्टर को दिखाने की सलाह दी। सुबह मुखियाजी दरवाजे के अपने चबूतरे पर आकर चुपचाप बैठ गए। अस्पताल ले जाने की तैयारी देखकर इशारा किया तो घर-मोहल्ले के लोगों ने कहा कि आप बोल नहीं पा रहे हैं तो डॉक्टर को दिखाने के लिए जा रहे हैं। यह सुनकर मुखियाजी बोल पड़े, हमें कोई बीमारी नहीं है। एक ने कहा, आप कल से चुप हैं। किसी से बोल नहीं रहे हैं। मुखिया बोले—अरे, जिस मुँह कलेक्टर से बात की है। अब क्या बात करने लायक है इनमें कोई ? छकोड़ी ने गपोड़ी की पीठ पर थाप लगाई और ठहाका मारकर हँसने लगा। रामधन ने कहा कि मुखियाजी, अब आपके लड़का, नाती तथा ग्राम का कोई भी पढ़-लिखकर कलेक्टर बन सकता है। इसी से सब छोटे-बड़े बराबर हो रहे हैं। ऊँच-नीच का भेदभाव मिट रहा है। यहाँ कल अच्छे-अच्छे तिलक और जनेऊधारी दमरू और लटकन के साथ बैठकर भोजन करेंगे। गपोड़ी बोला, और उनसे यह भी पूछ लियो कि अपने चौका में शादी-विवाह में हम सभी को साथ बैठ के भोजन करावेंगे ?

रामधन गाँव के सभी लोगों के साथ उठना-बैठना बढ़ा रहे थे। क्योंकि अगले सरपंची के चुनाव में खलकसिंह को पटकनी देनी है। इस बात की भनक खलकसिंह को हो चुकी थी। जिस सीढ़ी से रामधन ऊपर चढ़ने के सपने सँजो रहे, उसको ही तोड़ दिया जावे। इस प्रकार सोचकर उन्होंने पुलिस स्टेशन जाकर थानेदार से मुलाकात की और उसके सामने बीस हजार की गड्डी पटक दी। कहा, देखो साहब, दस हजार आप लोगों का पारिश्रमिक और दस हजार जप्ती के लिए। अगले दिन ही ताश के फड़ पर छापा पड़ गया और रामधन समेत चारों जुआरी पकड़े गए।

ग्राम की दलित बस्ती में जीप सनसनाती आई और कैमरा तथा माइक लिये चार-पाँच लोग उतरकर लोगों से पूछने लगे कि गत दिवस जो भोजन बनाया गया, कहाँ तैयार किया गया था ? क्या दमरू के घर पर बनाया गया ? लोगों ने सब सच-सच बता दिया कि भोजन बनानेवाले बाहर से आए थे और सरपंच ने एक कमरा साफ-स्वच्छ करा दिया। वहीं तैयार किया गया। दलित परिवार से दो-चार लोग और महरिया ने नहा-धोकर भोजन परोसने में सहयोग किया। सारा कच्चा चिट्ठा पत्रकारों को बता दिया। जो अगले दिन अखबारों में सभी ने पढ़ना था।

अदालत से छूटकर चार लोगों ने साथ बैठ यह निश्चय किया कि क्षेत्र में सूखा पड़ा है। अपना गाँव भी उसकी चपेट में है। खाने-पीने का खर्चा नहीं चल रहा है। सरपंच और रामधन की लड़ाई में हम लोग पिसे जा रहे हैं। इसलिए कुछ समय के लिए किसी बड़े शहर में मजदूरी करने के लिए चला जावे।

घंसू के पिता विगत दो वर्षों से फसलों में घाटा खा रहे थे। विद्युत् विभाग का कर्मचारी सिंचाई के पंप का बिल लेकर आ गया और उसकी पावती के हस्ताक्षर कराकर बिल दे दिया। वह थोड़े पढ़े-लिखे थे। जब बिल की रकम देखी तो चालीस हजार थी। हम तो सिंगल फेज का पंप चलाकर फसलों की सिंचाई करते रहे और यह पाँच हॉर्स पंप का सिंचाई बिल दे दिया है। यह एक सप्ताह में जमा करना पड़ेगा। उसने बिल की राशि फिर गौर से देखी और अपने आप कहा कि चालीस हजार जमा करना है। उसको चक्कर आया। वह धड़ाम से जमीन पर गिर गया। लोग दौड़े, हाथ लगाया, किंतु उसके प्राण-पखेरू उड़ गए।

गाँव से लोग एकत्र हो गए और कहने लगे कि घंसू का पिता इतना भारी बिजली बिल देख घबरा गया और उसका हार्ट फेल हो गया। प्रशासनिक अधिकारी स्थल पर पहुँच गए थे। खलकसिंह की दुश्मनी पहले से थी ही। उनसे खबर फैलाई कि घंसू के पिता को पहले हृदय की बीमारी थी, उसी से मृत्यु हो गई है। यह शासन से लाभ लेने की चाल चली है। पिता की मौत के पश्चात् सिंचाई बिल उसके हाथ में पकड़ा दिया और शोर मचा दिया है। इतना कहकर उसकी मृत्यु को विवादित बना दिया। जिसकी जाँच-पड़ताल प्रारंभ हो गई। पिता की मृत्यु के पश्चात् दु:खी घंसू ने तो नगड़दम्म चलने की तैयारी कर ली और बाकी लोगो में छकोड़ी ने अपनी पत्नी इमली को साथ लिया। गपोड़ी की पत्नी छबीली भी साथ चल रही थी।

□

मजदूरों के डेरों के साथ ठेकेदार ने रहने की व्यवस्था कर दी थी। घंसू और लटकन एक खोली में तथा गपोड़ी और छकोड़ी को अलग झोंपड़ी में रख दिया। सभी काम पर जाने लगे। कुछ समय तो ठीक चला किंतु गपोड़ी बीमार पड़ गया। अस्पताल में जाँच कराई तो डॉक्टर ने बताया कि गुटका-तंबाखू खाने से मुँह में कैंसर की बीमारी हो गई है। उसका इलाज चलने लगा। अब उसकी पत्नी छबीली के सामने विकट समस्या खड़ी हो गई। मेहनत तो वह खूब करती थी, किंतु खर्चा पूरा नहीं पड़ता। उसको ईश्वर ने रंग-रूप भी अच्छा दिया था। ठेकेदार को उसकी परेशानी का पता था, जिसका लाभ उठाने के लिए उसने एक दिन डेरे पर आकर सभी साथियों के सामने कहा कि गपोड़ी का इलाज हमारे सेठ गुलाब भाई कराने के लिए सहमत हो गए हैं। सभी लोगों ने सेठ को धन्यवाद दिया और गपोड़ी का इलाज अच्छे अस्पताल में होने लगा था। साथ ही बीमारी की हालत में वह काम पर तो नहीं जा पाता

था, तो भी उसकी हाजरी लगाई जाती थी।

कुछ समय के बाद ठेकेदार का अदमी आया। उसने कहा कि सेठ के बँगले पर काम के लिए एक महिला की आवश्यकता है, इसलिए छबीली को बुलाया है। छकोड़ी ने कहा कि सेठ से कह देना कि हम गरीब लोग शहरों में मजदूरी करने आते हैं, हमारी महरिया किसी के घर जाकर के काम नहीं करेगी। उसने कहा—अरे भइया, सेठ बहुत भला मानुष है। कोई बात नहीं है। घरुकाम थोड़ा-बहुत कर दिया करेगी। छबीली की हाजरी पूरे दिन की लग जाएगी। इतना कहकर ठेकेदार का आदमी चला गया।

लटकन ने घंसू से कहा कि छबीली भाभी चटक-मटक से रहत है। लगता है कि सेठ की नजर पड़ गई। घंसू बोला कि जब सुंदर शरीर ईश्वर ने दिया है तो क्या वह शरीर पर मिट्टी लिपटा ले। मजदूरी के काम में तो आधी सनी रहती है देह माटी में, फिर भी अच्छी लगती है। अब बता उस बेचारी का क्या कुसूर है। रामधन ने छकोड़ी से फोन करके बताया कि उनके बगल में चिपले का मकान है, उन्हीं के सामने पानी का निकास आ रहा है। चिपले ने उसमें माटी-पत्थर डालकर अवरोध कर दिया था कि गंदा पानी यहाँ से नहीं निकलने देंगे, तो इसी बात पर बात बढ़ गई औरतें बाहर निकल पड़ीं और आपस में झबड़ गईं, मारपीट हो गई। गाँव के पंच भी बुलाए, पंचायत बैठी, लेकिन अब गाँव में पंच गाँव की बात नहीं बल्कि मुँहदेखी बात करते हैं। थाने में रिपोर्ट हो गई है, केस चालू हो गए हैं। यह सब खलकसिंह ने ही करवाया है। पिछले आठ दिनों से चिपले का आना-जाना चल रहा था। उसी ने चिपले को भड़काया है। वह जानता है कि हरेक व्यक्ति का पड़ोसी अधिकांश एक-दूसरे के विरोधी ही होता है।

छबीली गुलाब सेठ के बँगले पर घरु कार्य झाड़ू-पोंछा, साफ-सफाई का काम करने लगी। उसका काम देखकर उसे खाना बनाने का काम भी दे दिया गया था। गपोड़ी का इलाज चल रहा, बीमारी में सुधार हो रहा था, डॉक्टरों ने उसके मुँह के जबड़े का ऑपरेशन बताया और जिसके लिए डेढ़ लाख की गुलाब ने व्यवस्था कर दी थी। उसका ऑपरेशन सफल हो गया था, किंतु उसके चेहरे का रूप, उसकी आकृति बदल गई। छबीली देखकर डर गई, चेहरा डरावना लग रहा था। लेकिन ईश्वर को धन्यवाद दिया कि इतनी कठिन बीमारी से जीवित बच गया है। गपोड़ी के सभी संगी-साथी कह रहे थे कि दिन-रात मुँह में गुटका-तंबाखू भरे रहता था, सभी लोग समझाते थे, उसने नहीं मानी। उसी का यह परिणाम भोग रहा है।

जिस जगह पर लोग ईंट-गारा का काम करते थे। उसी निर्माणाधीन बिल्डिंग के समीप कपड़ों का एक सिलाई केंद्र था। इमली ने जाकर पता लगाया कि महिलाओं का सिलाई-कढ़ाई केंद्र किसी एन.जी.ओ. के माध्यम से संचालित है। चूँकि इमली पढ़ी-लिखी थी और सिलाई भी जानती थी, इसलिए उसको काम मिल गया और अब दोनों लोग ईंट-गारा का काम छोड़कर उस संस्था में जुड़ गए थे। छकोड़ी सिले वस्त्र ले जाने और कच्चा माल लाने के काम में लग गया था।

गुलाब सेठ का बड़ा करोबार था। उनके एक बेटा, जिसकी उम्र १६-१७ वर्ष रही होगी और उससे छोटी एक पुत्री थी। पत्नी का नाम शांति बाई, जो नाम के अनुरूप ही शांत स्वभाव की, दयावान, धार्मिक महिला थी। छबीली इस परिवार में घुल-मिल गई। बच्चों को स्नेह देती। शांतिबाई की सेवा और घर-गृहस्थी के सारे कार्य करती थी। उसे बँगले के आउट हाउस में रहने को स्थान मिल गया तथा गपोड़ी को चौकीदार के काम पर लगा दिया गया। बेटा-बेटी दोनों छबीली से आंटी कहते और शांति बड़े स्नेह से नाम लेकर पुकारती। घर में जो भोजन बनता था, साग-सब्जी, रोटी-अचार छबीली को मिलता। कुछ घर पर तैयार कर लेती और बाकी उसी से खाने-पीने का काम चलता। सेठ को घर पर रहने का समय नहीं था। छबीली ने सोचा कि कहाँ हम मजदूरी करके पेट पालने आए थे। इस ठिकाने से वह प्रसन्न थी।

□

लटकन के गाँववाले के बंद मकान में किसी ने आग लगा दी, जो जलकर राख हो गया। ऐसी सूचना फोन से रामधन ने उसको सुनाई तो वह घबरा गया कि घर-गृहस्थी का सामान और सिर छुपाने का आशियाना भी नष्ट हो गया। उसने शाम को शराब की दुकान पर जाकर शराब पी और एक बोतल साथ रख ली। झूमता हुआ वह देर रात अपनी झोंपड़ी पर आया। वहाँ पर घंसू बाहर बैठा उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। उसने देखा कि आज तो इसने बहुत पी ली है। शायद कहीं से इसे अधिक कमाई या मजदूरी मिल गई है। उसने झिड़कते हुए कहा कि तू अभी तक कहाँ था। मुझे तेरी चिंता हो रही थी। चल आकर खाना खा ले। मैंने भी नहीं खाया है। लटकन ने कहा—देख भाई, तू खाना खा ले, मुझे नहीं खाना है। तुझे पता है, उस खलकसिंह ने चुनावी रंजिश से मेरे घर में आग लगवा दी। सबकुछ जलकर भस्म हो गया है। अब तो मैं कल गाँव जाकर उसे जान से मार दूँगा। छोड़ूँगा नहीं। उसने मेरी जमीन छीन ली। मेरे पिता की मृत्यु हो गई। भरा घर जला दिया।

शांति के बड़े भाई की लड़की की शादी थी। जिससे बहिन को लिवाने के लिए भाई आया था और बहिन, भानजे-भानजी को लिवा ले गया। गुलाब ने दो-तीन दिन के बाद शादी में शामिल होने की बात कहकर उन सभी को विदा कर दिया था। छबीली ने समय से भोजन तैयार कर लिया और सेठ के आने का इंतजार करने लगी। वह विलंब से आए। आकर भोजन किया। छबीली सब काम निपटाकर जाने लगी तो सेठ ने उसे रोक लिया और कहा कि तू भी यहीं खाना खा ले, फिर चली जाना। उसने कहा कि नहीं, वह भी भूखे होंगे। मैं खाना ले जाती हूँ। गुलाब ने कहा, जाकर मेरे बेडरूम में बिस्तर ठीक कर दे। वह बेडरूम में गई, पीछे से गुलाब सेठ आया, उसने छबीली को बाँहों में भर लिया और बोला, तेरे लिए इतना रुपया खर्चा किया है। आज तो वसूल करूँगा, तू इतनी सुंदर जो है और झटके के साथ उसे पलंग पर पटक दिया।

छबीली ने तो कभी ऐसा सोचा भी नहीं था। उसकी समझ में

कुछ नहीं आ रहा था। वह घबरा गई, सेठ की पकड़ मजबूत होती गई। उसने वह सब किया, जो उसकी इच्छा थी। यह सब हो जाने के पश्चात् छबीली ने अपने को सँभाला। बंद दरवाजे पर जोर का धक्का मारा और बाहर निकल गई।

गुलाब सेठ घबरा गया। उसने सोचा, यह तो बहुत गलत हो गया। उसकी हवस पूरी हो गई थी। अब मान-सम्मान, प्रतिष्ठा और अपनी बरबादी का दृश्य आँखों के सामने घूमने लगा। छबीली को जैसा सोचा था, वह वैसी नहीं है, आवेश में यह क्या हो गया। वह घबराने लगा, छबीली अगर पुलिस में रिपोर्ट लिखा देगी तो जेल हो जाएगी। वह वहीं पलंग पर बैठ गया। उसका सिर चक्कर खाने लगा कि वह कहाँ गई है? उसने बगल में चारों ओर घूमकर देखा, फिर उसके कमरे पर तलाश किया, वहाँ भी नहीं थी। वह अपने कमरे में बंद हो गया, केवल पीछे का दरवाजा खुला रख लिया कि अगर पुलिस पकड़ने आएगी तो पीछे से निकलकर भला जाऊँगा। उसे रातभर नींद नहीं आई। जरा सी आहट से चौंक जाता कि पुलिस आ गई। पूरी रात्रि बेचैनी में बीत गई थी।

छबीली भागती हुई इमली के पास पहुँच गई और पूरी घटना उसको सुनाई। तब उसने कहा, चल थाने में रिपोर्ट करते हैं। छबीली ने कहा, दीदी, मैं सोच रही हूँ कि शांति देवी ने मुझे बहुत प्यार दिया है। उनके दोनों बच्चे भी बहुत चाहते हैं। सेठ को पुलिस पकड़कर ले जाएगी। उसको जेल हो जाएगी तो उसका परिवार समाज में मुँह दिखाने लायक नहीं रहेगा। दोनों बच्चे समझदार हैं, क्या सोचेंगे? मेरा मन कहता है, सेठ के किए कर्मों की सजा उसके परिवार के लोग क्यों भोगें? इमली ने कहा, यह बात तो तेरी सही है। सेठ ने देवरजी के इलाज में भी बहुत रुपया लगाया था। दीदी, मुझे क्या पता था कि ऐसा गलत विचार करके इलाज में रुपया लगा रहा है। उसने कहा, यह पैसेवाले लोग ऐसे ही होते हैं। सोचते हैं कि रुपया-पैसा से सब खरीदा जा सकता है। छबीली ने कहा, दीदी ऐसा रुपया मेरे लिए धूल जैसा है। भले ही हम लोग गरीब हैं, लेकिन अपनी इज्जत और ईमान नहीं बेच सकते। भले ही भूखे मर जाएँ। लेकिन उसके परिवार वालों को दया आती है। ऐसा सोच-विचार कर पुलिस में रिपोर्ट नहीं लिखाई।

दूसरे दिवस प्रातः नौ बजे होंगे, किसी ने दरवाजा खटखटाया। सेठ गुलाब ने धीरे से खोला, सामने छबीली खड़ी थी। उसने स्वयं के दोनों कान पकड़कर माफी माँगी और कहा, मुझसे भूल हो गई। और एक थैला भरा हुआ उसके हाथ में पकड़ा दिया। छबीली ने थैले का मुँह खोला। उसमें पाँच सौ के दो हजार के नोटों की गड्डियाँ थीं। उसने नोटों की गिड्डियाँ गुलाब के ऊपर फेंक दीं और कहा कि हम लोग गरीब हैं, लेकिन अपना शरीर बेचकर नहीं खाते, अपनी मेहनत की रोटी खाते हैं। लेकिन तुमने हमारे आदमी का इलाज कराया। आपकी पत्नी और बच्चे हैं। मैं उनका जीवन बरबाद नहीं करना चाहती हूँ। तुम्हें तो बुरे कर्मों का फल मिलेगा।

□

क्रोध की अग्नि में धधकता लटकन घंसू को साथ लेकर गाँव पहुँच गया। मकान की दुर्दशा देखी और चिल्लाया—आज मैं खलकसिंह और दमरू को जिंदा नहीं छोड़ूँगा। मेरी घर-गृहस्थी सब नष्ट हो गई है। इससे अच्छा तो जेल ही काटूँगा। उसकी लाल-लाल आँखें अंगारे सी धधक रही थीं। वह अपने ही दरवाजे पर सिर पकड़कर बैठ गया। पुरा-पड़ोस के लोग एकत्र हो गए। रायधन आ गए। सभी ने समझाया, धीरज बँधाया और आपसी सहयोग से मकान में सुधार करने की व्यवस्था कर दी थी।

रामधन ने लटकन को समझाया कि तू अकेला रह गया है। अब कहीं और घर बसाने की व्यवस्था कर ले। लटकन ने कहा, काका वहीं पास के डेरे में एक औरत है। उसका पति गत वर्ष एक ऊँची बिल्डिंग में काम कर रहा था। वहाँ से नीचे गिरकर उसकी मृत्यु हो गई। एक बच्चा और बच्ची है। वह महरिया साथ आने को सहमत है। किंतु जात-बिरादरी के डर से मैंने बात पक्की नहीं की है। रामधन ने कहा कि यह सब मेरे ऊपर छोड़ दे।

रामधन ने कहा—ठक्कू, अपनी जवान बेटी को साथ लेकर मजदूरी करने गया था। आज चार-पाँच माह हो गए। सबसे कहता है कि वहीं डेरा में पड़ोस के ग्राम का एक अच्छा लड़का देखकर शादी कर ली। बेटी तो वापस आज तक नहीं लौटी है। सुना था कि वह तो किसी गैर-बिरादिरी के साथ भाग गई। क्या उसको जाति-बिरादिरी से बाहर किया गया है? घंसू बोला—गपोड़ी की महरिया एक सेठ की रखैल बनकर रहने लगी। गपोड़ी तो बीमार रहता है। अब छबीली गाँव लौटनेवाली नहीं है। लटकन ने कहा कि जो लोग गाँव से मजदूरी करने शहर जाते हैं। वहाँ पर न कोई किसी का रिश्ता है, न इज्जत। वे पशुओं की तरह व्यवहार करते हैं और बहू-बेटियों की इज्जत लूटते हैं। बेचारे गरीब मजदूर कर भी क्या सकते हैं। अरे, सब पेट की खातिर सह रहे हैं।

किसी ने कहा कि 'भरा हो पेट तो संसार जगमगाता है। खाली हो पेट तो ईमान डगमगाता है।' आसमान में काले मेघ छा गए। उमड़-घुमड़ करके बादल अठखेलियाँ करने लगे थे। बरसात प्रारंभ हो गई। धरती की तपन शांत होने लगी और कृषकों को अपनी खेती की याद सताने लगी। आसपास गाँव से जो मजदूरों की टोलियाँ मजदूरी करने शहर आई थीं, वे वापस होने लगीं। छकोड़ी और गपोड़ी ने अपने छोटे-मोटे सामान को समेटा और वापस की तैयारी में लग गया।

□

शांतिबाई अपने बच्चों के साथ शादी-विवाह का निमंत्रण कर

वापस आ गई थी। उसने छबीली को बहुत समझाया कि वह गाँव नहीं जाए। छबीली ने आपबीती नहीं सुनाई। कोई शिकायत नहीं की। घर पर कृषि कार्य की बात कहकर गपोड़ी को साथ लेकर छकोड़ी इमली के साथ अपने घर-गाँव वापस आ गए।

कृषि कार्य प्रारंभ हो गया। घरों के छान-छप्पर भी सुधार किया। सभी लोग अपने कार्यों में व्यस्त हो गए। इस प्रकार से समय बीत रहा था कि छबीली ने इमली से कहा कि दीदी महीना चढ़ गया है। यह गर्भ उसी नाशपीटे सेठ का है। इमली ने कहा, तू क्यों चिंता करती है। कहने-सुनने को तुम्हारा पति गपोड़ी लाला है। कोई उँगली नहीं उठा सकता है। यह तो दीदी सही है। मैं नाजायज औलाद नहीं रखना चाहती हूँ। देख छबीली, चुपचाप रह, बात को नहीं बढ़ाना है। किसी से इस संबंध में कुछ मत कहना। 'न ऊमर फोड़ो न पंखी उड़ाव।'

बरसात का समय व्यतीत हो गया था। अब गाँव में पंचायतों के चुनाव की चर्चाएँ होने लगी थीं। रामधन और उसके साथी खलकसिंह को पटकनी देना चाहते थे। लटकन ने कहा—कक्कू, खलकसिंह ने बहुत अत्याचार किए हैं। अब इस बार आपको ही सरपंच बनाएँगे। यही चर्चाएँ हो रही थीं कि अगले दिवस चुनाव की विधिवत् घोषणा राज्य सरकार ने कर दी। इस ग्राम पंचायत को दलित वर्ग की महिला के लिए आरक्षित कर दिया गया था। संपूर्ण चुनाव का स्वरूप ही बदल गया। पानी फिर गया खलकसिंह और रामधन की इच्छाओं पर। चुनाव प्रक्रिया प्रारंभ हो गई थी। पंचायत क्षेत्र से कुछ महिलाओं ने नामांकन के फार्म भर दिए, जिसमें इमली भी उम्मीदवार थी।

पंचायत क्षेत्र के बहुत से लोग शहर में मजदूरी कर रहे थे, जिसके लिए इमली और छबीली ने विचार बनाया कि शहर जाकर अपने वोटरों को वोट डालने के लिए बुलाया जाए। शहर जाकर उनसे कहेंगे कि अब तुम लोगों को यहीं काम मिलेगा। इमली सरपंच बन गई तो मजदूरी के लिए शहर नहीं जाना पड़ेगा। इस प्रकार विचार बनाकर और छकोड़ी को साथ लेकर शहर चले गए।

सेठ गुलाब प्रात: के समय अपने बँगले के लॉन में गुनगुनी धूप का आनंद ले रहे थे। सामने फाटक के अंदर छबीली को आते देख पसीना-पसीना हो गए। साहस जुटाकर बोला—आओ छबीली, बहुत दिन बाद याद किया। छबीली बोली—हाँ सेठजी, सात महीने का बच्चा हो गया है। वही कहने आई हूँ। उस रात का गर्भ रह गया और सात महीने का जीव मेरे पेट में पल रहा है। गुलाब ने कहा, तुम्हें रहने के लिए तुम्हारे नाम से मकान खरीद दूँगा। रहने-खाने का संपूर्ण खर्चा दूँगा। तुम यहाँ आकर आराम से रहो। बच्ची होगी तो पढ़ाऊँगा, अच्छी शादी करूँगा। लड़का होगा तो उसके लिए अलग कारोबार करा दूँगा। छबीली ने झिड़कते हुए कहा, मैं ऐसा कुछ नहीं होने दूँगी।

कहते हैं कि माता-पिता के पुण्य का लाभ संतान को मिलता है और उनके द्वारा किए गए पाप का फल भी उनकी औलाद को भोगना होता है। इसलिए तुम्हारे पाप कर्म का फल तुम्हारे ही सामने तुम्हारी संतान भोगेगी। तुम्हारी औलाद से तुम्हारी आँखों के सामने मेहनत-मजदूरी कराई जाएगी। यही कहने आई थी। इतना कहकर वापस लौट गई। गुलाब देखता रह गया था। आहट पाकर शांति दौड़कर आई; पूछा, कौन आया था? क्या छबीली आई थी? हाँ, आई थी, बहुत रोका, रुकी नहीं, चली गई।

□

चुनाव प्रचार प्रारंभ हो गया था। खलकसिंह के अत्याचारों से लोग तंग आ चुके थे। इसलिए उनके समर्थन की महिलाओं को लोग वोट नहीं देना चाहते थे। इधर रामधन प्रारंभ से ही छकोड़ी ग्रुप का हितैषी था। लटकन और घंसू रात-दिवस इमली का प्रचार करने में लग गए। इमली और छबीली ने घर-घर जाकर सभी से वोट माँगे। वह पढ़ी-लिखी थी, व्यवहारकुशल भी। उसने छोटी-छोटी सभाएँ करते हुए लोगों से कहा—इमली आपकी बेटी-बहू है। वह ईमानदारी से काम करके दिखाएगी। एक बार अवसर दिया जाए। चुनाव हुए, लोगों ने खूब मतदान किया। जब मत गणना हुई तो सबसे अधिक मत इमली को प्राप्त हुए। वह सरपंच पद पर निर्वाचित घोषित की गई।

निर्वाचित होने के पश्चात् क्षेत्र में उत्साह के साथ इमली ने घर-घर जाकर सभी को धन्यवाद दिया। खलकसिंह ने अपने सरपंच कार्यकाल में लाखों रुपया के झूठे बिल तैयार करके घपला किया था। रुपया हड़प लिया था। कागजों में काम दिखाकर रुपया खाया। बस्ती के सीमेंट रोड तथा शैचालयों के फर्जी निर्माण पाए गए। अनेक अनियमितताएँ पाए जाने पर सरपंच और सचिव जेल भेजे गए। लटकन अपील में जमीन का केस जीत गया, तो उसने अपनी जमीन खलकसिंह के कब्जे से वापस प्राप्त कर ली।

सरपंच इमली ने सभी निर्वाचित सदस्यों के साथ बैठक ली। सभी मतदाताओं का आभार प्रदर्शित किया तथा छबीली को सचिव बनाया गया। सरपंच इमली ने अपने पंचायत क्षेत्र के सभी ग्रामों में साफ-सफाई, घर-घर पानी की व्यवस्था नल योजना चलाकर पूरी कर दी। गाँव के पास जो अनुपयोगी शासकीय भूमि थी, उसमें छायादार वृक्ष लगवाए और स्कूलों में स्वयं जाकर व्यवस्था देखी। पढ़ाई अच्छी होने लगी थी। ग्राम में वाचनालय प्रारंभ करा दिया। पंचायत क्षेत्र में निर्माण कार्य हो रहे थे। जिसमें वहीं के निवासियों को काम मिलने लगा। यह आदर्श ग्राम पंचायत के रूप में प्रदेश भर में पुरस्कृत की गई थी। पंद्रह अगस्त का पर्व आ गया। पंचायत भवन पर इमली ने ध्वजारोहण किया। इमली ने अपने भाषण में कहा कि इस पंचायत से गरीब भाइयों को बाहर मजदूरी के लिए नहीं जाना पड़ेगा, बल्कि यहीं काम मिलेगा और कोई बेरोजगार नहीं रहेगा।

साअ

आनंद भवन, मेन रोड
पृथ्वीपुर-४७२३३८ (म.प्र.)
जिला-टीकमगढ़
दूरभाष : ९४२४३४५३५५

कामचोर

• राहिला रईस

सुपरिचित कहानीकार। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानी, शोध-पत्र, अनुवादित कहानियाँ प्रकाशित। नाथद्वारा की प्रसिद्ध संस्था 'साहित्य मंडल' द्वारा सम्मानित। संप्रति अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसर (हिंदी) के रूप में कार्यरत।

सुबह-सुबह फज्र के वक्त दरवाजे की घंटी घनघना उठी। मैं नमाज में मशगूल थी, इसलिए थोड़ी झुँझलाहट हुई। फिर भी इतनी सुबह किसी के आने का सबब सोच खुदा से खैर मनाती मुसल्ला लपेट उठ खड़ी हुई। दरवाजा खोला तो खींसें निपोरता अनस खड़ा था।

''इतनी सुबह!'' मेरा पूरा सरापा सवाल बना हुआ था।

''बाजी, मेरी कारखाने में नौकरी लग गई है, इसलिए अब आपका काम सुबह-सुबह करके आठ बजे तक कारखाने चला जाऊँगा।'' उसने बताया।

''अच्छा है। कौन से कारखाने में नौकरी लग गई है?'' मैंने पूछा।

''बाजी, छल्ले बनाने का कारखाना है। एक मशीन है, जिसमें लगे एक हैंडिल को दबाकर छल्ला काटना होता है। बहुत आसान काम है। बस हैंडिल को जरा दबाना ही तो है और पैसे भी छल्ले के हिसाब से हैं, जितने बना लो उतने पैसे। जब चाहे आओ, जब चाहे जाओ। मैं तो एक दिन में सात-आठ सौ तो बना ही लूँगा।'' बड़े आत्मविश्वास से वह बोला।

अनस पिछले कई महीनों से मेरे घर में साफ-सफाई का काम कर रहा है। अच्छा-खासा अट्ठाईस-तीस बरस का लंबा-चौड़ा लड़का है, पर कोई काम ठीक से नहीं करता। या यों कहा जाए कि टिककर काम करने की उसकी मंशा ही नहीं है। ऐसा लगता है कि जैसे उसको किसी चीज की जरूरत ही नहीं है। मिल गया तो ठीक, नहीं तो कोई फिक्र ही नहीं। अजब बेहिसी थी। और उसकी इस बेहिसी का सबब मेरी समझ से परे था।

एक सप्ताह हो गया था। अनस खुशी-खुशी काम पर जा रहा था। मेरे घर सुबह-सुबह काम कर रहा था। आज आठवाँ दिन था और अनस गायब! ऑफिस से लौटकर झाड़ू-पोंछा करने की खीज लिये मैं ऑफिस चली गई। लौटने पर पता चला कि अनस दोपहर में आकर काम करके जा चुका है।

'ओह! यानी नौकरी छूट गई।' मैंने सोचा। वजह जानने के लिए मैं उत्सुक थी।

''क्या हुआ अनस?'' शाम को उसके आने पर मैंने पूछा।

''बाजी, वह काम सही नहीं था, मैंने काम छोड़ दिया। बहुत मेहनत करनी पड़ती थी और पैसे भी बहुत कम बन पाते थे। पूरा दिन काम करता था, हाथ में ठेंठ पड़ गई हैंडिल दबाते-दबाते और दिन के सौ रुपए भी नहीं बन पाते थे, वह भी मालिक देता नहीं था, कल ले-लेना, कहकर टालता रहता था। कल मैंने पैसे माँगे तो लड़ने लगा, मैंने भी दो गाली सुना दीं और काम छोड़कर आ गया।'' उसने बताया।

मैं हैरान! क्या कहूँ, जब नौकरी पर जा रहा था तो काम बहुत आसान था, कुछ करने को था ही नहीं। पैसे भी सात-आठ सौ मिल रहे थे और छोड़ते वक्त। खैर, मुझे क्या!

लगभग एक माह बाद शाम को अनस फिर बड़ी खुशी-खुशी आया। ''बाजी, कल से सुबह काम करने आऊँगा। एक ऑफिस में सिक्योरिटी गार्ड की मेरी नौकरी लग गई है। हाँ, बाजी मुझे छह सौ रुपए उधार दे दीजिए, वर्दी सिलवानी है, जूते मुझे कंपनी से मिल जाएँगे।'' वह बोला।

पंद्रह दिन से यही दिनचर्या चल रही थी। मैं खुश थी कि चलो, इस बार अनस का मन लग गया है। सिक्योरिटी गार्ड बन गया है आखिरकार। वर्दी पहन बूट गाँठ हाथ में डंडा ले घूमता-फिरता है। चार घंटे दिन और चार घंटे देर शाम ड्यूटी करता। रात को तो सो भी वहीं जाता। तनख्वाह भी दस हजार रुपए मिल रही है। ठीक ही है।

लेकिन यह लो, चंद दिन बाद अनस फिर गायब। अब क्या हुआ? पता चला महाशय आज फिर दोपहर में काम करने आए थे।

अबकी तो बड़ी दु:खद कहानी निकली।

''बाजी, सुपरवाइजर अपने भाई की ड्यूटी भी हमसे करवाता था। आठ घंटे नहीं सोलह घंटे ड्यूटी करनी पड़ती थी। मुझे पता चला है कि वर्दी के लिए पैसे ऑफिस से मिले थे, पर सुपरवाइजर खा गया, बस जूते दे दिए। एक वक्त खाने के रोज पैसे मिलते हैं, वह भी नहीं देता। तनख्वाह से भी पाँच सौ रुपए वह ले लेगा। मुझे नहीं करनी ऐसी नौकरी, उसके भाई की जगह ड्यूटी मैं करूँ, अगर चोरी हो जाए तो इल्जाम मेरे सिर आएगा। जेल मुझे जाना पड़ेगा। सुपरवाइजर की नीयत ठीक नहीं है, बाजी। देख लेना, चोरी तो करवाएगा वह एक दिन। इसलिए मैं नौकरी छोड़ आया। इज्जत बड़ी चीज होती है न बाजी।'' वह कहता गया।

मैं उसका मुँह देख रही थी। कुछ कहते न बना।

समय का पहिया घूम रहा था। दिन यों ही गुजर रहे थे कि एक दिन अनस ने आकर मुझसे दो दिन के लिए अपने गाँव जाने के लिए छुट्टी माँगी।

दो दिन बाद जब अनस वापस आया तो अपने साथ एक घोड़ा लेकर लौटा था। आकर बोला, ''बाजी, अब मैं आपका काम दोपहर को ही किया करूँगा। गाँव से घोड़ा लेकर आया हूँ, सुबह मंडी से सब्जी लाकर बाजार में पहुँचाने का काम मिला है। हर फेरे के पाँच सौ रुपए मिलेंगे।''

''ठीक है।'' मैंने कहा।

अब अनस दोपहर के बजाय देर शाम को आता। जल्दी-जल्दी उल्टा-सीधा काम करता। कभी एक कमरा छोड़ देता तो कभी पोंछा ही नहीं लगाता। मैं बहुत परेशान थी, पर सोचती—चलो कुछ कमा तो रहा है। लेकिन इस इतवार वह फिर अपने वक्त पर मौजूद था। मैं हैरान!

''क्या हुआ अनस, आज मंडी नहीं गए क्या?'' मैंने पूछा

''हाँ बाजी, अब नहीं जाऊँगा।'' उसने कहा

''मगर क्यों?'' मैं पूछे बिना न रह सकी।

''वह बाजी, पूरा नहीं पड़ रहा था। जितना कमाओ, उससे ज्यादा तो घोड़े के दाने-पानी में लग जाता है। घोड़ा बहुत खाता है, बाजी। गाड़ी का भाड़ा भी देना पड़ता है। फिर इ-रिक्शा के आ जाने से लोग घोड़ा-गाड़ी के बजाय उसी से सामान मँगाना पसंद करते हैं। मुझे काम भी कम मिल रहा था। घोड़े का रख-रखाव भी मुश्किल है, रोज नहलाओ, मालिश करो, कंघी करो। हो नहीं पा रहा था, बाजी। मुझे एक दिन की छुट्टी दे दीजिए। घोड़ा गाँव छोड़ आऊँगा।'' वह बोला।

मैं क्या कहती। अनस घोड़ा गाँव छोड़ आया था। अब फिर से वह दोपहर में काम करने आ रहा था। दो-चार महीने यों ही गुजर गए। अनस की जिंदगी में फिर उथल-पुथल हुई। एक बार फिर काम मिल गया था उसे। मुझसे फिर सुबह आने की गुहार लगी और हमेशा की तरह मैंने फिर मान ली। अबकी बार होटल में नौकरी लगी थी। यहाँ भी करने को कुछ नहीं था। तनख्वाह दस हजार, उस पर से टिप भी। दोपहर और रात का खाना भी।

''और क्या चाहिए।'' मैंने कहा।

अनस खुशी-खुशी काम पर जा रहा था। काम की बड़ी तारीफें भी थीं। लेकिन एक दिन फिर अनस सुबह काम करने नहीं आया। यानी फिर काम छोड़ दिया, मेरे दिमाग में सबसे पहले यही बात आई। मेरा शक बेबुनियाद नहीं था। शाम को अनस आया तो मैंने लगभग गुस्से में उससे नौकरी छोड़ने की वजह पूछी।

जवाब सुनकर तो मैं हँस ही पड़ी।

''बाजी, मुझसे मेज साफ करने को कह रहे थे। झाड़ू-पोंछा करने को भी कह रहे थे। बताओ बाजी, मैं यह काम करता क्या? मेरी भी तो कोई इज्जत है। आपके घर की बात और है। सबके सामने यह काम थोड़ी न करूँगा।'' बड़ी मासूमियत से उसने कहा।

मैं समझ ही नहीं सकी कि यह कौन सी इज्जत की बात कर रहा है। नौकरी छोड़े एक महीना हो चुका था। हर दो-एक दिन बाद उसे सौ-पचास उधार चाहिए होते हैं। यों ही चल रहा था सबकुछ कि एक दिन अनस फिर मुसकराता हुआ आया।

मैंने कहा, ''क्या बात है अनस, खुश लग रहे हो।''

''बाजी, वो कल से सुबह आऊँगा काम करने।'' वह बोला ''अच्छा है। लेकिन कब तक?''

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०७५०३३८५९२४

इस अंक के चित्रकार

सिद्धेश्वर

जाने-माने लेखक एवं चित्रकार। 'बूँद-बूँद सागर' (लघुकथा-संग्रह); 'इतिहास झूठ बोलता है' (कविता-संग्रह); 'ढलता सूरज-ढलती शाम' (कहानी-संग्रह); 'दहशतजदा' (उपन्यास-अंश) प्रकाशित। इसके अतिरिक्त कई पुस्तकों का संपादन किया। कई सम्मान व पुरस्कारों से सम्मानित। संप्रति वरीय टिकट परीक्षक (पूव मध्य रेवले)।

सिद्धेश सदन,
किड्स कार्मल स्कूल के बाएँ
द्वारकापुरी, रोड नं.-२, हनुमाननगर,
कंकड़बाग, पटना-८०००२०
दूरभाष : ९२३४७६०३६५

ऊर्जा बचाएँ और ऊर्जस्वी बनें

• दुर्गादत्त ओझा

जिस प्रकार बिना जल, वायु और भोजन के कोई भी प्राणी जीवित नहीं रह सकता, उसी प्रकार बिना ऊर्जा के न तो वह गतिमान हो सकता है और न ही उसकी चैतन्यता विद्यमान रह सकती है। वस्तुत: यह केवल ऊर्जा ही है, जो जड़ और चेतन में अंतर स्पष्ट करती है। मनुष्य हो या मशीन, कार्य करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। अनेक प्रकार के जीवन आधारित कार्यों में, यहाँ तक कि साँस लेने तक में भी ऊर्जा का उपयोग होता है। किसी भी देश के सामाजिक, औद्योगिक, आर्थिक तथा राजनीतिक विकास के लिए ऊर्जा के साधनों का विशेष महत्त्व होता है तथा किसी भी राष्ट्र की समृद्धि का मापदंड भी ऊर्जा की खपत से आँका जाता है।

वर्तमान काल में अथवा निकट भविष्य में देश की खुशहाली के लिए जितनी ऊर्जा की आवश्यकता है, उसके अनुपात में उपलब्ध ऊर्जा बहुत कम है। विश्व स्तर पर बढ़ती हुई जनसंख्या की आर्थिक प्रगति और स्तरीय जीवनयापन की इच्छा के कारण ऊर्जा की माँग में निरंतर वृद्धि हो रही है। यदि हम ऊर्जा को परिभाषित करना चाहें तो कहा जा सकता है कि 'किसी व्यक्ति के कार्य करने की संपूर्ण योग्यता ही ऊर्जा है।' ऊर्जा शब्द के प्रयोग का प्रचलन साहित्य में भी है। प्रायश: सुनने में आता है कि 'अब पहले जैसी ऊर्जा कहाँ?' अर्थात् ऊर्जा क्षीण हो चली। ऊर्जा किसी-न-किसी संसाधन से ही उत्पन्न की जाती है। स्रोत के बिना ऊर्जा की विद्यमानता की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। कभी ऊर्जा प्रकाश के रूप में तो कभी बिजली के रूप में प्रकट होती है। प्राय: सभी प्रकार के क्रियाकलापों के लिए ऊर्जा का प्रयोग होता है।

ऊर्जा को हम देख नहीं सकते और न ही छू सकते हैं। इसके विपरीत हम किसी वस्तु को देख भी सकते हैं और छू भी सकते हैं। अर्थात् ऊर्जा वस्तु नहीं है, परंतु इसका अस्तित्व उतना ही वास्तविक है जितना किसी वस्तु का है। हम ऊर्जा के विषय में यह भी कह सकते हैं कि यह कुछ ऐसी है, जो एक जगह से दूसरी जगह तक प्रवाहित होती है या जमा रहती है।

एक समय था, जब केवल मनुष्य की या पशुओं की ऊर्जा से ही काम चलाना पड़ता था अर्थात् उस समय ऊर्जा का इस्तेमाल करने बहुत सीमित था। वाष्प या दूसरे तरीके से चलनेवाली मशीनों के आविष्कार के साथ ही यह स्थिति बदल गई एवं अंतत: औद्योगिक क्रांति का सूत्रपात हुआ। मानव जैसे-जैसे भिन्न-भिन्न ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करने लगा, वैसे-वैसे मानव सभ्यता का विकास होता गया। मानव द्वारा ऊर्जा के उपयोग के इतिहास को 'कार्बन को जलाने का इतिहास' भी कहा जा सकता है। औद्योगिक क्रांति की शुरुआत में ऊर्जा का प्रमुख स्रोत लकड़ी थी तत्पश्चात् कोयले का इस्तेमाल शुरू हुआ और वाष्प ऊर्जा (स्टीम एनर्जी) युग का सूत्रपात हुआ। बीसवीं सदी की शुरुआत के साथ-साथ तेल और प्राकृतिक गैस का प्रयोग होने लगा।

सुप्रसिद्ध विज्ञान-लेखक। पुरातन एवं अद्यतन विज्ञान विषयों पर हिंदी में ५० से अधिक पुस्तकें, सहस्राधिक विज्ञान आलेख एवं शताधिक शोध-पत्र प्रकाशित। पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर लेखन, अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों एवं सम्मानोपाधियों से अलंकृत।

वस्तुत: ऊर्जा का आदि स्रोत सूर्य ही है। हमें साँस लेने, भोजन पचाने, खेलने-कूदने, चलने-फिरने, भोजन पकाने आदि सभी कार्यों के लिए विभिन्न स्रोतों से ऊर्जा की आवश्यकता होती है। ऊर्जा जिन स्रोतों से प्राप्त होती है, उन्हें ईंधन कहते हैं। कोयला, तेल, जल तथा लकड़ी ये बहुज्ञात तथा पारंपरिक ईंधन हैं। ऊर्जा को व्यक्त करने की इकाइयाँ हैं—अर्ग, जूल, किलोवाट, पौंड, फुट, पाउंडल आदि।

ऊर्जा के विभिन्न रूप भी हैं, यथा यांत्रिक ऊर्जा, रासायनिक ऊर्जा, प्रकाश एवं ऊष्मा, विद्युत् ऊर्जा, ध्वनि एवं चुंबकत्व आदि। इन सभी में यांत्रिक ऊर्जा ही प्रमुख है। और ये भी दो प्रकार—गतिज तथा स्थितिज ऊर्जा होती है।

ऊर्जा स्रोत

जिन स्रोतों से ऊष्मा, प्रकाश तथा शक्ति प्रदान करने के लिए ऊर्जा प्राप्त हो, वे ऊर्जा स्रोत कहलाते हैं। सूर्य, जीवाश्म ईंधन, रेडियोऐक्टिव पदार्थ ऊर्जा प्रदान करनेवाले स्रोत हैं। इनके अलावा जलशक्ति, ज्वारीय ऊर्जा, पवन ऊर्जा, समुद्री ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, जलतापीय तथा जैवभार ऊर्जा भी इसके अन्य रूप हैं।

ऊर्जा हर उस वस्तु पर शासन करती है, जो इस अनंत ब्रह्मांड में विद्यमान है। वैशेषिक दर्शन के अनुसार ऊर्जा/तेज एक तीव्र चमक युक्त पदार्थ है, जो प्रकृतितः आण्विक है। ऊर्जा का एक महत्त्वपूर्ण गुण ऊष्णीय उत्तेजना प्रदान करना है, अतः कोई भी पिंड जो इसके साथ संयोग करता है, उच्च तापमान प्रदर्शित करता है। तेज का संयोग कर्म/गति में परिवर्तन ले आता है। समस्त रासायनिक अभिक्रियाएँ ऊर्जा/तेज की मात्रा के संयोग के कारण होती हैं।

ऊर्जा का वर्गीकरण

हमारे इस पृथ्वी नामक उपग्रह पर ऊर्जा का वर्गीकरण करें तो ज्ञात होता है कि निम्नलिखित प्रकार की ऊर्जाएँ यहाँ उपलब्ध हैं—

ऊष्मीय (थर्मल), यांत्रिक (मेकैनिकल), विद्युत् (इलेक्ट्रिक), विद्युत् चुंबकीय (इलेक्ट्रो मैग्नेटिक), चुंबकीय (मैग्नेटिक), नाभिक (न्यूक्लियर), रासायनिक (केमिकल), स्थिर वैद्युत् (इलेक्ट्रोस्टेटिक), गुरुत्वीय (ग्रैवीटेशनल), गुरुत्वगतिक (ग्रैवीडायनेमिक), न्यूट्रिनोगतिक (न्यूट्रिनोडायनेमिक), स्थिर न्यूट्रिनो (न्यूट्रिनोस्टेटिक), मेसॉन (इलेक्ट्रॉन के बाद), फोटॉन, प्रत्यास्थ (इलेस्टिक) और विनाश (एनिहिलेशन)।

ऊर्जा-संकट

वर्तमान में ऊर्जा केवल आवश्यकता की पूर्ति के लिए ही नहीं वरन् आज वह देशों की समृद्धता मापने का मापदंड भी बन गई है, क्योंकि अधिक ऊर्जा का उपयोग अधिक आर्थिक समृद्धता को परिलक्षित करता है। आर्थिक संपन्नता ही किसी भी देश की विकास की छवि को विश्व पटल पर उजागर करती है। वस्तुतः ऊर्जा संकट विश्वव्यापी समस्या है। इसके निम्नांकित कारण हैं—

१. निरंतर बढ़ती जनसंख्या
२. मानव की विलासितावादी प्रवृत्ति में वृद्धि
३. एकल परिवहन व्यवस्था
४. जीवाष्म ईंधनों में कमी
५. ऊर्जा का आदतन दुरुपयोग—घरों, कार्यालयों तथा सामाजिक स्थलों में प्रायशः ऐसा होता है।
६. कृषि में दुरुपयोग
७. बिजली की चोरी
८. औद्योगिक क्षेत्र में अधिक अपव्यय
९. ऊर्जा के अक्षय स्रोतों के उपयोग में कम रुझान
१०. ऊर्जा शिक्षा का अभाव तथा
११. दैनिक दिनचर्या में ऊर्जा की अधिकाधिक माँग।

वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों की आवश्यकता

वर्तमान स्थिति को देखते हुए तथा ऊर्जा संकट से बचने हेतु स्वच्छ एवं हरित ऊर्जा उत्पादन के वैकल्पिक स्रोतों के विकास तथा उनके उपयोग की नितांत आवश्यकता प्रतिपादित की गई है। इसके लिए दो सबसे उत्तम मार्ग हैं—पहला ऊर्जा संरक्षण को अधिक-से-अधिक प्रोत्साहन देना तथा दूसरा पर्यावरण अनुकूल वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों को प्रयोग में लाना, जिससे ऊर्जा की बढ़ती हुई माँग की पूर्ति की जा सके।

वैकल्पिक ऊर्जा का उत्पादन इसलिए भी प्रासंगिक है, क्योंकि तेल की कीमतें अंतरराष्ट्रीय बाजार में प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही हैं। कोयला, पेट्रोल, डीजल एवं प्राकृतिक गैस के भंडार सीमित हैं और ऐसा अनुमान है कि इनकी खपत में यदि कमी नहीं लाई गई तो आनेवाले लगभग ४०-५० वर्षों में इनका भंडार समाप्त हो सकता है। फिर ऊर्जा के इन परंपरागत संसाधनों का विकल्प क्या होगा? इसलिए भविष्य की ऊर्जा जरूरतों को पूरा करने के लिए और बेहतर भविष्य के लिए वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का, जो स्वच्छ एवं हरित है, का भी अधिकाधिक उपयोग करना पड़ेगा।

ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों को इसलिए भी अपनाना जरूरी है, क्योंकि ये पर्यावरण को स्वच्छ तथा हरित रखते हैं तथा इनसे कार्बन उत्सर्जन नहीं होता है और वैश्विक ऊष्मण से बचाव का रास्ता भी खुलता है। आज विश्व भर के सभी देशों में वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोतों से ऊर्जा का उत्पादन किया जा रहा है।

वर्ष १९७३-७४ में उत्पन्न हुए तेल संकट से ऊर्जा संकट का आभास होने लगा था। विश्व में उत्पन्न हुए इस ऊर्जा संकट से निपटने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने नवंबर, १९७८ में एक अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन नैरोबी में वर्ष १९८१ में करने का निर्णय लिया, जिसमें नए तथा नवीनीकरण योग्य ऊर्जा साधनों के बारे में चर्चा की गई। इस सम्मेलन में विश्वभर के विकसित और विकासशील देशों ने साथ बैठकर १० दिनों तक ऊर्जा साधनों की कमी पूरी करने के लिए दोहन योग्य वैकल्पिक ऊर्जा साधनों की खोज पर चर्चा की। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य था ऊर्जा के अन्य साधन अपनाने की आवश्यकता को विश्व की जनता को बताना, ऊर्जा के नए साधनों, उनसे संबंधित प्रौद्योगिकी और उनके उपयोग की कार्य प्रणाली के बारे में अधिक-से-अधिक जानकारी एकत्र करना एवं इस क्षेत्र में अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ाना।

शनैः-शनैः इस कार्य में प्रगति हुई तथा ऊर्जा के कई वैकल्पिक स्रोत खोज लिये गए। ये स्रोत निम्नांकित हैं—

१. सौर ऊर्जा
२. पवन ऊर्जा
३. पन-बिजली ऊर्जा
४. बायोगैस एवं जैव भार ऊर्जा
५. महासागरीय ऊर्जा
६. ज्वारीय ऊर्जा
७. भू-तापीय ऊर्जा
८. हाइड्रोजन ऊर्जा

९. परमाणु ऊर्जा १०. समुद्री लहर ऊर्जा या तरंग ऊर्जा
११. अपशिष्ट से ऊर्जा

इनमें स्वच्छ एवं हरित ऊर्जा से संबंधित स्रोत हैं, यथा—सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, पन बिजली ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, अपशिष्ट, भू-तापीय ऊर्जा, तरंग, बायोगैस, जैवभार ऊर्जा, शैवाल ऊर्जा तथा हाइड्रोजन ऊर्जा।

ऊर्जा संरक्षण : वर्तमान की आवश्यकता

ऊर्जा की समस्या का समाधान ऊर्जा के नए-नए वैकल्पिक साधनों की खोज से तो होगा ही, फिर भी यदि हम उपलब्ध ऊर्जा का संरक्षण कर सकें तो यह 'ऊर्जा बचत' हमारे लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

ऊर्जा संरक्षण के लिए यह जानना आवश्यक है कि किस प्रकार विभिन्न यांत्रिक इकाइयों, मशीनों तथा उनकी क्रियाओं को चालू रखने के लिए कम-से-कम ऊर्जा से अधिक-से-अधिक कार्यक्षमता प्राप्त की जा सकती है। उदाहरण के तौर पर यह जानना जरूरी है कि क्या भट्ठियों में जलाए जानेवाले कोयले के प्रत्येक कण से प्राप्त ऊर्जा का हम सही उपयोग कर पाते हैं या नहीं? आजकल अधिकांश उद्योगों में भाप की आवश्यकता रहती है, यदि इन्हीं उद्योगों में अधिक दाबवाली भाप से पहले विद्युत् जेनरेटर द्वारा विद्युत् उत्पादन कर लिया जाए तथा शेष कम दाबवाली भाप को उत्पादन कार्य हेतु उपयोग में लाया जाए तो प्रत्येक औद्योगिक प्रतिष्ठान अपनी कुल विद्युत् खपत का ५० प्रतिशत से ८० प्रतिशत भाग स्वयं के स्तर पर ही पूरा कर सकता है।

कैसे हो विभिन्न क्षेत्रों में ऊर्जा संरक्षण

हमारे देश में विभिन्न क्षेत्रों में इस्तेमाल होनेवाली ऊर्जा के संरक्षण के निम्न सार्थक कदम उठाए जाने संभव हैं—

• घरों, कार्यालयों तथा व्यावसायिक इमारतों का निर्माण कराते समय भवन वास्तुकला तथा उनकी तकनीकी बनावट पर समुचित ध्यान नहीं दिया जाता, जिसका नतीजा बिजली की अधिक खपत के रूप में सामने आता है। कई कार्यालयों की इमारतों में जरूरत से बड़े रोशनदान एवं बड़े आकार की खिड़कियाँ देखने को मिलती हैं एवं उन्हें ठंडा-गरम रखने के लिए प्रयुक्त होनेवाले बिजली के उपकरण, जैसे कि ताप संवाहक (हीट कंवेक्टर), तापक, वातानुकूलन यंत्र आदि सही ऊर्जा दक्षता के न होने के कारण ऊर्जा यों ही व्यर्थ होकर उसकी खपत भी अधिक होती है। कार्यालयों में इस्तेमाल होनेवाले कंप्यूटर आदि युक्तियाँ भी 'वॉर्मिंग अप' समय बचाने के लिए चालू ही रखे जाते हैं। इससे भी ऊर्जा की काफी बरबादी होती है। (घरों में इस्तेमाल होनेवाले दूरदर्शन सेटों में भी 'स्टेंड बाई' प्रणाली के कारण काफी ऊर्जा व्यर्थ जाती है।)

• कार्यालयों की प्रकाश व्यवस्था भी प्राय: इस तरह होती है, जो बिजली के अधिक खर्च को बढ़ावा देती है। अन्वेषी प्रयासों के चलते वैज्ञानिक सौर वास्तुकला (सोलर आर्किटेक्चर) का विकास करने में सफल हो गए हैं। सौर निष्क्रिय तापन (सोलर पैसिव हीटिंग) द्वारा भवनों को गरम रखने की तकनीक वैज्ञानिकों ने ढूँढ़ निकाली है। इस तकनीक में बिना किसी पारंपरिक ऊर्जा स्रोत के इस्तेमाल के केवल सौर ऊर्जा द्वारा ही भवनों को गरम रखा जाता है।

• निष्क्रिय विधि से भवनों कों ठंडा रखने की तकनीक भी विकसित कर ली गई है। इस विधि में भवनों पर लगनेवाले अनावश्यक तापीय भार (थर्मल लोड) को कम किया जाता है। कई बातें इस तकनीक में शामिल है, जैसे कि वातानुकूलन यंत्रों के आकार को छोटा करना, जहाँ तक संभव हो पाए, भवनों को सौर विकिरण के सीधे प्रभाव से बचाए रखना आदि। वातानुकूलन में खिड़कियों में दोहरे काँच तथा दीवारों एवं छतों में ताप अवरोधकों के इस्तेमाल द्वारा भी काफी ऊर्जा की बचत संभव है।

• दरअसल भवनों पर ऊर्जा का एक बहुत बड़ा हिस्सा खर्च होता है। उन्नत ऊर्जा संरक्षण तकनीकों एवं कुशल ऊर्जा प्रबंधन द्वारा अमेरिका में भवनों में खर्च होनेवाली ऊर्जा को घटाने में काफी हद तक सफलता मिली है। गौरतलब है कि अमेरिका की कुल ऊर्जा व्यय का ४० प्रतिशत हिस्सा भवनों पर ही खर्च होता है।

• भारत में भी भवनों पर खर्च होनेवाली ऊर्जा के प्रबंधन के लिए कुछ प्रयास किए जा रहे हैं। भारतीय प्रौद्योगिक संस्थान, दिल्ली में गरनोट मिंकी नामक कंपनी ने एक ऐसे इमारती ढाँचे का निर्माण किया है, जिसमें 'फनेल' सिद्धांत का प्रयोग एक तरह की सौर चिमनी के विकास में किया गया है। इस सिद्धांत द्वारा इस ढाँचे को प्राकृतिक तौर पर ही ठंडा रखने में मदद मिलती है। नई दिल्ली के जनपथ होटल में सौर प्रकाश वोल्टीय पैनलों तथा सौर संग्रहकों (सोलर कलेक्टर) की मदद से तापन, संवातन एवं वातानुकूलन से संबंधित बहुत-सा काम लिया जाता है।

• इमारतों में बिजली की बचत एवं ऊर्जा संरक्षण के लिए अमेरिका में बुद्धिमान (इंटेलीजेंट) इमारतों की कल्पना की गई। यह कल्पना वहाँ साकार भी हुई, जब वहाँ इस तरह की कई इमारतें बनकर तैयार हुईं। बुद्धिमान इमारतों में बिजली की बचत के लिए प्रकाश और वातानुकूलन दोनों की व्यवस्थाएँ कंप्यूटरों तथा संवेदकों (सेंसर) के जरिए नियंत्रित की जाती हैं। प्राकृतिक तौर पर उपलब्ध नियामतों जैसे कि ठंडी बयार और सूर्य के प्रकाश का भी इन इमारतों में भरपूर इस्तेमाल किया गया है।

• बुद्धिमान इमारतें बाहर से काँच से घिरी हुई दिखाई पड़ती हैं। विशेष रूप से निर्मित ये काँच अवरक्त (इन्फ्रारेड) किरणों के रूप में आनेवाले सूर्य के ताप को तो रोक देते हैं, परंतु प्रकाश किरणों को बिना किसी रुकावट के अंदर प्रवेश करने देते हैं।

• हमारे देश की पहली बुद्धिमान इमारत मुंबई स्थित सी.एम. सी. हाउस है। पुणे स्थित टाटा रिसर्च डवेलपमेंट ऐंड डिजाइन सेंटर (टी.आर.डी.डी.सी) भी बुद्धिमान इमारत की श्रेणी में ही आती है। राजधानी दिल्ली में हाल ही में बनकर तैयार हुई एफ.सी.आई. की बहुमंजिली इमारत में भी बुद्धिमान कहलाए जाने के सभी गुण मौजूद है। 'द कैपिटल कोर्ट' नामक एक और व्यावसायिक बुद्धिमान इमारत दिल्ली में निर्माणाधीन है।

• घरों के निर्माण में भी अगर हवा और रोशनी का समुचित ध्यान रखा जाए तो बिजली की काफी बचत हो सकती है। आजकल घरों की

बनावट दोषपूर्ण होती है, परिणामत: घरों में दिन के समय भी बल्ब, ट्यब लाईट आदि जलाने को मजबूर होना पड़ता है। लेकिन घरों की बनावट पर थोड़ा ध्यान करके सूरज की रोशनी को अंदर आने देकर हम प्राकृतिक प्रकाश से लाभ उठा सकते हैं।

मकान का निर्माण करवाते समय अगर धूप की दिशा पर ध्यान रखा जाए तो सूर्य की किरणों से मकान प्राकृतिक तौर पर गरम रह सकते हैं। मकान की दक्षिणी दीवार पर अगर हम काँच का इस्तेमाल अच्छी तरह से कर सकें तो ग्रीन हाउस प्रभाव से हम अपने मकान को गरम रख सकते हैं। उसी तरह घर बनवाते समय अगर दक्षिण दिशा का हम ध्यान रखें तो मकान काफी हवादार बन सकता है, जिससे पंखे, कूलरों तथा वातानुकूलन यंत्रों की आवश्यकता काफी हद तक कम हो सकती है। इसके अलावा प्रकाशमिति (फोटोमिट्री) के सिद्धांतों का सही इस्तेमाल करके हम अपने घरों की प्रकाश व्यवस्था को भी इस तरह बना सकते हैं, जिससे बिजली की समुचित बचत हो।

• आम बल्बों में काफी बिजली तापीय ऊर्जा के रूप में व्यर्थ हो जाती है। तभी इनके स्थान पर फ्लोरोसेंट ट्यूबों का इस्तेमाल शुरू हुआ। बाद में किफायती पतली ट्यूबें (स्लिम लाइन) भी बनीं। ऊर्जा सरंक्षण की आवश्यकता को देखते हुए आजकल बल्बों और ट्यूबों का स्थान कॉम्पेक्ट फ्लोरोसेंट लैंप (सी.एफ.एल.) ले रहे हैं। कम वाट के ये लैंप न केवल कम स्थान घेरते हैं बल्कि १०० वाट से भी अधिक विद्युत् शक्ति के बल्बों से उत्सर्जित प्रकाश का मुकाबला कर पाने में सक्षम हैं।

• ग्रामीण क्षेत्रों में घरों में खाना पकाने के लिए बायोगैस के साथ उन्नत चूल्हों का इस्तेमाल ऊर्जा की बचत के साथ ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य तथा पर्यावरण के लिए भी हितकारी है। गाँवों में सौर तापीय तथा सौर प्रकाशवोल्टीय प्रणालियों द्वारा बिजली उत्पादन पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों से उत्पादित बिजली के संरक्षण में बहुत सहायक सिद्ध होगा।

• ईंधन की बचत के लिए सौर-जल तापकों (सोलर वाटर हीटर) का इस्तेमाल अमेरिका, जापान तथा इजराइल आदि देशों में बहुतायत से हो रहा है मगर हमारे देश में निर्मित सौर जल तापकों की अधिक लागत के कारण (हालाँकि सरकार इन पर छूट भी देती है) ये ग्रामीण समुदाय की पहुँच से बाहर तो हैं ही, आम जनता में भी ये बहुत लोकप्रिय नहीं हो पा रहे हैं। इस कारण पानी गरम करने के लिए हमारे देश में बिजली, लकड़ी, गैस तथा परंपरागत विद्युत् जल तापकों का ही बहुतायत से इस्तेमाल होता है। इनके स्थान पर अगर सौर जल तापकों के इस्तेमाल पर जोर दिया जाए तो इससें बहुमूल्य ऊर्जा की काफी बचत हो सकती है।

ईंधन की बचत के लिए सौर-जल तापकों (सोलर वाटर हीटर) का इस्तेमाल अमेरिका, जापान तथा इजराइल आदि देशों में बहुतायत से हो रहा है मगर हमारे देश में निर्मित सौर जल तापकों की अधिक लागत के कारण (हालाँकि सरकार इन पर छूट भी देती है) ये ग्रामीण समुदाय की पहुँच से बाहर तो हैं ही, आम जनता में भी ये बहुत लोकप्रिय नहीं हो पा रहे हैं। इस कारण पानी गरम करने के लिए हमारे देश में बिजली, लकड़ी, गैस तथा परंपरागत विद्युत् जल तापकों का ही बहुतायत से इस्तेमाल होता है।

• उद्योग : व्यावसायिक ऊर्जा की सर्वाधिक खपत भारतीय उद्योगों में होती है। संपूर्ण देश की ऊर्जा खपत का आधे से अधिक हिस्सा तो उद्योगों में ही लग जाता है। उद्योगों से ऊर्जा की काफी मात्रा में बरबादी तापीय ऊर्जा के रूप में होती है। उद्योगों में प्रयुक्त संयत्रों एवं युक्तियों की अदक्षता, ऊर्जा के गलत इस्तेमाल तथा ऊर्जा प्रबंधन के आंशिक या पूरी तरह से अभाव के कारण भी ऊर्जा का काफी हिस्सा बेकार चला जाता है।

• विशेषकर प्राथमिक धातुएँ, आवश्यक रसायन, पेट्रोलियम तथा खाद्य पदार्थ, कागज, काँच एवं कंक्रीट बनानेवाले उद्योगों में ऊर्जा की अनावश्यक रूप से बरबादी होती है।

• ऊर्जा की अधिक खपत एवं बरबादी के साथ-साथ उद्योगों में प्रयुक्त संयंत्रों की असक्षमता के कारण पर्यावरण पर भी बुरा असर पड़ता है। अत: उद्योगों के लिए स्वच्छ प्रौद्योगिकी के विकास की दिशा में अब गंभीर रूप से प्रयास किए जा रहे हैं। स्वच्छ प्रौद्योगिकियों से न केवल ऊर्जा की बचत होगी वरन् पर्यावरण प्रदूषण की समस्या से भी काफी हद तक निजात मिल सकेगी। विशेषकर लघु औद्योगिक इकाइयों, जिनमें करीब ६५ प्रतिशत राष्ट्रीय उत्पादन होती है, के लिए ऐसे उपाय बहुत जरूरी हैं।

• कृषि : कृषि के क्षेत्र में सिंचाई के लिए ऊर्जा दक्षतावाले पंपों के विकास से भी काफी मात्रा में ऊर्जा की बचत हो सकती है। पंप के लिए इस्तेमाल होनेवाले संयंत्रों की ऊर्जा धारिता की उचित गणना बहुत जरूरी है। ऐसे संयंत्रों की जरूरत से जयादा शक्ति होने पर अधिक ऊर्जा का नाहक इस्तेमाल होगा। गाँवों में सौर प्रकाशवोल्टीय प्रणाली द्वारा सिंचाई ऊर्जा के पारंपरिक स्रोतों तथा बहुमूल्य बिजली को बचाने में काफी सहायता प्राप्त होगी। ट्रैक्टरों में भी ऊर्जा-दक्ष इंजन लगाकर ऊर्जा संरक्षण की दिशा में सार्थक कदम उठाया जा सकता है।

• यातायात : यातायात के क्षेत्र में भी पेट्रोल और डीजल की काफी बचत वाहनों के ऊर्जा दक्ष इंजनों के विकास द्वारा की जा सकती है। वाहनों का मिल-जुलकर प्रयोग करने तथा सड़कों की दशा में सुधार करके भी ईंधन की काफी बचत हो सकती है। पेट्रोल की जगह जैव स्रोतों से प्राप्त इथेनॉल तथा मिथेनॉल का ईंधन के रूप में इस्तेमाल करने के लिए उचित प्रौद्योगिकी के विकास की आवश्यकता है। ईंधन सैल द्वारा हाइड्रोजन को सीधे विद्युत् में बदलकर उस विद्युत् से मोटरकारें चलाने के प्रयास भी विकसित देशों में चल रहे हैं।

बिजली की बचत के सरल व आवश्यक उपाय

• कक्ष/कार्यालय छोड़ते समय लाइट, पंखे एवं अन्य बिजली उपकरण बंद कर दें।

• घरों में फिलामेंट लैंप के स्थान पर ट्यूब लाइट/सी.एफ.एल.

बत्ती का उपयोग करें।

• घरों में टॉयलेट, बरामदा, सीढ़ी इत्यादि में कम वॉट की सी.एफ.एल. बत्ती का उपयोग करें।

• ट्यूब लाईट फिटिंग में परंपरागत चोक के स्थान पर इलेक्ट्रॉनिक चोक का उपयोग करें।

• घरों, अतिथि-गृहों आदि में गरम पानी के उपयोग के बाद गीजर को तुरंत बंद करें। जहाँ गरम पानी की खपत अधिक है, वहाँ सोलर वॉटर हीटर का उपयोग करें।

• घरों में प्रयुक्त फ्रिज के दरवाजे को ज्यादा देर तक खोलकर न रखें। फ्रिज के दरवाजे की गैस्केट व सीलिंग सही रखें।

• हीटर के उपयोग पर अंकुश लगाएँ, यह हानिकारक है। इससे ऑक्सजीन की कमी तो होती ही है, विद्युत् खर्च भी ज्यादा होता है।

• भवन में प्राकृतिक प्रकाश व हवा का पर्याप्त प्रावधान हो। दीवारों व परदों का रंग हल्का रखें, जिससे ये कम प्रकाश का संग्रहण करें।

• रिमोट से चलनेवाले बिजली उपकरणों को स्लीप मोड में न रखकर स्विच से भी बंद कर दें।

• पानी की बचत करें, ताकि बिजली की बचत हो सके।

कार ४५-५५ कि.मी. प्रति घंटा की गति से चलाएँ

कार हमेशा धीरे और संतुलित ढंग से चलाएँ। आप गाड़ी जितनी अधिक तेज चलाएँगे, उसे उतना ही हवा के अधिक प्रतिरोध का सामना करना पड़ेगा। ६० किलोमीटर प्रतिघंटा या इससे अधिक की गति पर जाने से पेट्रोल बरबाद होगा। भारतीय कारों पर किए गए परीक्षणों से यह सिद्ध हुआ है कि गाड़ी ८० किलोमीटर प्रतिघंटा की जगह ४० किलोमीटर चलाने से आप ४० प्रतिशत अधिक दूरी तय कर सकते हैं।

याद रखिए

१. बिना वजह गाड़ी तेज अथवा धीमी न करें : झटके से ब्रेक न लगाएँ। गाड़ी को कहाँ रोकना है, यह सब पहले से ही समझ जाए। परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि गति धीमी करने से यात्रा के समय में अधिक वृद्धि नहीं होती। इससे बस थोड़ा सा ही अंतर पड़ता है।

२. इंजन को स्वस्थ रखें : बड़ी संख्या में कारों पर किए गए परीक्षणों से पता चलता है कि नियमित रूप से इंजन की 'ट्यूनिंग' कराने से हम ६ प्रतिशत तक पेट्रोल बचा सकते हैं। अगर इंजन काला धुआँ छोड़ता है, उसकी खिंचाव-शक्ति कम है या वह तेल की अधिक खपत करता है तो उसे तुरंत किसी अच्छे गैराज में चैक कराएँ। देर करना महँगा पड़ सकता है, क्योंकि ओवरहॉलिंग के खर्च की अपेक्षा फालतू पेट्रोल और तेल फुँकने का खर्च कहीं अधिक होगा।

३. गाड़ी सदा सही गियर में चलाएँ : गलत ढंग से गियर बदलने से ईंधन की खपत में २० प्रतिशत तक की वृद्धि हो सकती है। कार को पहले गियर में ही स्टार्ट करें, सिवाय उस वक्त के जब आप गीली, दलदली जमीन अथवा ढलान पर हों, तब दूसरा गियर लगाएँ। शहर में कार चलाते वक्त ऊपरी गियर में तभी जाएँ, जब आपको पूरा विश्वास हो कि इंजन को ज्यादा कठिनाई नहीं होगी। जितनी जल्दी हो सके, सबसे ऊपरी गियर में आ जाएँ। ढलान से नीचे आते समय वही गियर ठीक है, जिसकी आवश्यकता उसी चढ़ाई पर ऊपर जाते समय पड़ती है। निर्माता की सिफारिशों का अनुपालन करना उचित है।

४. इंजन के गरम होने का इंतजार न करें : इसके स्थान पर इंजन गरम होने तक कार को निचले गियर में चलाएँ। 'चोक' का प्रयोग आवश्यकता से अधिक न करें। १० डिग्री सेंटीग्रेड और इससे कम तापमान पर ५ किलोमीटर अथवा उससे कम दूरी तक कार चलाने से पेट्रोल की प्रति किलोमीटर खपत दुगुनी हो जाती है। इसलिए छोटी दूरी के लिए बार-बार गाड़ी ले जाने के स्थान पर एक ही बार यात्रा करके अधिक-से-अधिक काम निबटा लें। अपनी कार को कभी इस तरह न पार्क करें कि आपको उसे ठंडी हालत में 'रिवर्स' करना पड़े। ऐसा करने से इंजन काफी मात्रा में पेट्रोल खर्च करता है। अगर आपकी कार में इंजन हीटिंग सिस्टम नहीं है तो लगवा लें।

५. ब्रेक का सही प्रयोग करें : बार-बार ब्रेक लगाकर कार चलाने से ईंधन व्यर्थ होता है। जब आप ब्रेक पर जोर लगाते हैं तो गरमी के रूप में काफी उपयोगी ऊर्जा व्यर्थ जाती है। एक अच्छा चालक पहले से ही समझ जाता है कि उसे कहाँ रुकना होगा। कार सर्विस कराते समय जाँच करें कि सभी पहिए आसानी से घूमते हैं या नहीं। जरूरत से ज्यादा कसे हुए ब्रेक पहियों के आसानी से घूमने में बाधा डालते हैं और इंजन को इसका सामना करने के लिए अधिक पेट्रोल खर्च करना पड़ता है। पहियों का एलाइनमेंट नियमित अंतराल पर कराते रहें।

६. क्लच से पाँव हटाकर रखें : क्लच का प्रयोग गियर बदलते समय ही करें। क्लच पर पाँव रखकर गाड़ी चलाने से ऊर्जा व्यर्थ होती है, और क्लच-लाइनिंग को हानि पहुँचाती है। चढ़ाई पर रुकने के लिए हैंड ब्रेक इस्तेमाल करें। क्लच और एक्सलरेटर को एक साथ दबाकर गाड़ी रोके रखना ठीक नहीं, क्योंकि इससे इंधन व्यर्थ जाता है।

७. एयर फिल्टर को नियमपूर्वक साफ करें : एयर फिल्टर धूल-मिट्टी को इंजन में जाने से रोककर इंजन को साफ रखता है। धूल से इंजन के पुर्जे जल्दी घिस जाते हैं और ईंधन की खपत बढ़ती है। जिस इंजन में एयर क्लीनर नहीं होता, उसका सिलेंडर बोर ४५ गुना जल्दी घिसता है। इंजन की हर 'ट्यूनिंग' के समय एयर फिल्टर साफ करें।

८. टायरों में हवा के दबाव का ध्यान रखें : टायर में हवा कम होने से टायर घुमाव के लिए अधिक बल की आवश्यकता होती है, जिससे पेट्रोल की खपत बढ़ जाती है।

इस प्रकार उपर्युक्त तरीकों को अपनाकर हम ऊर्जा का संरक्षण ऊर्जस्वी बन सकते हैं।

'गुरुकृपा', ब्रह्मपुरी, हजारी चबूतरा
जोधपुर-३४२००१ (राज.)
दूरभाष : ९४१४४७८५६४

बादल की ओट से

● नीरजा माधव

जानी-मानी साहित्यकार। सात कहानी-संग्रह, सात उपन्यास, तीन कविता-संग्रह, छह ललित-निबंध एवं अन्य विधाएँ, तीन पुस्तकें अंग्रेजी में, तीन अनुवादित पुस्तकें तथा कई उपन्यास, कहानी, कविता आदि पाठ्यक्रमों में शामिल। 'सर्जना पुरस्कार', 'यशपाल पुरस्कार', 'भारतेंदु प्रभा' सहित कई अन्य सम्मान। संप्रति कार्यक्रम अधिशासी, आकाशवाणी दूरदर्शन।

रुक जाता यम

देवता के सम्मुख
गुनगुनाई जा रही
कोई ऋचा
तुम्हारे लिए,

गवाक्ष पर आ-आकर बैठती
कोई नन्हीं चिड़िया
चुटकी भर चावल की आस में

बादल की ओट से
अर्घ्य के लिए तुम्हारी राह देखता
क्षितिज में लाल सूरज

गुड़हल की डाल पर हँसता
लाल डहाडह अकेला वह फूल
जोह में तोड़ लेने के

तुम्हारी उँगली पकड़
बाहर घूमने की जिद के साथ
प्रतीक्षा में मचलता नन्हा कान्हा

क्या इन प्रतीक्षाओं के बारे में
बता नहीं सके थे तुम यम को
अपनी जर्जर देह से निकलने से पहले?

क्योंकि रुक जाता वह भी
इतनी मखमली प्रतीक्षाओं के
पूरी हो जाने की प्रतीक्षा में
ओ मेरे पिता!

सपनों की जमीन पर

तुम अपने सपनों की जमीन पर
चलाते थे हल
चीरते थे धरती का सीना
हराई-दर-हराई,

सधे हाथों से
माँ गिराती जाती थी बीज
आँचल से निकाल
धीरे-धीरे
कुछ इतना कि
धरती के चिरे सीने को
चोट ना लगे

दो जोड़ी आँखों की नमी
काफी थी
सपनों के अँखुआने के लिए

पर सपनों की जमीन पर उगी
सपनों की फसल
कट ही जाती है
अपनी जमीन से
नहीं जुड़ी रह पाती,
पीपल, बरगद या आम की तरह
ओ मेरे पिता!

काँपती तर्जनी

अपना हस्ताक्षर करते भी
काँपती तुम्हारी तर्जनी में
सोचती हूँ
कितनी बला की शक्ति थी
जिसे थाम
हम लाँघ जाते
कितने दुर्गम, कँटीले रास्ते,

घूम आते मेले-ठेले
देख आते रावण का मरना
राम का वन-गमन
या कि
रामलीला में दशरथ का विलाप,

बारात के कानफोड़ू संगीत
और भीड़ में
खो जाने के डर से
और कसकर भींच लेते हम
तुम्हारी तर्जनी
जो कवच थी हमारी
बिल्ली की म्याऊँ से लेकर
भूत-प्रेत
और मुरदों तक के
डर के विरुद्ध।

हम खड़े होते थे तनकर
ईश्वर के भी समक्ष
बिना डरे
आज जब देखती हूँ
अपने आस-पास
अपने बेहद प्रिय
बूढ़े-बुढ़ियों का
एक-एक कर मर जाना

ढूँढ़ते हैं
उस कँपकँपाती
तुम्हारी तर्जनी को
एक बार फिर
कसकर पकड़ लेने को
अब मेरे झुर्रियों भरे हाथ
ओ मेरे पिता!

मधुवन, सा. १४/९६ छ ५
सारंगनाथ कॉलोनी
सारनाथ, वाराणसी-२२१००७
दूरभाष : ९७९२४११४५१

पत्ता टूटा डाल से

● नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

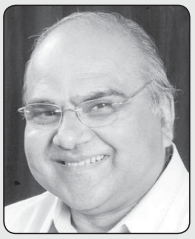

सुप्रसिद्ध साहित्यकार। अब तक चौदह ललित-निबंध-संग्रह, छह संपादित ग्रंथ, तीन अनूदित व भारतीय कला पर चौदह कृतियाँ प्रकाशित। मुकुटधर पांडेय पुरस्कार, कलाभूषण सम्मान, समशेर सम्मान, नरेश मेहता वाङ्मय सम्मान, वागीश्वरी पुरस्कार के साथ 'गेयर एंडरसन संग्रह' पर शोधकार्य के लिए लेवेनहेम (इंग्लैंड) व नैशनल गैलरी ऑफ ऑस्ट्रेलिया द्वारा सम्मानित।

पतझर आने पर वृक्षों में लगे पीले पत्ते धरती पर गिरने लगते हैं। पत्तों की नियति यही है, कोंपलें फूटती हैं, हरे पत्तों में परिवर्तित होती हैं और फिर पीले पत्ते के रूप में झर जाती हैं मनुष्य की तरह। पत्ते और मनुष्य की इसी एक जैसी नियति को देखकर कबीर बोल पड़े थे—

पत्ता टूटा डाल से, ले गई पवन उड़ाय।
अबके बिछड़े नाहि मिलें, दूर पड़ेंगे जाय॥

यह टूटना शाश्वत है। आसमान में तारे टूटते हैं और धरती पर पत्तों से पत्थर तक, लेकिन कुछ हैं जो ऐसे टूटते हैं कि न तो वे टूटते दिखाई देते हैं और न ही उनके टूटने की आवाज सुनाई देती है, जैसे मन!

टूट गए और टूटते दिखाई दे गए, टूटने की आवाज सुनाई दे गई तो फिर टूटना क्या हुआ? जितना बड़ा टूटना होता है, उतना ही विराट् होता है उसका मौन। कृष्ण ने जब प्रभास में पीपल की जड़ों पर अपनी देह को टिकाया तो अपने सारे अलंकरणों और आयुधों को बिदा कर दिया। पांचजन्य शंख, कौमोदकी गदा, नंदन खड्ग से लेकर शार्ङ्गधनुष और सुदर्शन चक्र तक सब स्वर्ग चले गए। शिकारी के तीर से घायल हुए, वह जब रोता हुआ, पश्चाताप करता हुआ आया तो उसे भी विदा कर दिया। अब निपट अकेले हो गए कृष्ण, केवल निस्सीम मौन उनका साथी बना। कोई साक्षी नहीं रहा, इस सबकुछ तोड़नेवाले की टूटन का। यटी टूटन सच्ची टूटन थी। कृष्ण की लीलाओं को देखकर हम आज भी विभोर होते हैं, लेकिन कृष्ण का टूटना किसी ने नहीं देखा और टूटन उस राधा की भी किसी ने नहीं देखी, सुनी होगी जिसे कृष्ण यमुना के सूने तटों को सदैव के लिए एकांत में सिसकने के लिए उसे सौंप आए थे।

फटती हुई धरती के गर्भ में अपने एकाकीपन को लिये सीता की और ऐसे ही एकाकीपन को समेटे सरयू की अथाह जलराशि में अकेले समाधिस्थ होते राम की टूटन का कौन साक्षी है? और एक टूटन बुद्ध की है। सांसारिकता ने जब उनके मन को तोड़ा तो वे संन्यासी हुए। बाद में उनसे उन साथियों ने भी मन मोड़ लिया, जो उनके शिष्य बने थे। जब वे निपट अकेले हो गए, तब ध्यान करते सिद्धार्थ को बोधि वृक्ष के नीचे बुद्धत्व मिला। लेकिन उनके मन की उस टूटन के लिए तो शब्द आज तक नहीं ढल पाए, जिसे अजंता के कलाकार ने वहाँ की भित्तियों पर उकेर दिया है। मन की वह टूटन यशोधरा की है, जिसे सद्यःजात राहुल के पास सोता छोड़कर बुद्ध ने सांसारिकता को त्याग दिया था। अजंता के चितेरे ने अजंता की भित्ति पर उसी राहुल को चित्रित किया है, जिसे भिक्षा में यशोधरा भिक्षापात्र हाथ में थामे द्वार पर निष्कंप खड़े बुद्ध को सौंप रही है। एक संन्यासी को उसी के सांसारिक सृजन को सौंपते हुए यशोधरा की आँखों में उसके मन की टूटन का जो बिंब अजंता के चितेरे ने रच दिया है, उससे ज्यादा टूटन की वाचाल रचना इस संसार में दूसरी नहीं है। इस मौन टूटन के जाने कितने उदाहरण दिए जा सकते हैं।

बाद के समय का सबसे चर्चित उदाहरण है तुलसी का। उनका भी मन रत्नावली ने तोड़ दिया था। लोग कहते हैं रत्नावली के उपालंभ से तुलसी का मन टूटा तो उनकी आसक्ति विरक्ति में बदल गई। नहीं, वास्तव में तुलसी की आसक्ति का केंद्र बदल गया। प्रेम की परिधि तो वही रही, लेकिन प्रेम का क्षेत्रफल निस्सीम हो गया। रत्नावली के प्रति आसक्ति राम के प्रति आसक्ति में बदल गई। प्रेमिका के प्रति आसक्ति की जो तीव्रता होती है, वही तीव्रता और सघनता राम के प्रति आसक्ति में बदल गई, तुलसी के मन से पुकार उठी—

कामहि नारि पियारि जिमि, लोभी प्रिय जिमिदाम।
तिमि रघुनाथ निरंतर, प्रिय लागहु मोहि राम॥

और तुलसी केवल रामचरित के सृष्टा ही नहीं, युगों के युगदृष्टा हो गए।

एक और उदाहरण बिल्वमंगल का है। जिनकी कहानी भी तुलसी की कहानी की ही तरह है। वे चिंतामणि नामक वैश्या पर आसक्त थे

और उससे मिलने अपने पिता के श्राद्ध के दिन अँधियारी रात में उफनती नदी को मुरदे की पीठ पर बैठकर पार करते हुए तथा साँप को रस्सी समझकर उसे पकड़कर चिंतामणि के घर पहुँच गए। चिंतामणि ने उन्हें फटकारा और कहा कि यदि वे ऐसी आसक्ति कृष्ण में दिखाते तो उनकी मुक्ति हो जाती। तब वे विरक्त होकर घर छोड़कर चल दिए, किंतु रास्ते में एक ब्राह्मण स्त्री को देखकर पुनः अनुरक्त हो गए, लेकिन उसी समय उन्हें इतनी ग्लानि हुई कि दो काँटों से उन्होंने अपनी दोनों आँखें फोड़ लीं और कृष्ण के गीत गाते वृंदावन चल दिए। कहा जाता है कि उन्हें गोपवेश में कृष्ण नियमित भोजन कराते थे। केरल के इस दाक्षिणात्य ब्राह्मण ने अपने 'कृष्णकर्णामृत' में ऐसी कृष्णलीला गाई कि कृष्ण का बालरूप हमारी आँखों में हमेशा के लिए विराज गया।

करारविन्देन पदारविन्दं मुखारविन्दे विनिवेशमन्तम्।
वटस्य पत्रस्य पुटे शयान बालं मुकुन्दं मनसा स्मारामि॥

बिल्वमंगल के इसी श्लोक में रचे हुए बालमुकुंद में हम अपने नवजात शिशु की छवि देखते हैं।

इस मौन टूटन के जाने कितने और उदाहरण दिए जा सकते हैं। लेकिन यह एक विलक्षण सच है कि जिसके मन की टूटन जितनी गहरी और मूक है, वह उतना ही सृजनशील है। राम से कृष्ण तक, सीता से राधा और यशोधरा तक। राम, कृष्ण और बुद्ध की वाचालता ने तो इतिहास की गरिमा और देश के दर्शन को रचा, लेकिन सीता, राधा और यशोधरा के मौन ने तो हमारी संस्कृति के मानक रच दिए। मानक इतिहास और दर्शन से कहीं बहुत ऊँचे होते हैं।

राम, कृष्ण और बुद्ध से गहरी टूटन तो सीता, राधा और यशोधरा की है। राम, कृष्ण और बुद्ध ने तो अयोध्यापति, द्वारकाधीश और संन्यासी होना स्वयं चुन लिया था, लेकिन असली ठोकर तो सीता, राधा और यशोधरा को लगी थी। इनमें से एक को रानी होते हुए एक ऋषि की कुटिया में राजपुत्रों को जन्म देना पड़ा था। एक की यही नियति थी कि वह यमुना के उदास तट पर बैठकर सिसकती हुई उस रथ के लौटने की राह देखती, जो गोकुल के पथों को पार कर उसे सदैव के लिए सूना छोड़कर चला गया था, जिस रथ को कभी गोकुल वापस नहीं लौटना था और एक के भाग्य में कपिलवस्तु के राजमहल में वनवासी जीवन जीते हुए अपने इकलौते पुत्र राहुल को बिना पिता की छाँह में पालने-पोसने का दायित्व निभाना पड़ा था।

मन के टूटने का यह सिलसिला अछोर है। जाने कितनी कहानियाँ, कितनी किंवदंतियाँ और कितने वृत्तांत! इतिहास की देह में यदि हमारे जैसा कंठ होता तो उससे झरनेवाली वाणी कभी विराम नहीं लेती। यहाँ यह भी सवाल उठता है कि क्या केवल टूटे मनवाले ही सर्जक होते हैं? नहीं, ऐसा नहीं है। आज जो दुनिया का रूप है, इसे गढ़कर उन्होंने भी सँवारा है, जिनके मन टूटे नहीं रहे होंगे। हकी कत तो सिर्फ इतनी है कि सृजन के लिए मन चाहिए। मन न हो तो सर्जना नहीं होती। मन के न टूटने पर इतना भर होता है कि टूटने से जुड़ी गीली स्मृतियों को सहेजने से मुक्ति मिल जाती है और यह सहेजना भी सृजन बन जाता है।

सा अ

८५, इंदिरा गांधी नगर,
आर.टी.ओ. कार्यालय के पास,
केसरबाग रोड, इंदौर-९ (म.प्र.)

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

झरबेरा

● वेद मित्र शुक्ल

''बेटा, तुम्हारे पिताजी तो पाँच दिन पहले ही गाँव पहुँच गए थे। तुम्हें ऑफिस से छुट्टी न मिलने के कारण हम समय से तुम्हारी दादी के अंतिम समय पर नहीं पहुँच पाए, पर कम-से-कम अब हम उनके बाकी बचे अंतिम संस्कार में शामिल हो लेंगे।''

दिल्ली से गाँव की ओर यात्रा के दौरान दु:ख के पलों से दो-चार होती माँ की बातों को सुनता और उसकी हाँ में हाँ मिलाता चंदन अपनी माँ के साथ कुछ ही देर में गाँव के बस अड्डे पर पहुँचने वाला था। चंदन बचपन में दादी-दादा और माताजी के साथ गाँव में ही रहता था। पिताजी गाँव से ४० कि.मी. दूर जिला मुख्यालय के कस्बे में सरकारी नौकरी में थे। सप्ताह में एक दिन वे परिवार की सुध-खबर लेने गाँव आ जाया करते थे। चंदन ने शुरुआती पढ़ाई गाँव के विद्यालय में और जूनियर की शिक्षा गाँव से ३ कि.मी. दूर एक जूनियर हाईस्कूल में पूरी की। कक्षा सात में वह पढ़ ही रहा था कि उसके पिता को देश की राजधानी दिल्ली में एक ऊँची नौकरी मिल गई। जैसे-तैसे चंदन ने आठवीं कक्षा उत्तीर्ण की और फिर पारिवारिक और सामाजिक दबाव के कारण कि बच्चे की पढ़ाई अच्छी हो, इस नाते वह और उसकी माँ पिताजी के साथ दिल्ली चले गए। अतिव्यस्तता एवं सुरक्षा के कारणों से पिताजी तो महीने-दो महीने में दादा और दादीजी की सुध लेने गाँव आ जाया करते थे, पर घर में उसकी माँ और उसका कई सालों तक गाँव में आना न हुआ। यहाँ तक कि चंदन पढ़-लिखकर दिल्ली में एक अच्छी नौकरी पा गया, परंतु समय-चक्र बदलने के कारण जब उसकी दादीजी का स्वर्गवास हुआ तो माताजी के साथ उसका कई वर्षों बाद गाँव लौटना हुआ।

गाँव लौटते हुए चंदन सोच रहा था कि इतने समय बाद उसके लँगोटिया साथी मदन, शीतल, छबीले, फुठहे, झिंगोलिया कैसे होंगे? उसके गाँव की मुँहबोली बहनें रमलखिया, सीतापती, शिवरानी आदि जो उसे 'चंदू-चंदू' कहकर चिढ़ाया करती थीं, मुँह में दही पोतकर मजाक उड़ाती थीं, वे किस हालत में होंगी? बाबा की काली गाय, जो भोजन का अग्रभाग देने जाने पर प्यार से हुरपेट लिया करती थी, जाने वह अब

सुपरिचित लेखक। हिंदी-अंग्रेजी अनुवाद के साथ कविता, कहानी, गजलें, सॉनेट, बाल-साहित्य, शोध-आलेख आदि हिंदी व अंग्रेजी, दोनों भाषाओं में लेखन। संप्रति दिल्ली विश्वविद्यालय के राजधानी महाविद्यालय में प्राध्यापक।

है या नहीं? चरनी के दो बैल, जो नाँद से मुँह उठाए दरवाजे की तरफ देखा करते थे, पता नहीं उनका क्या हाल होगा? दादा और दादी, जो उसके खाने-पीने में छोटी-छोटी बातों पर झगड़ने लगते थे, दादी तो अब रही नहीं, दादाजी के दिन उनके बिना कैसे कट रहे होंगे? यही सब सोचते-सोचते गाँव से तीन कि.मी. दूर बस अड्डे पर कब उतरा, उसे पता ही नहीं चला।

बस अड्डे पर दादाजी ने उसको और माताजी को लाने के लिए ट्रैक्टर-ट्रॉली भेजी थी। ट्रैक्टर का चालक और कोई नहीं बल्कि उसका मित्र फुटहा ही था। दोनों ने एक-दूसरे को पहचानने में देर न की—

''अरे, फुटहे भाई कैसे हो?''

''बस, जैसा था। और तुम बताओ···''

बातचीत करता हुआ फुटहा ट्रॉली पर सामान लादने में लग गया। चंदन भी सामान उठाने-धरने में उसकी मदद करता हुआ पहले तो अति उत्साह में पुराने मित्र के साथ ट्रॉली पर बैठकर चलने को तैयार हो गया, पर दूजे ही पल उसे न जाने क्या सूझी कि उसने सामान सहित माताजी को तो ट्रॉली पर बैठा दिया, किंतु स्वयं गाँव पैदल ही जाने का सोचा। इस पर फुटहे ने अपने पढ़े-लिखे शहरी दोस्त को थोड़ा-बहुत समझाने और रास्ते की कठिनाइयाँ बताने की कोशिश तो की, लेकिन चंदन के न मानने पर वह माताजी के साथ अपनी राह निकल आया।

चंदन गाँव जानेवाली सड़क पर सौ मीटर ही बढ़ा होगा कि उसे लगा जैसे शहरोंवाली कंक्रीट की सड़क उसके पाँवों के तलुओं से

चिपक सी गई है।

'अरे, बस अड्डे से तो गाँव के लिए मिट्टी वाला रास्ता हुआ करता था।' वह मन-ही-मन बुदबुदा उठा, 'आखिर, विकास की योजनाएँ गाँव के रास्ते पर आ ही गईं। चलो, अच्छा है, गाँवों से बाजार तक आने-जाने के रास्ते सुगम हो रहे हैं।'

लेकिन थोड़ा और आगे बढ़ने पर उसने महसूस किया कि शायद उसके गाँव को जानेवाला रास्ता खो सा गया है। वह एक कडुवे अनुभव से गुजरा। वास्तव में, गाँव के लिए सड़क पर उसे दो कि.मी. जाना था। पहले सड़क के दोनों तरफ छायादार बड़े-बड़े आम के पेड़, जो साल के दस महीने राहगीरों को छाया देते और दो महीने छाया के साथ फल भी, उनका नामोनिशान नहीं था। बैसाख महीने की तपती धूप में दो कि.मी. पैदल चलना बहुत भारी पड़ रहा था। जैसे-तैसे उसने जलते-फुँकते वह कंक्रीट का रास्ता पार किया। जब सड़क उसने छोड़ी तो एक चौड़ी लीक पर चलना शुरू किया। इसी लीक से जाने पर गाँव एक-सवा कि.मी. पर था, परंतु कुछ ही दूर चलने पर पता चला कि गाँव और सड़क के बीच में एक नहर निकल गई है। अब गाँव पहुँचने के लिए तीन कि.मी. और नहर के किनारे-किनारे चलने पर नहर पार करने का पुल मिलेगा। फिर दो कि.मी. घूमकर गाँव आना होगा। इस प्रकार तीन कि.मी. का रास्ता आठ कि.मी. का हो गया था। पैदल चलने में उसके पुराने रास्ते के साथी पगडंडियाँ, आँवले के पेड़, काली-काली जामुनों से लदी हुई पेड़ की टहनियाँ सब कहीं खो गए थे। किसी तरह से हाँफते-काँपते वह गाँव पहुँचा। गाँव से जूनियर हाईस्कूल जो बस अड्डे पर ही था, जहाँ कि वह कभी घर से आधे घंटे में दौड़कर पहुँच जाता था, उस आधे घंटे की जगह उसे आज ढाई-तीन घंटे लगे।

गाँव पहुँचकर दादाजी के चरण छूने के बाद उसे और धक्का लगा, जब उसने देखा कि द्वारे पर न कोई गाय और न कोई बैल है। एक बेल का पेड़, जिसकी बेलपत्री तोड़कर दादीजी सुबह स्नान करके शंकरजी पर चढ़ाया करती थी, वह बेल का पेड़ भी नदारद था। दरवाजे पर ठूँठ सरीखे ट्रैक्टर और ट्रॉली खड़े थे। थका हुआ चंदन कुछ खा-पी करके जैसे-तैसे सो गया।

दूसरे दिन चंदन सुबह सोकर उठा तो नित्यकर्म से निवृत्त होते-होते उसने अपने लड़कपन के सारे दृश्यों को खुद के सामने से गुजरते देखा। वह जब तक गाँव में था, उसी दौरान दु:ख की घड़ी में पारिवारिक अपेक्षाओं को पूरा करते हुए भी वह अपनी सारी यादों को फिर से एक बार जी लेना चाहता था। गाँव में बीते दिनों की यादें उसके भीतर नदियों की मानिंद कलकल करती बह रही थीं।

पुरानी रुटीन के अनुसार अमोलवा ताल तक वह सुबह-सबेरे दौड़ने निकल गया। तालाब तक पहुँचते-पहुँचते उसने देखा कि १३-१४ वर्ष पहले जो गहरा तालाब था, वह लगभग पट चुका था। तालाब के किनारे के पेड़ जो महुवा, जामुन, आम, विलायती इमली आदि के लगे हुए थे, वे खत्म हो चुके थे। जिस जामुन और महुआ पेड़ के नीचेवाले स्थान पर वह और उसके दादाजी कभी कुछ देर बैठकर सुस्ताया करते थे, वहाँ वह कभी खड़ा होता तो कभी बैठ जाता। उसे खुद को यह विश्वास दिलाते हुए बड़ी मुश्किल हुई कि वे गायब हो चुके थे। सुस्ताने की मनचाही जगह न मिल पाने के कारण उसे उल्टे पाँव गाँव लौटना पड़ा।

रास्ते में उसे बचपन का पुराना मित्र छबीले मिल गया। बहुत दिनों बाद दोनों की भेंट हुई थी। चंदन तो खुशी से फूला नहीं समाया, पर इतने दिनों के बाद वह भी विशेष कपड़ों में, यानी ट्रैक सूट और जूतों में अपने पुराने मित्र को देखकर, छबीले जो लुंगी और बनियान में था, जल्दी सहज नहीं हो पाया था। देर तक दोनों पुराने दिनों की सुनहली यादों को साझा करते रहे। बातों ही बातों में तालाब के छिछले हो जाने का कारण पूछने पर पता चला कि नए कानून के कारण सरकार तालाब की मिट्टी ही नहीं निकालने देती है और धीरे-धीरे बरसात में बाहर से मिट्टी बहकर आने के कारण तालाब लगभग खत्म हो जाने के कगार पर है। इसके पीछे चंदन के ध्यान में कारण तो और भी कई आए, पर उसने जो मुख्य बात समझी, वह यह कि किसी भी समस्या को लेकर लोग एक-दूसरे पर ही उँगली उठाने में कुछ ज्यादा ही आगे हैं।

जैसा कि गाँव में और सामान्य हिंदुओं में मृत्यु के बाद तेरह दिन तक कई संस्कार होते हैं और परिवार को उन अनुष्ठानों में पूरी तरह से जुटना भी पड़ता है, चंदन उन सबमें अपनी सहभागिता रखते हुए भी समय निकालकर गाँव के अपने पुराने साथियों व जाननेवालों से मिलने की कोशिश करता रहा। गाँव के चारों ओर खेत-बाग, पुरानी पगडंडियों आदि को देखने, घूमने निकल जाया करता।

इसी बीच उसे यह भी पता चला कि पुराने साथियों शीतल, झिंगोलिया और मदन, जिनमें शीतल और मदन की तो शादी हो चुकी थी, उनके बच्चे भी थे, पर झिंगोलिया अभी कुँवारा था। गाँव में किसी के शादी-ब्याह में थोड़ा विलंब हो जाए तो लोग समझते कि उसमें कोई-न-कोई खोट जरूर ही होगा और अगर किसी बड़े परिवार से न जुड़ा हो तो पक्का ही ऐबी होगा। झिंगोलिया को भी गाँव के लोग आवारा ही मानते थे। उसके बारे में फुटहे से पूछने पर वह भी कह बैठा कि झिंगोलिया तो गाँव में आवारा की तरह घूमता रहता है। चंदन को फुटहे के मुँह से ऐसा सुनकर अचरज हुआ। उसने अपना माथा सिकोड़कर फुटहे को आड़े हाथों लेते हुए कहा, ''अरे फुटहा! झिंगोलिया तुम्हारा लँगोटिया यार है। तुम्हारे मुँह से यही सुनना बाकी था। हद कर दी तुमने···''

''हाँ-हाँ, लँगोटिया यार है, लेकिन मैं ही नहीं सब कहते हैं। तो मैं

भी···'' कहते हुए वह ही-ही-ही करके हँस पड़ा था।

गाँव में टहलते-घूमते हुए चंदन को एक दिन झिंगोलिया भी मिल ही गया। उसमें तो अभी वैसा ही अल्हड़पन था, जैसा वह छोड़कर दिल्ली गया था। मिलते ही वह चंदन से गर्मजोशी के साथ लिपट गया। घंटों बतियाने के बाद भी चंदन को कहीं से नहीं लगा कि उसके दोस्त को कोई कैसे भी और कहीं से भी आवारा कह सके। हाँ, उसकी बातों, उसकी हँसी, उसकी चाल-ढाल में जो खुलापन था, शायद गाँववालों को वह रास नहीं आता था। झिंगोलिया ने चंदन को गाँव दिखाने की पेशकश रखी। इसपर चंदन जोर से हँस पड़ा और बोला, ''यार झिंगोलिया, गाँव! कौन सा गाँव दिखाओगे? पहले जैसा तो अब कुछ रहा नहीं और जो नया आज का गाँव है, उसे मैंने आते ही देख लिया। शहरों के विकास की नकल में अब गाँव न तो गाँव और न ही शहर लगता है।''

चंदन को सीरियस होते देख झिंगोलिया ने अपने अंदाज में उसे टोका, ''अरे, माना कि बहुत पानी बह गया है, मगर हाथ डालकर ढूँढ़ोगे तो तलहटी में अब भी कई पुराने पत्थर मिल जाएँगे, यारा! विश्वास नहीं होता तो अपने झिंगोलिया के साथ चलो और देखो एक बार फिर से गाँव को।''

झिंगोलिया का ऐसा सकारात्मक रुख पाकर चंदन का मन प्रसन्न हो गया। यों तो उसे यह सब झिंगोलिया की मात्र डॉयलागबाजी लगी, फिर भी वह गाँव को उसकी नजरों से देखने चल पड़ा। गाँव के किनारे नहर पर बच्चों और युवाओं को नहाते देखा तो दोनों को बहुत आनंद आया। उन्हें अपने ताल-तलैया याद आ गए। पुरानी यादों में खोया-खोया चंदन बोल पड़ा, ''भाई, गाँव से दो-तीन फर्लांग दूरी पर आठ-दस एकड़ में फैला वह सामान्य जमीन से कुछ ऊँचा टीलेवाला स्थान याद है न। जंगलनुमा झाड़ियों से भरी जमीन। जिसमें कोई खेती-पाती नहीं होती थी। गाँव के हम ज्यादातर लड़के और जानवर आदि सहित उन्हें चरानेवाले वहाँ हुआ करते थे।''

झिंगोलिया बीच में टोकते हुए बोला, ''अरे-अरे, भाई को झरबेला याद आ गए। सच में, वहाँ की खास बात तो यह थी कि पूरे टीले पर बड़े-बड़े पेड़ तो थे ही, पर बीच-बीच में उसके साथ झाड़ीनुमा पौधे पूरे में फैले थे। झाड़ियाँ कँटीली होती थीं। हम सब काँटों की परवाह न करके उनमें बेरीनुमा फलों को बड़े चाव से खाते थे।''

पास्ट टेंस में चल रहे झिंगोलिया के आख्यान से चंदन चौंका, ''क्या-क्या कहा, अब वो सब झरबेरे के पेड़ नहीं रहे··?''

''अरे, चंदनजी, आप तो बिल्कुल शहरी हो गए। अपने झरबेले को झरबेरा कहने लगे। हाँ, तुम सही समझे। अब तो वहाँ मेंड़बंदी करके फार्महाउसनुमा खेती-पाती शुरू हो गई है। न रहा वो, न रहे वे दिन।''

चंदन को याद आया कि कैसे वह अपनी मुँहबोली बहनों रमलखिया, सीतापती और शिवरानी के द्वारा घर के लिए चुने गए झरबेरे रास्ते में ही उन्हें तंग करके खा लिया करता था। असल में गाँव के कुछ परिवारों में औरतें उन बेरियों को इकट्ठा कर उन्हें सुखाकर और फिर कूटकर मसाले डालकर टिक्कियाँ बना लिया करती थीं। गरमी के महीने में इन टिक्कियों को खाकर और बाद में छककर पानी पीकर गाँव के लोग लू से बचाव करते थे।

झिंगोलिया के साथ घूमते-टहलते जब रास्ते में टीला वाला वह स्थान आया तो चंदन को यह देखकर बड़ा अचंभा हुआ कि सच में अब वहाँ न कोई झाड़ी थी, न कोई झरबेरी और मकोइया का पौधा। जो ऊँचे-ऊँचे पेड़ थे, वो भी गायब हो चुके थे और पूरे इलाके की मेंड़बंदी करके फसल उगाई जा रही थी। सात-आठ दिन के प्रवास में चंदन को अनुभव हुआ कि गाँव को फिर से हरा-भरा बनाना चाहिए।

घूमते-घामते जब वे गाँव के भीतर पहुँचे तो दोनों को ही थकान व भूख-प्यास का अनुभव हुआ। वे गाँव के एक तरफ बने अपने घरों को न जाकर अपने बचपन की मुहँबोली बहन शिवरानी के घर पहुँच गए। शिवरानी की माँ चंदन की काकी हुई। काकी ने बताया कि शिवरानी तो ससुराल में है और सुखी है। उसके दो बच्चे भी हैं। सावन-झूला में घर आएगी। इसी बीच यह भी पता चला कि रमलाखिया और सीतापती की भी शादी हो चुकी है। इतनी जानकारी साझा करते हुए काकी के वात्सल्य ने समझ लिया कि चंदन और उसका साथी झिंगोलिया भूखे-प्यासे और थके हैं। सो वह दोनों को खाट पर बैठाकर लोटे में साफ जल और एक कटोरे में कुछ काली-काली बिस्कुट जैसी टिक्कियाँ लाई। टिक्कियाँ सामने आते ही चंदन बल्लियों उछलते हुए बोल पड़ा, ''काकी, ये तो झरबेरी की टिक्कियाँ हैं। अब झरबेरी की झाड़ियाँ रही नहीं, फिर ये कहाँ से?''

काकी ने बताया, ''बेटा, जहाँ झरबेरी उगती थीं, उस जमीन को तो एक शहरी ठेकेदार ने खरीद लिया और जमीन को बराबर करवा खेती शुरू कर दी। अब ये सब झरबेरी के बिस्कुट कहाँ से आए ये मत पूछ, बस खा ले। धरती माता कुछ-न-कुछ प्रबंध जरूर करती है, लेकिन सच है, अब वो पुराने दिन नहीं रहे। अब तो छोटी-छोटी शारीरिक दिक्कतें होने पर भी हमें शहर दौड़कर जाना पड़ता है। नहीं तो पहले छोटी सी चोट लगने या सर्दी-जुकाम होने पर, फोड़ा-फुंसी होने पर तमाम औषधियों के पौधे व घासें इन्हीं झाड़ियों, गाँव की मेंड़ों पर, बगीचों में मिल जाया करती थीं और हम सब गाँववाले स्वस्थ और सुखी रहते थे। अब तो ऐसा जमाना आया है कि सब्जी भी बाजार से लानी होती है।''

काकी से यों तो चंदन की और भी कई बातें हुईं, लेकिन असल गाँव के खोने का दर्द काकी के मन में भी देख-परखकर वह और दुखी

हुआ। फिलहाल, वक्त ज्यादा होने को आया था, सो उसने झिंगोलिया और काकी दोनों से विदा लिया। मौका भाँपकर समय पा इन सब बातों का जिक्र चंदन ने दादाजी से भी किया। दादी के न रहने पर अपने को अकेला महसूस कर रहे दादाजी बहुत दुखी थे। फिर भी उन्होंने चंदन को बताया, ''बेटा चंदन, पुराना गाँव तो अब नहीं लौट सकता, लेकिन पुरानी यादों के सहारे और नई सोच व तकनीक की मदद से गाँव को फिर से आकर्षक और बढ़िया बनाया जा सकता है। कठिनाई है तो यह कि गाँव के अधिकतम युवा रोजी-रोटी के चक्कर में और जीवन की तमाम आधुनिक सुविधाओं की लालच में बाहर चले गए। अब युवाओं के बिना बचे हुए बूढों, बच्चों-महिलाओं से गाँव वैसा नहीं हो सकता जैसा हम सोचते हैं।''

चंदन को यह बात घर कर गई थी। सोच-विचार में डूबे हुए उसने खुद को कई सवालों से घिरा पाया। सच में, समर्थ युवा अपने घर-गाँव से दूर शहर जाकर यदि अपनी कमाई और सुख-सुविधाओं में ही लिप्त हो जाएँगे तो गाँव को परंपरा से जोड़कर विकास की राह पर कौन ले जाएगा? विकास की सरकारी योजनाओं से गाँव का कुछ यों विकास कौन करवा पाएगा कि गाँव आधुनिक भी हो और साथ में झरबेरे की परंपरागत पौध भी बची रहे? केवल और केवल मिट्टी से जुड़ा एक समर्थ युवा। हाँ, गाँव का युवा गाँव के लिए।

आठ दिन बाद जब उसके माता-पिता दिल्ली जाने लगे और उसका भी सामान ट्रॉली पर रखा जाने लगा तो वह बहुत उधेड़बुन में था। बस-अड्डे पहुँचकर जब बस पर चढ़ने को हुआ तो उन सबको विदा करने आए दादाजी को प्रणाम करने के लिए चंदन ने ज्यों पाँव छूने को नीचे खुद को झुकाया, उसकी आँखों में बिना छाँहवाली जलती हुई कंक्रीट की सड़क तैर गई। गाँव की ओर जाती हुई आग की एक लकीर ताल-पोखरों को सुखा रही थी तो दूसरी ओर फलदार घने पेड़ों को ही नहीं, झरबेरे तक को जलाए और झुलसाए डाल रही थी। जब तक वह अपने दिमाग को स्थिर कर पाता, उसे लगा कि वह गश खाकर गिर ही पड़ेगा। फिर तो उसने दादाजी के पाँव अपने हाथों में भींच से ही लिये। पास ही खड़ी माँ उसे सँभलने के लिए कहे, उससे पहले ही चंदन दादाजी के चरणों के आगे झुके हुए ही बोल पड़ा, ''मैं दिल्ली नहीं जाऊँगा, आपके साथ ही गाँव में रहूँगा।''

चंदन का यह निर्णय सुनकर बस-अड्डे पर छोड़ने आए गाँव के लोग, उसके पुराने साथी और जिसने भी सुना, वे सब स्तब्ध रह गए। भावविह्वलता का ऐसा पल भी आया, जब चंदन को दादाजी ने अपनी बाँहों में भरकर गले से लगा लिया था।

अंग्रेजी विभाग, राजधानी महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय, राजा गार्डन,
नई दिल्ली-११००१५
दूरभाष : ९९५३४५८७२७

शब्द ईश्वर

कविता

• पुरुषोत्तम व्यास

शब्द-शब्द

शब्द-शब्द
बूँद-बूँद
शब्द सागर···

शब्द अंबर
बादल···

ठहरा-ठहरा
दौड़ा-दौड़ा···
मौन अपने-आप में
सँभले···

भोर में नहाए
ओस में चमके
हृदय के भाव पर
कविता में खिलखिलाए

शब्द ईश्वर
नभ में टिमटिमाएँ···

जीवन···

वह पुल के कोने में
बैठा था···
थे उसके साधारण ही कपड़े
नहीं थी उसके पैरों मे चप्पल
वह मुझे देख मुसकराया···
मैं उसे देख मुसकराया

झूठ बोलने से

झूठ बोलने से
सच्चे बन जाओगे

झूठ बोलने से
अच्छे बन जाओगे

झूठ बोलने से
सम्मान पा जाओगे

झूठ बोलने से
प्रेम पा जाओगे
झूठ बोलने से
पुण्यवान बन जाओगे

झूठ कहाँ तक चलेगा
जरा सोचो···
झूठ बोलकर क्या
मृत्यु को भी धोखा दे जाओगो?

मुझे भरोसा है

नीले अंबर पर
असुर वृत्तियों के बीच में
अपनी सात्त्विकता बनाए रखूगाँ

चिड़ियाँ गाएँगी
मेघ बरसेंगे
मैं बैठा रहूँगा सरिता किनारे
दीप लेकर।

एल.जी. ६३, नानक बगीचे के पास
शांतीनगर कॉलोनी, नागपुर(महाराष्ट्र)
दूरभाष : ८०८७४५२४२६

लोकतंत्र की शोभा : राजनीति या लोकनीति?

● अखिलेश सिंह श्रीवास्तव

ग्वालियर से मेरे अग्रज साहित्यिक मित्र डॉ. अनिल महेंदले ने चलभाष-वार्त्ता के दौरान एक ऐसा विषय उठाया, जिससे मेरे मन में चिंतन के नए स्वर गूँज उठे। श्री महेंदले ने कहा, 'भारत एक लोकतांत्रिक देश है, ऐसे में इसकी संचालन व्यवस्था राजनीति होनी चाहिए अथवा लोकनीति?' विषय बहुत बड़ा और महत्त्वपूर्ण है। इसपर जन-चिंतन अनिवार्य है, अत: इस आलेख के माध्यम से मैं इसे सार्वजिनक करता हूँ। राष्ट्र प्रथम है, इसके बाद अन्य कुछ और, जो इस भावना से असहमत हैं, मैं उनके देशप्रेम से असहमत हूँ।

विश्व के मानचित्र में भारत लोकतंत्र का ऐसा अद्‌भुत मंदिर है, जहाँ भाषा-बोली अंतर, भातृ-भावना, सांस्कृतिक-सामाजिक अनेकताएँ, मानवीय संवेदनाएँ विभिन्न मार्गों से होती हुई एकता के चतुर्भुज संगम में समाहित हो जाती हैं और निर्माण करती हैं एक विशाल जनतंत्र का। ऐसे में यहाँ राजनीति का क्या स्थान? क्या भारतीय सरकार का आधार राजनीति होना चाहिए अथवा लोकनीति? शब्दों में बहुत शक्ति होती है, अत: इनका प्रयोग सोच-समझकर करना चाहिए। कहा जाता है न, 'शस्त्र से निर्मित घाव भर जाते हैं, परंतु शब्द-निर्मित घाव नहीं भरते।' बड़े संघर्षों से हमने स्वतंत्रता प्राप्त की है, लेकिन न जाने क्यों स्वातंत्र्योत्तर नीति-नियम निर्माण में भारतीय भावना का वह रूप नहीं दिखा, जो आवश्यक था, इसीलिए भीषण परिणाम भी हमने देखे। यहाँ पुरानी त्रुटियों की वीक्षणा नहीं की जा रही, बल्कि विचार अभिव्यक्ति के संवैधानिक अधिकार के अंतर्गत शाब्दिक-अभिव्यक्ति सुधार का परामर्श दिया जा रहा है। सत्य ही तो है, जिस देश की प्रणाली का मूल स्रोत लोकतंत्र हो, वहाँ राजतंत्र की शब्दावली का क्या काम। राजतंत्रात्मक व्यवस्था तो स्वतंत्रता प्राप्ति के साथ भारत में समाप्त कर दी गई, ऐसे में उन शब्दों का प्रयोग क्यों किया जाए, जो राजतंत्र की याद दिलाएँ। सोमवार, पाँच अगस्त दो हजार उन्नीस को कश्मीर से अनुच्छेद तीन सौ सत्तर और पैंतीस-ए का समापन लोकतंत्र की स्थापना में राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत बड़ा निर्णय है। भारत में आधिकारिक रूप से राज्यों को प्रदेश एवं केंद्र शासित प्रदेश में विभक्त किया गया है। विदित है, अब्राहिम लिंकन द्वारा प्रदत्त लोकतंत्र की परिभाषा भारत में पूर्णत: लागू है; यथा 'जनता की, जनता के लिए, जनता द्वारा सरकार।' ऐसे में हर उस स्थान पर परिवर्तन की अवश्यकता है, जहाँ राजतंत्र के प्रतिनिधि शब्दों का प्रयोग किया जा रहा है।

कथेतर लेखक, विशेष संवाददाता एवं मीडिया सलाहकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आलेख, रिपोर्ताज आदि निरंतर प्रकाशित। 'राष्ट्रीय मयूर' (हिंदी मासिक) पत्रिका का संपादन कार्य। संप्रति वोल्गा वेलफेयर ऑर्गेनाइजेशन के अध्यक्ष तथा प्रबंधकीय कृषक।

शब्दों का बड़ा महत्त्व है। जिस भाव से शब्द वाणी से निकलते हैं, जनमानस में वैसा ही असर छोड़ते हैं। विशेषत: राष्ट्रीय और पंथीय विषयों पर। इनके प्रयोगों पर विशेष ध्यान रखना अनिवार्य है; तभी तो कहा गया है, 'वाणी से सम्मान मिले, वाणी से अपमान।' कबीरदास कहते हैं, 'ऐसी बानी बोलिए मन का आपा खोइ, औरों को शीतल करे आपहु शीतल होइ।' स्वामी स्वरूपानंद महाराज के समाचार-पत्रों में प्रकाशित वक्तव्य को स्मरण करना आवश्यक समझाता हूँ, जिसका अभिप्राय था, माँ भारती प्रत्येक भारतीय की माता है, फिर वह बड़े से बड़ा व्यक्ति हो या छोटे से छोटा, ऐसे में न जाने क्यों तत्कालीन लोगों ने राष्ट्रपुत्र मोहनदास करमचंद गांधी को राष्ट्रपिता का संबोधन दिया। निश्चित ही यह बापू के लिए देशवासियों का भावात्मक संबोधन है, लेकिन महाराजजी की बात की सत्यता से इनकार नहीं किया जा सकता। आशय साफ है, कई बार भावना पर व्यावहारिकता का नियंत्रण जरूरी होता है। एक और वैचारिक उत्कृष्टता का उदाहरण देखें, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने स्वयं को 'प्रधान-सेवक' कहकर जनता के प्रति अपने विचारों को एक नई दिशा दी, जिसे पूरे देश में सम्मान मिला और बहुत संभव है कि इससे लोक-भावनाओं में नई ऊर्जा संचारित हुई हो।

भारत धर्मप्राण, आध्यात्मिक भावों का देश है। इस सनातन भूमि में भौतिकवाद से अधिक महत्त्व अध्यात्म को प्राप्त है। वह अध्यात्म जो अधिगत आत्मा है, इसीलिए सरकार की नीति भी लोकात्म अनुरूप होनी चाहिए, फिर ऐसी शब्दावली क्यों, जो भ्रमोत्सर्जक हो। राजनीति

का सीधा अभिप्राय 'राज्य की नीति' से है। प्रश्न उठता है, किस राज्य की नीति? कहाँ है वह राज्य? किस राजा द्वारा निर्देशित नीति? इत्यादि। भारत में क्या कोई राजा या राज्य सत्ता है? उत्तर सिर्फ एक है 'नहीं'। पुन: याचित प्रश्न तो यह छद्म शब्दावली क्यों? क्यों लोकतंत्र की मूल शक्ति, जनशक्ति के कल्याणार्थ निर्मित नीति को राजनीति कहा गया? क्या है यह राजनीति? जबकि यह कार्यप्रणाली लोकनीति, जननीति कहलाना अधिकाधिक उचित है। एक और महत्त्वपूर्ण बिंदु है, हम अपने राष्ट्रीय प्रमुख को 'राष्ट्रपति' कहते हैं। पर 'पति' शब्द अधिपति अथवा स्वामी का द्योतक है। फिर देश के प्रमुख के लिए इसका उपयोग कितना उचित है! यादि राष्ट्रपति के स्थान पर 'राष्ट्राध्यक्ष' या 'राष्ट्रप्रधान' कहें तो इसका भावबोध-सौंदर्य और बढ़ जाएगा। प्राचीन भारत में वैशाली जैसे स्थानों में लोकतंत्र की स्थापना थी, हमें वहाँ की शब्दावली का प्रयोग चलन में लाना होगा। अंग्रेजी शब्दावली से प्रभावित शब्दकोश का इस्तेमाल त्रुटिपूर्ण एवं भ्रामक है।

राजतंत्रात्मक राजनीति छल-छिद्र, सत्ता के लिए उठा-पटक से भरी, अवसरवादी सोच को चित्रित करती है, जो भारतीय लोकतंत्रात्मक भावना से मेल नहीं खाती। इसका आशय यह नहीं कि राजनीति का हर दृष्टिकोण खराब है। अनेक ऐसे उद्धरण हैं, जहाँ राजतंत्र ने जन-कल्याण के अप्रितम कार्य किए, पर कटु सत्य यह भी है कि वर्तमान की राजनीति ने सैद्धांतिक राजनीति की कमर तोड़ दी। अजमेर के श्री बद्री प्रसाद साक्षात्कार में प्रकाशित अपने लेख में राजनीति को कीचड़ की नाली कहते हैं। महात्मा गांधी के विचारों को आधार बनाकर चलनेवाली भारतीय सरकार को यह समझना होगा कि नगर मार्ग, क्रीड़ा-प्रांगण, स्टेडियम, भवन इत्यादि के नाम परिवर्तन के साथ-साथ देश की प्रणालीगत शब्दावली में भी समुचित संशोधन अनिवार्य है।

राजतंत्रात्मक राजनीति छल-छिद्र, सत्ता के लिए उठा-पटक से भरी, अवसरवादी सोच को चित्रित करती है, जो भारतीय लोकतंत्रात्मक भावना से मेल नहीं खाती। इसका आशय यह नहीं कि राजनीति का हर दृष्टिकोण खराब है। अनेक ऐसे उद्धरण हैं, जहाँ राजतंत्र ने जन-कल्याण के अप्रितम कार्य किए, पर कटु सत्य यह भी है कि वर्तमान की राजनीति ने सैद्धांतिक राजनीति की कमर तोड़ दी। अजमेर के श्री बद्री प्रसाद साक्षात्कार में प्रकाशित अपने लेख में राजनीति को कीचड़ की नाली कहते हैं। महात्मा गांधी के विचारों को आधार बनाकर चलनेवाली भारतीय सरकार को यह समझना होगा कि नगर मार्ग, क्रीड़ा-प्रांगण, स्टेडियम, भवन इत्यादि के नाम परिवर्तन के साथ-साथ देश की प्रणालीगत शब्दावली में भी समुचित संशोधन अनिवार्य है। हर देश में अलग-अलग व्यवस्थाएँ हैं, जो वहाँ की संस्कृति के आधार पर निर्मित हैं; जैसे—इंग्लैंड में राजनीति और लोकनीति को बहुत समीप रखा गया है, इसीलिए औपचारिक प्रमुख राजा होते हुए भी वास्तविक शक्ति पार्लियामेंट में निहित है। जर्मन, फ्रांस जैसे देशों में एकल प्रमुखता विशेष रही, जिसके माध्यम से देशहित और लोकहित के कार्यों को प्रमुखता से संपादित किया गया। पकिस्तान में लोकतांत्रिक प्रणाली होते हुए भी फौजी हस्तक्षेप विशेष महत्त्व रखता है, जबकि भारत जैसे संस्कृति संरक्षक देश की सांस्कृतिक, सामाजिक स्थिति अन्य देशों की तुलना में भिन्न है, इसीलिए यहाँ लोकतंत्रात्मक प्रणाली को अंगीकार किया गया है, अत: यहाँ राजतंत्र अथवा एकल नेतृत्व व्यवस्थाएँ असंगत हैं।

शताब्दी परिवर्तन के साथ सांस्कृतिक, आर्थिक, नीतिगत, विकासमूलक परिवर्तन होते हैं, ऐसे में भाषा-वर्तनी संबंधी शाब्दिक गहराइयाँ भी विशेष स्थान रखती हैं। हम भारतीयों ने अपने संविधान को आत्मार्पित किया है, हमारी भाषा हिंदी है, ऐसे में विदेशी भाषाओं से प्रभावित, अनुवादित नीतिगत असंबद्ध शब्दों से पराधीनता की बू आती है। भले हम विभिन्न भाषा-धर्म को माननेवाले हैं, पर राष्ट्रीय मुद्दों के प्रति हमारी सोच ध्रुवीकृत है, इसीलिए आज विश्व में भारतीय छवि विश्व-नेता के रूप में सामने आ रही है। प्रति पाँच वर्ष में आम चुनाव के माध्यम से नागरिकों द्वारा सरकार चुनी जाती है। लोकतंत्र के इस महायज्ञ की प्रतिभागी पार्टीज 'राजनैतिक दल' के रूप में स्वयं को प्रस्तुत करते हैं, क्यों···ये राजनैतिक कैसे हो गए? क्या भारत के नागरिक राजा का चुनाव करते हैं? राजनैतिक दल के स्थान पर इन्हें जनसेवी-दल या लोक दल जैसे संबोधनों से संबोधित करना चाहिए। राष्ट्रिय चिंतन के प्रति यह हमारा सामूहिक उत्तरदायित्व है कि हम भूपति, अधिपति, अधिनायकवाद, साम्राज्यवाद, सत्तारूढ़ जैसे शब्दों से बचें। राष्ट्र संचालन की एक राष्ट्रीय नीति होनी चाहिए। जो भी दल सेवारूढ़ हो, निर्णीत राष्ट्रीय नीति पर कार्य करना उसकी बाध्यता होनी चाहिए, यदि परिवर्तन आवश्यक हो तो सामूहिक विमर्श से समाधान निकाला जाए।

भारत बहुपंथों, बहुमतों, बहुसंस्कृति, बहुभाषीय जनों को स्वीकार करनेवाला लोकतंत्र है, ऐसे में यहाँ की नीति राजनीति कैसे कहला सकती है? यहाँ सिर्फ और सिर्फ लोकनीति ही ग्राह्य होनी चाहिए। हम वर्तमान हैं, आज हमारे ऊपर यह दायित्व है कि हम राष्ट्रीय मुद्दों पर संबोधनों की शाब्दिक मर्यादा को चिह्नित करें, अन्यथा भावी पीढ़ी भी वैसे ही हमारी भूलों पर दु:ख करेगी जैसे आज हम अपने पूर्ववर्ती राष्ट्रीय कर्णधारों की गलतियों पर करते हैं। पाश्चात्य अंधानुकरण ऐसा हो जाएगा, जिसमें भारतीय शब्दावली खो जाएगी और निश्चित ही हम इसके लिए जिम्मेदार होंगे। संशोधन का दायित्व वर्तमान का है कि भविष्य भारतीयता के समीप रहे। यह आज तय करना होगा कि लोकतंत्र के मंदिर में राजनीति विराजे या लोकनीति!

साअ

दादू मोहल्ला-संजय वार्ड,
सिवनी-४८०६६१ (म.प्र.)
दूरभाष : ७०४९५९५८६१

राम झरोखे बैठ के

नए भारत का निर्माण और हम

• गोपाल चतुर्वेदी

जब वह नए भारत के निर्माण की बात करते हैं तो हम आह्लादित होते हैं। जब पूरा देश प्रगति करे और हम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें, इससे बेहतर स्थिति क्या है? हम भारत के जागरूक नागरिक हैं। थोड़ा सा आलस और ढेर सारी कामचोरी हमारी पहचान है। हम अहिंसक हैं। दफ्तर में मक्खी, मच्छर मारने से हमें इसीलिए परहेज है। कई बार जब मच्छर कान में घुसकर भिनभिनाया तो हमें सेक्शन अधिकारी से शिकायत करनी पड़ी, ''देखिए, बड़े बाबू! आप काम की अपेक्षा करते हैं इस गंदगी में, जहाँ कि दफ्तर के मक्खी-मच्छर कभी कान तो कभी आँख में प्रवेश को प्रयासरत हैं? इससे अधिक सफाई तो कैंटीन में है। हम वहीं जा रहे हैं।'' इतना कहकर हमने कैंटीन का रुख किया ही था कि बड़े बाबू ने टोका ''पूरे दफ्तर को आपत्ति है कि आप दफ्तर का वक्त काम के बजाय कैंटीन में ही बिताते हैं? आप क्यों हमें विवश करने पर उतारू हैं कि इस बार हमें कोई गंभीर काररवाई करनी पड़े?'' हम फिर अपनी सीट पर जाकर खुली आँख सोने की कोशिश करने लगे।

बड़े बाबू जानते हैं कि मच्छर-मक्खी से हमारा आशय क्या है? यह प्रतीक भर है, उन चोट्टे चरित्रों का, जो अपने कर्तव्य का अंत केवल दूसरों के विरुद्ध बड़े बाबू के कान भरने में समझते हैं। दरअसल, भिनभिनाना इसी प्रकार की काना-फूँसी का पर्याय है। कुछ के लिए दफ्तर उनके जीवन का प्रारंभ और अंत है। एक-एक फाइल से उन्होंने इतनी बार 'डील' किया है कि उस पर उनके हाथों की छाप लग गई है। गनीमत है कि वहाँ उनका थोबड़ा नहीं उभर आया है, नहीं तो यह उनकी कर्तव्य-निष्ठा का फोटो-ग्राफिक सबूत होता। हमारे जीवन में दफ्तर के अलावा अन्य रोचक तत्त्व भी हैं।

अपना संपर्क ऐसे हर व्यापारी-ठेकेदार से है, जिनका शासकीय तिलिस्म से वास्ता है। हम उनके अनौपचारिक 'गाइड' हैं, विभिन्न कार्यों के 'रेट' के। इसके भुगतान पर ही फाइल के पहिए लगते हैं, वरना वह वहीं की वहीं टिकी है, जहाँ पर है। हर दफ्तर में बाबू का भ्रष्टाचार टिकाऊ है, अफसर-मंत्री आदि सब 'चलताऊ' हैं। अर्थात् आज हैं, कल नहीं हैं। उनका करप्शन-उन्मूलन सिर्फ मनभावन बातें हैं, बातों का क्या? सुननेवाले एक से सुन, दूसरे कान से निकालने के अभ्यस्त हो चुके हैं अब तक। सत्ता पाकर सब ऐसे अनर्गल आश्वासन उगलते हैं, सदाचारी छवि के वास्ते। परिणाम ढाक के वही तीन पात जैसा रहता है।

एक अफसर हैं, जो नर्क-स्वर्ग की धार्मिक आस्था के गंभीर अनुयायी हैं। उनका नर्क के अस्तित्व पर विश्वास है और वहाँ खौलता हुआ गरम तेल का स्थायी विशाल कढ़ाईनुमा पात्र पर भी। उनकी मान्यता है कि भ्रष्टाचार पाप है। पापी नर्क-गमन करता है, उसी पात्र में तड़पने को। करप्शन से उसने धरती पर जितने सुख भोगे हैं, उन सबका खामियाजा उसी अनुपात में उसे नर्क में मिलता है।

इक्कीसवीं सदी में ऐसी ऊलजलूल बकवास कोई पढ़ा-लिखा करे तो इस स्वस्थ मनोरंजन से मन-ही-मन हँसी आती है। अफसर के सामने बैठकर उसकी मूर्खता पर खुलकर हँसने का कौन साहस करेगा? उनके सम्मुख एक ने ऐसी गुस्ताखी की थी। उसे किसी मामले में फँसाकर निलंबित किया जा चुका है। वह अभी भी नौकरी में रहकर बेरोजगारी के झूले पर सवार है। ऊपर की आय ठप्प है। वेतन भी पूरा नहीं है। कोई सहयोगी भी दिलासे की घास नहीं डालता है। उलटे सब उससे कतराते हैं। साहब के खुफिया ने देखा तो शिकायत होगी। क्या पता उनका नाम भी आस्थाहीनों और भ्रष्टाचारी पापियों की सूची में न जुड़ जाए? इस आधार पर निलंबन का नतीजा एक तो भोग ही रहे हैं, दूसरे तो उससे बचें। हमें तो ऐसों की छाया तक से परहेज है। अपन जानते हैं कि हम ऐसे कागजी शेर हैं, जिसकी सामर्थ्य सिर्फ बड़े बाबू से जुबान लड़ाने तक सीमित है। वह तक हड़काएँ तो हम हड़क जाते हैं।

धीरे-धीरे हमें संदेह हो चला है कि अपन साहस का दिखावा करनेवाले जन्मजात कायर हैं। फिर भी हम इस कायरता को दुनियादारी समझते रहे या खुद को समझाते रहे हैं। अपने चारित्रिक खोट के सच का सामना करना आसान नहीं है। हम आज भी अपनी कायरता स्वीकार करने से कन्नी काटते हैं।

ठेकेदार-व्यापारियों के दफ्तरी तिलिस्म में 'गाइड' होने के कुछ लाभ और प्रलोभन हैं। त्योहार पर कुछ भेंट-गिफ्ट मिल जाती है। कोई सांस्कृतिक कार्यक्रम हो तो प्रवेश की फरमाइश करने पर टिकट या पास। लोग ताज्जुब करते हैं कि चौबे हर महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम में कैसे मौजूद रहता है? श्रोताओं के बीच बैठे हमारी एकाध तसवीर भी समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुई है, जिसकी 'कटिंग' हमने सँजोकर रखी है। कोई दूसरा समझे, न समझे, हम स्वयं को भारतीय कला-संस्कृति का पारखी समझते हैं। कभी-कभार व्यापारी हमें अपने आयोजनों में निमंत्रित भी कर लेते हैं। वहाँ हमने देखा है कि एक-दूसरे से 'विजिटिंग

कार्डों' का आदान-प्रदान होते हुए। हम कौन सा कार्ड छपवाएँ? 'राम अवतार चौबे, सहायक लिपिक, वाणिज्य मंत्रालय'? जो देखे, वह हँसे। जो मिले, वह टले। वहाँ बड़के अफसर भी पधारते हैं। अपना यकीन उनसे उचित दूरी बनाए रखने में है। हमारा इकलौता आकर्षण वहाँ के खान-पान में है। अपने मन में जिज्ञासा रही है कि हम सामान्य लोग तो दाल-रोटी से संतुष्ट हैं, इन रईसों का खाना क्या खास है? अपने अनुभव के आधार पर अब हमें यकीन है कि यह भोजन सूँघते और दवाएँ डाकारते हैं। बतौर यादगार हमने ऐसी हर पार्टी की चम्मच-छुरी घर में सजाई हुई है।

अपने पास दहेज का मिला एक स्कूटर है जबकि दफ्तर के हमारे समकक्ष बाबू एक नई कार के अधिपति हैं। कोई पूछे तो वह उसके स्वामित्व से इनकार करते हैं, 'दोस्त की गाड़ी है, वह बाहर है तो यहाँ खड़ी है।' हमारे साथ ऐसी विवशता नहीं है। अपने स्कूटर की नियति खड़े रहना और लात खाना है। बिना पेट्रोल के कितनी भी लात मारो, वह कैसे 'स्टार्ट' हो? यों दफ्तर हम समय से पहुँचते हैं। हमारी चार्टर बस समय की पाबंद है। बड़े बाबू, अफसर आदि को भले देर हो जाए, हमें नहीं होती है। इसके कई सुखद परिणाम हैं। वातानुकूलित वातावरण में नींद अच्छी आती है। हमारी सफाई में आस्था है। हमारी मेज ऐसे चमकती है जैसे शहर के मॉल का फर्श। न फाइलों का ढेर है, न व्यर्थ के कागजों का। बस उस पर सिर टिकाए एक खर्राटे लेता इनसान है।

जो देश और समाज में है, वह दफ्तर में नहीं है। यहाँ न जाति-भेद है, न संप्रदाय का अंतर। अधिकांश भ्रष्टाचारी हैं, बहुसंख्यक जात के हैं, सिरफिरे, ईमानदार अल्पसंख्यक। हमारा 'बॉर्डर लाइन' केस है। न हम इधर के हैं, न उधर के। अपनी श्रेणी त्रिशंकु की है। जो हमें कैंटीन में देखते हैं, उनके अनुसार हमारा संपर्क हर ठेकेदार या व्यापारिक घराने के बिचौलिए से है। इसके ठीक विपरीत, किसी से उनके काम की सिफारिश करते हमें नहीं पाया गया है। इस कारण कोई यह निर्धारित करने में असमर्थ है कि यह व्यक्ति किस श्रेणी का है? बिचौलियों से इसका रिश्ता क्या केवल कैंटीन के खान-पान का है? वह इसका बिल चुकाते हैं तो क्या इसे सदाचारी माना जाए? पर दफ्तर में न उनको लेकर घूमता है, न बिचौलिए इसके साथ नजर आते हैं तो इसे भ्रष्टाचारी कैसे कहें? वह हमें ईमानदार अल्पसंख्यक तक नहीं मानते हैं। क्या किसी और के चाय-समोसे और पकौड़े उड़ाना भ्रष्टाचार नहीं है? खाना है तो अपनी जेब से बिल चुकाकर खाओ। करप्ट करप्ट है, उसमें कैसा छोटे-बड़े का अंतर? छोटा और बड़ा करप्ट क्या होता है? कोई भ्रष्ट आठ दस लाख का कैश न लेकर कार ले ले तो क्या ईमानदार है?

दफ्तर में कइयों का वक्त ऐसी ही अंतहीन दूसरों की चर्चाओं में बीतता है। कहते हैं कि गिरगिट रंग बदलता है। यहाँ तो हर व्यक्ति चाल, चेहरा, चरित्र सब बदलने का विशेषज्ञ है। तभी तो एक स्वच्छ भारत के मिशन पर प्रवचन करनेवाले बहुमंजिली इमारत के फ्लैट में रहते हैं और अपना कूड़ा नीचे के फ्लैट में फेंकते हैं। उनके लिए इसमें कोई विरोधाभास नहीं है। उलटे यह बेहद तर्कसंगत है। उनकी सफाई का प्रारंभ अपने फ्लैट से है। वह उसे स्वच्छ और चमकदार रखते हैं, कूड़ा कहाँ समाए? बाहर दरवाजे पर कैसे सजाएँ, कोई उठाता तो है नहीं। लिहाजा नीचे फेंकने के अलावा विकल्प क्या है? नीचेवाले का दायित्व है कि वह अपने फ्लैट को साफ रखे। वहाँ तो गंदगी उठाने का सुभीता भी है। यदि उसने वहाँ कचरे की सामूहिक टेकरी बनने दी है, तो दोष उसका है और उसे इस पर शर्म आनी चाहिए। वह शरमाने के बजाय इधर-उधर शिकायत करता है तो करता रहे। कर्तव्य की अशोभनीय उपेक्षा का इससे बड़ा उदाहरण संभव है क्या?

दफ्तर में इसी प्रकार के अपना दोष दूसरों पर मढ़ने के महानुभावों की कमी नहीं है। हर पद पर इसी तरह के छोटे, मझले, विशाल गिरगिट आसीन हैं। यह हमेशा दूसरों की गलती सुधारते हैं, स्वयं कभी नहीं करते हैं। ज्ञानी व्यर्थ कहते हैं कि इनसान गलतियों का पुतला है। जब तक सेवानिवृत्त नहीं हो जाते, यह मसल इन पर लागू नहीं है। एक बार रिटायर हुए तो फिर इनसान बनते हैं। नौकरी के दौरान यह शासक दल के रंग में रँगे रहे! उसके बाद भी इन पर आम आदमी का रंग कभी नहीं चढ़ा, क्योंकि 'सूरदास की काली कांबर, चढ़े न दूजो रंग।' इनके दोस्त भी गिरगिट वंश के हैं, जो एक-दूसरे के सामने भी रंग बदलने में माहिर हैं। कहना कठिन है कि मौकापरस्ती के अलावा इनका कोई आदर्श, सिद्धांत या उसूल है कि नहीं?

ऐसे निपुण नीति-निर्माताओं के शिकार भी समाज में उपलब्ध हैं। उनको दो जून की रोटी जब मिलती है, तब उन्हें वैसा ही लगता है जैसा चंद्रयान से जुड़े वैज्ञानिकों को लगा होगा। इक्कीसवीं सदी इस दृष्टि से विरोधाभास की सदी है। एक ओर तकनीकी प्रगति से रोजगार घट रहे हैं, दूसरी ओर गाँवों से खेती-किसानी छोड़कर शहरों की ओर पलायन लगातार जारी है, ठीक उसी अंदाज में जैसे शहर के युवा-युवातियाँ फिल्मी ग्लैमर, शान-शौकत से आकृष्ट होकर एक्टर बनने मुंबई सिधारें। न अंतहीन सड़कें बनना है न इमारतें। सबको रोजगार कैसे उपलब्ध हो? कौशल प्रशिक्षण और स्वरोजगार की भी सीमा है। संजय गांधी के हश्र के बाद कौन ऐसा दुस्साहसी है, जो परिवार नियोजन की सोचे भी। अनाप-शनाप बढ़ती आबादी से पूरी आशंका है विकास विनाश में तब्दील होने की।

हमें दिवास्वप्नों को देखने की आदत है, उन्हें श्रम-परिश्रम से सच करने की नहीं। अपनी भी चुनौती है कि कार्यालयों के हमारे ऐसे कामचोर, काहिल, करप्ट और कमीशनखोर अधिकारियों-कर्मचारियों के बावजूद वह बड़बोले स्वच्छ, स्वस्थ, काला-धन विहीन, भ्रष्टाचार मुक्त भारत बनाकर तो दिखाएँ? उनका वादा वादा ही रहना है, उलटे हम डरे हैं कि कहीं वह अपने दृढ़ निश्चयी, सबल, शक्तिशाली नेतृत्व की सारी हेकड़ी तक न भूल जाएँ, इसको पूरा करने में?

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

जीवनसाथी

• अनिता सिंह चौहान

कमलेश ने एक गहरी साँस भरी और अपने सामने रखे कागजों पर दस्तखत कर वहाँ से उठकर तुरंत चल पड़े।

जे.पी. बैंक से बाहर आते हुए एक मिनिट का समय सदियों का लग रहा था। बेटा सुधांशु को तो अभी बैंक में समय लगना था। सारी औपचारिकताएँ पूरी करनी थीं, वह उत्साहित और प्रफुल्लित था, उसने पिता के मायूस और निराश चेहरे की तरफ ध्यान ही नहीं दिया।

कमलेशजी और उनकी पत्नी लता खुशहाल गृहस्थी बसर कर रहे थे। उनका बेटा सुधांशु उच्च शिक्षा के लिए विदेश जाना चाहता था और इसके लिए वह अपने पिता से ढेर सारी अनुचित व नाजायज माँगें पूरी करवाने की जिद कर रहा था, जिसमें बैंक से घर के जेवर रखकर लोन लेना भी एक जिद थी, जो आज कमलेशजी पूरी करके आ रहे थे।

अपनी शादी के बाद कमलेशजी ने कड़ी मेहनत की थी, ताकि वे अपने परिवार और बच्चों को एक बेहतर भविष्य दे सकें। एक छोटा-मोटा घर भी बनवा लिया था, जिसमें अपने दोनों बच्चों यानी बेटी नीलम के लिए एक कमरा और अपने बेटे सुधांशु के लिए दो कमरे लेट-बाथ अटेच के साथ भविष्य में उसकी शादी को नजर में रखते हुए बनवा लिये थे। बेटी तो दामाद रंजन के साथ विदेश चली गई, उससे महीना-पंद्रह दिन में फोन पर बातचीत हो जाती है और अब सुधांशु भी जाने की जिद कर रहा है। जिद क्या कर रहा है, उसने तो फैसला ही कर लिया था।

उन्हें याद आ रही है एक महीने पहले की वह शाम, जब सुधांशु ने विदेश जाने का अपना फैसला सुनाया था, माता-पिता दोनों अवाक् रह गए थे।

'यहाँ पर इस देश में कोई भविष्य नहीं है मेरा, पापा। आप समझते क्यों नहीं हैं? कितनी तो बेरोजगारी है यहाँ, और मान लो, नौकरी मिल भी गई तो उस सड़ियल सी नौकरी के बीस-पच्चीस हजार के वेतन में मेरा गुजारा नहीं हो पाएगा।'

'अरे बेटा! तुम बीस हजार की नौकरी की बात कर रहे हो, मैंने तो मात्र पाँच हजार के वेतन से अपनी नौकरी शुरू की थी।' उन्होंने हँसने की कोशिश करते हुए कहा था, मगर वह फीकी सी हँसी उनके चेहरे पर ज्यादा देर तक चिपकी नहीं रह सकी थी।

सामाजिक समस्याओं पर लेखन। अब तक छह पुस्तकें प्रकाशित, जिनमें तीन कहानी संग्रह हैं। देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कहानियाँ प्रकाशित। आकाशवाणी से कहानियों का वाचन एवं कहानियों का मंचन। हिंदी साहित्य अकादमी सम्मान सहित लगभग २५ सम्मान प्राप्त।

'कौन से जमाने की बात कर रहे हैं आप, पापा? आज जिंदगी की दौड़ बहुत तेज हो गई है। उस जमाने में पाँच हजार होते होंगे बहुत, मगर आज बीस हजार भी शुरुआती कहलाते हैं और आपने उस पाँच हजार रुपल्ली की नौकरी में हमें दिया ही क्या है?' तैश में सुधांशु उठकर कमरे में घूम रहा था।

दिया ही क्या है? कमलेशजी के कानों में मानों फुंसिया सी उग आई थीं। उनके कानों ने कुछ गलत तो नहीं सुना न। नहीं, सही ही सुना है। यह 'दिया ही क्या है आपने' वाक्य शायद हर माता-पिता को अपनी संतान से जीवन में कभी-न-कभी सुनना ही पड़ जाता है। इस 'दिया ही क्या' में अपनी संतान को सारी सुख-सुविधाएँ को देते हुए पूरे लाड़-प्यार से पालने-पोसने के अलावा और कुछ क्या आता है, कमलेशजी समझ ही नहीं पा रहे थे।

सुधांशु की माँ लता तो बेटे का मुँह ही ताक रही थीं, मन-ही-मन वह अच्छी तरह समझ चुकी थी कि बेटे से इस बारे में बात करना फिजूल ही रहेगा, जो जाने का मन बना ही चुका हो, उसे भला किस तरह रोका जा सकता है।

'कौन सी कमी रह गई तुम्हारे जीवन में? और तुम्हारे जाने के बाद हमारा क्या होगा, कभी सोचा है तुमने?' कमलेश उत्तेजित से बोले जा रहे थे।

'बस पापा।' माथे तक हाथ ले जाकर जोड़ते हुए सुधांशु माँ की तरफ मुखातिब हुआ।

'माँ! अब तुम्ही समझाओ न इन्हें। नीलम भी तो गई है बाहर, मैं चला जाऊँगा तो कौन सा पहाड़ टूट जाएगा इन पर। और क्या माँ-बाप बच्चों को इसीलिए पालते-पोसते हैं कि बुढ़ापे में संतान उनकी देखभाल करे। बस अपनी जिंदगी न देखो, अपने सपने न पूरे करो। है न···।'

कमलेश को जवाब देते न बना। सुधांशु ने जब से लता के जेवर बैंक में रख लोन लेने की बात कही थी, तब से वह मन-ही-मन डर से गए थे, पता नहीं और क्या सुना दे, जिसे शायद वह अब सहन न कर पाएँ।

फिर सुधांशु का स्वर नरम पड़ा, पिता से अभी और काम जो निकलवाना था उसे। 'देखो पापा! आप समझो न। आपको तो पेंशन मिल रही है। हमें तो आज के समय में परमानेंट नौकरी ही मिल जाए तो गनीमत है। कंपनी की नौकरी का तो पता ही है, कभी भी बंद हो जाती है, कभी छँटनी होती है तो कभी टारगेट पूरा नहीं हो पाता। बस मुझे तो बाहर जाना है मतलब जाना है और खूब सारा पैसा कमाना ही है।'

अब कमलेश के पास उसकी इन बातों का कोई जवाब ही नहीं बचा था। क्या सचमुच देश की स्थिति इतनी दयनीय है, बेरोजगारी इतनी बढ़ गई है कि युवा प्रतिभाएँ बाहर पलायन कर रही हैं। या फिर मूल्य ही बदल गए हैं और पैसा ही सर्वोपरि हो चला है।

खैर, भरे हुए आधे-अधूरे मन से कमलेश और लता ने सुधांशु को विदा किया। एयरपोर्ट पर भी सुधांशु का मन माँ-बाप से बिछड़ने से ज्यादा बाहर जाने के लिए उत्सुक हो रहा है, यह देख और भाँपकर दोनों के मन और भी बुझ गए थे। घर आए तो सूना-सूना घर काटने को दौड़ रहा था। दोनों के ही पास करने को और सोचने को कुछ बचा नहीं था। लता का तकरीबन पूरा-पूरा दिन बेटे के कमरे में ही बीता करता, कभी उसकी अलमारी खोलकर देखा करती, कभी उसकी किताबें सहलाया करती। फिर अचानक ही उसे याद कर रोने लगती। उसकी तबीयत खराब होने की आंशका के चलते आखिरकार कमलेश ने ही हिम्मत दिखाई। एक-दो सामाजिक संस्थाओं के वे सदस्य बन गए, चार लोगों से मिलना-जुलना होता, मीटिंग्स अटैंड करते, रोज दोनों घूमने जाते, कभी-कभी नाश्ता भी बाहर ही कर लेते। जीवन फिर पटरी पर आने लगा था।

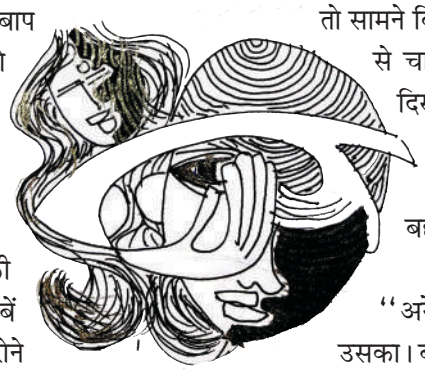

शनिवार-इतवार की छुट्टियों का दोनों पति-पत्नी बेसब्री से इंतजार करते। दोनों बच्चों से फोन पर वीडियो चेट हो जाती, समाचार मिल जाते, कुछ समय के लिए आनंद रहता, फिर वही सूनापन।

''सुनिए न! आखिर हम दोनों कब तक ऐसा जीवन जीते रहेंगे। कुछ तो सोचना पड़ेगा न जिंदगी के लिए। कितना भी मन बहलाओ, पता नहीं क्यों शांति नहीं मिलती।

''लता! इसके लिए कहीं-न-कहीं हम लोग भी जिम्मेदार हैं। अपने बच्चों को शायद हमने बहुत ज्यादा छूट दे दी थी। उनको उनके कर्तव्य से कभी अवगत कराया नहीं। वे तो बस अपने अधिकारों के प्रति सजग हुए हैं, अपने परिवार, माता-पिता, समाज और देश के लिए उनका क्या फर्ज है, इसका तो उन्हें ज्ञान ही नहीं है, अपने-अपने सपनों को पूरा करने की धुन में वे इतने लीन हो गए कि अपने जन्मदाताओं और पालन-पोषण करनेवालों के प्रति भी उनका कोई कर्तव्य है, यह भूलकर अपने माता-पिता को ही छोड़ने पर उतारू हो गए और उनसे दूर भागने लगे।'' विचारों में डूबते-उतराते हुए कमलेश शून्य में देखते-बोलते जा रहे थे।

तभी फोन की घंटी ने उन दोनों का ध्यान भंग कर दिया। ''हलो, पापा, कैसे हो? और माँ कैसी है? मेरे पास दीदी का फोन आया था। वह आप दोनों को फोन लगाएगी, पता है आपको, आप दोनों नाना-नानी बननेवाले हैं। दीदी बता रही थी कि डिलेवरी के लिए वह माँ को बुलाने की सोच रही है। आप दोनों आपस में डिसाइड कर अपना फैसला उन्हें बता देना, ठीक है, पापा। अभी में बिजी हूँ, आपको बाद में फोन करता हूँ।'' और फोन कट गया। आज की संतान के पास समय का कितना अभाव होता है, माता-पिता से बातचीत के लिए वे दस मिनट खराब करना भी उचित नहीं समझते।

खैर वे दोनों बेटे के ऐसे व्यवहार के आदी हो चले थे। मगर नाना-नानी बनने की खबर से खुश हो गए थे।

दो-चार दिन बाद जब दोनों सुबह-सुबह घूमने जा रहे थे तो सामने विमलाजी आती दिखाई दीं। विमलाजी उनकी गली से चार गली छोड़कर रहती थीं, दो-तीन महीनों बाद दिखी। दोनों चहक उठे।

''अरे विमलाजी! आप···आप कब वापस आई यू.के. से।'' और आपका बेटा, वो कैसा है बहू···बहू तो ठीक है ना?''

विमलाजी का बुझा हुआ चेहरा खिल उठा, ''अरे लता, पोती हुई है, बहुत प्यारी है, टीना नाम है उसका। बहू और बेटा दोनों मजे में हैं। मेरी ही तबीयत ठीक नहीं रहती थी वहाँ।''

''क्यों क्या हुआ वहाँ पर? सब ठीक था न आपके साथ।'' चिंता भरे स्वर में लता बोल उठी, आखिर वह भी तो अपनी बेटी के पास जाने की सोच रही थी।

''अरे नहीं! अब इस उम्र में बाहर का हवा-पानी सूट नहीं करता न। परदेस में सबकुछ अनजाना सा लगता है। मैं तो दो महीनों में घर से बाहर ही नहीं गई।'' विमला की आवाज बुझती सी चली गई थी। आँखों में कुछ देर पहले आई चमक धुँधली हो चली थी।

''अरे, बेटे ने कहीं घुमाया-फिराया नहीं?'' कमलेश ने मजाक सा किया।

''अरे भाई साहब! दोनों का ऑफिस एक जगह नहीं है। बेटे का ऑफिस दूसरे शहर में है, बहू अलग ऑफिस में है। आठ-दस दिनों में छुट्टियों में एक-आध बार बेटा आ जाता है या फिर बहू चली जाती है। उनका ही गुजारा मुश्किल है, मेरा खयाल क्या करते दोनों?''

''क्यों, वहाँ तो सुनते हैं, सब खूब कमाते हैं, सब सुविधाएँ हैं वहाँ, इसीलिए तो भाग-भागकर जाते हैं सब।'' कमलेश का स्वर कसेला हो चला था।

''हाँ, सब सुख-सुविधाओं के सामान से घर भरा पड़ा है, भाई साहब, मगर सब कर्जा लेकर, उन्हीं की किश्तें चुकाने के लिए ही सब

कमाते हैं, फिर थोड़ा-बहुत अपना खर्चा और फिर बच्चा हो गया तो···। दूर के ढोल सुहावने ही होते हैं।'' विमला की गहरी साँस में विदेश की जीवन-शैली, नए परिवेश की घुटन, परिजनों से उपेक्षा, सब उजागर हो उठे थे।

सच ही तो कह रही थी विमला। भला अपने देश जैसा अपनापन, आत्मीयता और खुलापन वहाँ कहाँ! जहाँ चार दिन ही सुबह घूमने जाओ और फिर दो दिन न जाओ तो कई परिचित-अपरिचित चेहरे पूछने लगते हैं—'आप दो दिन आई नहीं, सब ठीक है न।' क्या वहाँ पड़ोसी या पहचानवाले ऐसे ललककर मिलते होंगे भला? लता घबरा उठी। हे भगवान्! मैं भला किस तरह रहूँगी वहाँ? क्या मेरा भी विमलाजी जैसा ही हाल होगा परदेस में। नहीं···नहीं। बेटी से ऐसी उम्मीद नहीं की जा सकती, मगर वे कभी अपने पति से ज्यादा दिनों के लिए दूर नहीं हुई हैं, ऊपर से पति का स्वास्थ्य, उनका खाना-पीना, दवा, देखभाल यह सब कौन करेगा, वे खुद भी कोई जवान रह गई हैं क्या? उनकी दवाई, डॉक्टर के यहाँ का नियमित चेकअप वगैरह! कैसे मेनेज होगा यह सब।

कमलेशजी का भी कमोबेश यही हाल था। वैसे ही इस बुढ़ापे में पत्नी से अलग रहने का मन जैसे-तैसे बना ही रहे थे, ताकि उनकी पत्नी लता बेटी नीलम के डिलेवरी के लिए जा सके और अपना दायित्व निभा सके। लेकिन विमलाजी का यह हाल, वे काफी कुछ छुपा रही थीं, लगता है कुछ और भी बात है, लेकिन अपना कौन उघाड़ता है भला। वे आंशकित हो उठे।

घर पहुँचकर भी दोनों का यही हाल था, खाना तो बना, मगर दोनों से खाया ही नहीं गया। दोपहर को लताजी तो दवाई खाकर सो गई। मगर कमलेशजी···उनका चैन आराम सब गायब सा हो गया था। पता नहीं किस उधेड़बुन में उनका दिमाग उलझा हुआ था। सोचते-सोचते अचानक ही मन के उलझे हुए धागों का एक सिरा मिलता अनुभव हुआ। उसी धागे का सिरा पकड़कर उन्होंने नीलम को फोन किया, ''हेलो नीलम बेटा! कैसी हो? बहुत बहुत बधाई। हम दोनों तुम्हारे लिए बहुत खुश हैं। रंजनजी कैसे हैं? मैं उन्हें फोन लगा रहा था, मगर लग नहीं पा रहा है। सुन बेटी, तू जरा रंजनजी से बात तो कर देना कि क्या तेरी माँ के साथ मैं भी वहाँ आ सकता हूँ क्या? वो क्या है बेटा, इस उम्र में हम दोनों ही एक-दूसरे का सहारा हैं, तेरी माँ तो अकेली नहीं आएगी वहाँ, अगर हम दोनों वहाँ आ सके तो ठीक रहेगा।

''तू समझ रही है न और अगर ऐसा न हो सके तो बेटा, ऐसा कर, तू ही यहाँ आ जा अपने मायके, तेरा स्वागत है, तू भी इसी बहाने कुछ दिन हमारे साथ रह लेगी, कब से नहीं मिली है हम लोगों से, ठीक है।'' आराम की साँस ले कमलेशजी ने फोन रख दिया। चेहरे पर संतुष्टि के भाव थे।

''आपने बिल्कुल ठीक किया जी।'' लता पता नहीं कब उठकर पीछे आ उनकी बातें सुन रही थीं। ''भावनाओं में अंधे होकर माता-पिता बच्चों के मोह में पड़ जाते हैं, लेकिन उम्र के इस पड़ाव पर हम और तकलीफें सहन नहीं कर सकते, हम दोनों एक-दूसरे के सहारे ही तो जिंदगी काट रहे हैं, दो-दो बच्चे हैं, कौन है यहाँ? फिर मेरे वहाँ चले जाने पर तुम्हारा अकेले रहना भी तो ठीक नहीं होगा।'' लताजी का स्वर मजबूत और दृढ़ था।

''अरे भाग्यवान! तुम मेरे साथ हो तो मुझे किसी की परवाह नहीं, हम-तुम दोनों साथ हों तो फिर जग जीत सकते हैं। मैं तो यह मान चुका हूँ कि न बेटा, न बेटी कोई किसी का सहारा नहीं है, बस हम दोनों ही एक-दूसरे का सहारा और संबल हैं। हम विदेश भला क्यों जाएँ? जिसको यहाँ आना है, भरपूर स्वागत है, आखिर बच्चे हैं हमारे, हम तो भाई यहीं सुखी हैं अपने देश और अपने लोगों के बीच में।'' स्नेह से पगे स्वर में कमलेशजी ने लता का हाथ पकड़ते हुए कहा।

तीन दिन बाद नीलम का फोन आया कि रंजन से बात हो गई है, दो-तीन महीनों में ही वह डिलेवरी के लिए अपने मायके आ रही है। अब तो कमलेश और लता की खुशी का ठिकाना ही नहीं था। आखिर घर बहुत समय बाद फिर से खुशियों से जो भरनेवाला था, कमलेश और लता का यह निर्णय भले ही कड़े दिल से लिया था, मगर यही सही निर्णय था।

एम.आई.जी. बी-३१,
राज्य परिवहन डिपो परिसर, भदभदा रोड, भोपाल
दूरभाष : ९८२६७१४४४३

कविता

वनकन्या

● हेमंत कुमार चावड़ा

नाम मेरा है पर्वत,
बेटी मेरी पार्वती।
वनदेवी की वन कन्या,
सबके देखो दु:ख हरती।

पीपल, वट की छाया में,
तोता-मैना को रखती।
कोयल, मोर चाहे गाएँ,
बूँद-बूँद वर्षा होती।

पगडंडी सी जल धारा,
यहाँ-वहाँ नीर बहाती।
तट पर सब नमन करें,
दाना-पानी जग को देती।

गाँव उसका राजा बेटा,
नगर-नगर दूर बसाती।

जग आता है नंगे पाँव,
ऊँचे में दरबार लगाती।

चाँदी की पायल बोले,
चाँदनी भी गरबा गाती।
चंदा देखो रुक गया,
सबके संग रास रचाती।

चाँदी के झूले में झूले,
मंद-मंद वह मुसकाती।
जग की तू शेरा वाली,
सब पाते हैं हीरा-मोती।

सत्तीगुड़ी चौक,
रायगढ़-४९६००१ (छ.ग.)
दूरभाष : ९३००७७२४५८

एक दिन : एक जीवन

● **राजशेखर व्यास**

इनसान की बदबख्ती भी अंदाज से बाहर है
कमबख्त खुदा होकर भी बंदा नजर आता है।

स्तुत: पं. सूर्यनारायण व्यासजी पर जैसा मैं बार-बार कहता हूँ, जिन विषयों पर, जिन विधाओं पर बात करनी चाहिए, अभी वह काम तो आरंभ ही नहीं किया है। मसलन विक्रम संपादक व्यासजी की पत्रकारिता पर मैंने अब तक बात नहीं की है; मसलन पुरातत्त्ववेत्ता व्यासजी पर मैंने बात नहीं की है; उज्जयनी की पहली खुदाई कैसे हुई, इतिहासकार व्यासजी के इतिहास पक्ष पर अभी संयोग और सुखद संयोग मिलता है कि दिल्ली की भागम-भाग की जिंदगी में जहाँ लिखने-पढ़ने से कई बार ऑफिस की फाइलों पर हस्ताक्षर करते-करते आपके कंधे दु:ख आएँ, सर्वाइकल प्रॉब्लम उठ आए, इस दरमियान जब लिखने का अवकाश भी न मिले तो बोलकर के यहाँ मैं व्यंग्यकार व्यासजी पर जो कुछ बोला, वह संयोगवश आज एक ग्रंथ आया है, 'वसीयतनामा'। पंडितजी के व्यंग्य-संग्रह की भूमिका बन गया, संस्मरण व्यासजी के सुनाए तो वो 'यादें' की भूमिका बन गया, 'यादें' भारतीय ज्ञानपीठ से एक कृति आई है, जो ज्योतिषाचार्य व्यासजी पर जो कुछ बोला, वह उनकी एक ज्योतिष कृति की भूमिका होने जा रही है, तो कालिदास समारोह पर जो कुछ बोलना चाहता था, तो वह कवि कालिदास समारोह के इतिहास पर तब और अब कुछ काम हो जाए। मुझे लगता है कि मेरे कंप्यूटर में इतनी सारी फ्लापी हैं तो मैं डरता हूँ कि कहीं वायरस न घुस जाए, इतनी सारी फ्लापी हैं, उसमें इतने सारे आयाम हैं, कौन सी फ्लापी लगाऊँ, क्योंकि आज थियेटर और रंग-मंच की बात है तो दूरदर्शन की तरह बरसों पहले मैंने एक प्रोग्राम किया करता था।

बाद में स्टार पर पब्लिसिटी करती थी 'एक दिन एक जीवन'। किसी मनुष्य को जानना हो तो मैंने बाबा विशंभरनाथ पांडेय और कई लोगों पर फिल्म बनाई और उनका सुबह से रात तक एक दिन चुना कि सुबह से रात उन्हें पकडूँगा, उनका उठना, बैठना, जागना, फिरना, चलना, वरना हमारे दूरदर्शन में क्या होता था कि दो कुरसियाँ रखीं और एक बीच में एक गुलाब रखा, वो रेडियो फार्मेट में शूटिंग हो गई और हो गई साहित्यकार से बातचीत असल में सब लोग रेडियो से ही आए थे। भूल गए, एक कैमरा बीच में आ गया तो ठीक है—कुबेरदत्त, शरददत्त, रामदत्त सब दूरदर्शन के, गुरुदत्त, ये सब हमारे यहाँ यही किया करते थे, तो मुझे लगा कि इसमें प्रयोग होना चाहिए, एक साहित्यकार का जीवन

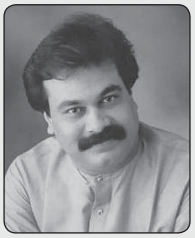

चर्चित लेखक, संपादक, विख्यात निर्माता-निदेशक, केवल १२ वर्ष की वय में पितृविहीन हो चले 'यायावर'। ५९ से अधिक क्रांतिकारी ग्रंथ, ४००० से ज्यादा लेख देश-विदेश के सभी अखबारों में प्रकाशित, २०० से ज्यादा वृत्तचित्र, कार्यक्रम, रूपक, फीचर, रिपोर्ताज टी.वी. पर प्रसारित। भारतीय दूरदर्शन में सबसे अल्पायु के आई.बी.एस. अधिकारी 'उप-महानिदेशक'। फ्रांस, यूरोप, मलेशिया, सिंगापुर, अमेरिका की यात्रा।

उठना, बैठना, चलना, फिरना, घूमना उसकी बातचीत, उसके जीवन, उसके दर्शन, उसके सबकुछ वे अपने आप में चलता-फिरता तीर्थ है। उसे ऐसे शूट करे और प्रयोग किया और बहुत लोगों को आंनद आता था। विशंभरनाथ पांडेय से लेकर बाद में सीताकांत महापात्र पर बनाया मैंने 'शब्दों के पार सीताकांत', नरेश मेहता पर बनाया मैंने 'एकांत शिखर नरेश' और लोगों को बड़ा आनंद आया। मैं सोचता हूँ, आज पंडितजी के 'एक दिन एक जीवन' को सुनाऊँ, उसका सुबह से रात तक का जीवन कैसा था तो पता लगे कि ये आदमी एक साथ कालिदास अकादमी, कालिदास स्मृति मंदिर, विक्रम कीर्ति मंदिर, सिंधिया रिसर्च इंस्टिट्यूट, विक्रम यूनिवर्सिटी और सिंधिया शोध प्रतिष्ठान और व्यंग्य भी लिखना, ज्योतिष भी कर लेना, क्रांति भी हो गई, पता नहीं कितने विधाओं में काम कैसे करता होगा। मुझे अच्छा रतन लाल जोशी कहते थे कि मैंने तुम्हारे पिता जैसा व्यवस्थित आदमी अपने जीवन में नहीं देखा। वे बोले, उज्जैन में रहे तो वे पद्मभूषण हुए दिल्ली आते तो 'भारत रत्न' हो जाते। मैंने कहा, तब क्या हो जाता भारत रत्न हो जाते, अब तो एम.जी. रामचंद्रन भी हो गए अब तो नाना प्रकार के लोग हो जाते हैं। पर आप दिल्ली रहे, मैंने क्या आपने अपने जीवन को कितना व्यवस्थित किया? बाबूजी 'मालवा' के लिए आप क्यों कुछ नहीं कर पाए? वे बोले, पंडितजी, एक साधक की तरह जीते थे, मैंने जो देखा बचपन में, वह मैं आपको सुनाऊँ तो आपको लगे, कोई मनुष्य ऐसे जीता है, ऐसे उठता-बैठता, चलता-फिरता है? बिल्कुल नितांत अंतरंग प्रसंग एक बच्चे की स्मृति में जो कुछ उसके पिता जैसे रचे-बसे हैं।

श्री पंडितजी चले गए तो कमलेश दत्त त्रिपाठीजी निदेशक बनकर आए थे, मैं छोटा बच्चा था, जो इनसे लोमहर्षक संघर्ष किया करता था, पर जब दिल्ली गया, इन्होंने बड़े स्नेह और आशीर्वाद से भेजा और

एक बड़े अग्रज, बड़े भाई की भूमिका निर्वाह करते हुए जो चाचाजी यहाँ बैठकर करते थे, नियमित मुझे एक पत्र लिखना और कम-से-कम 'मालवा' का अभाव न लगे, की मेरे पिता भी नहीं है, तो हमारी माँ भी ऐसे ही करती थी, माँ करती थी कि पत्र नियमित लिखती थी। उस जमाने में दूरभाष इतना आसान नहीं था, पंडितजी का स्नेह बराबर रहा। हमारी माँ भी कहानियाँ ऐसे सुनाती थी कि हम पैर दबाएँ तो आज बस इतना ही अब, अगला प्रसंग कल, वह पंडितजी जैसे महान् पुरुष की पत्नी है तो पंडितजी पलंग पर सोए हुए हैं, माँ यह जानते हुए कथा तो हमें सुनाया करती, पर आज महसूस होता है, पर सुनाया पंडितजी को करती थी। उनकी सारी कहानियों में पुरुष की आलोचना होती, पुरुष का शोषक और पुरुष की जो दंभ और अहंकार प्रक्रिया है, उस पर उनके कमेंटस होते थे। उनकी कथाओं में सदैव महिलाओं का भी बेहद सम्मान, शकुंतल में वह कहती थी कि और तो सब ठीक है, कल शकुंतल में बहुत अच्छी बात कही और तो सब ठीक है कि कालिदास कहता है कि स्मृति भ्रंश हो गया, कहता है कि श्राप था, वो सब भूल गया। ये विदूषक मरा कहाँ गया था? इसको तो सब याद था, इसका तो स्मृति भ्रंश नहीं हुआ, इसको कालिदास ने बड़ी चतुराई से गायब कर दिया तो पंडितजी कहते, तुम बच्चों को अनर्गल बातें सुनाती हो; ऐसा नहीं है, कहती, कालिदास भी आदमी, दुष्यंत भी आदमी और तुम्हारे पिता भी आदमी'''तो उनकी कथाओं में प्राय: सीता के साथ जो अन्याय, मुझे याद कि जब हम रात को सोते तो व्यासजी महाराज मौन होकर हमारी माँ की सुनाई कहानियाँ सुनते, जो वे हम बच्चों को सुनाती, पर पौने नौ बजे के बाद माँ अपने आप वाणी विराम देती, अब तुम्हारे पिता सो गए।

मैंने देखा कि मैं जब स्कूल से लौटकर आऊँ, ये व्यक्ति क्या कर रहे हैं, इससे पहले मैंने देखा कि ८ से १० बजे लोगों से २ घंटे मिल रहे हैं। ८ से १० और ये ज्योतिष का समय है, इसमें लगभग-लगभग आप समझ लीजिए कि छह माह पूर्व के उनके अपॉइंटमेंट सिस्टम, जो मैं आज देख रहा हूँ, वो होता है, चाहे वो मुंबई से हो, कलकत्ता से हो, कहीं हो और यहाँ उज्जैन का एक 'भारे' वाला भी आ जाएगा कलेक्टर, कमिश्नर, पर जो जिस क्रम से आए उस क्रम से भेजा जाए।

सुबह चार बजे व्यासजी नियमित उठ जाया करते थे, चार बजे भस्म आरती का जब यह शोर-शराबा, साउंड, हो-हल्ले से नहीं होता था पर वे उठकर, शायद वर्षों यूरोप रहे होंगे, पंडित अपनी चाय स्वयं बनाते थे। चाय बनाने के बाद एक क्रम और था उनका, माँ को हमने नहीं देखा जीवन में कि माँ से चाय बनवाएँ, स्वयं बनाते थे और चाय के सारे बरतन बिल्कुल अलग किस्म के थे, मैंने जीवन में बड़े-बड़े रईस-प्रसादी, प्रासाद देखे, पंडितजी की आर्थिक संपन्नता-विपन्नता के दोनों एक्सट्रीम को कोई अनुमान नहीं लगा सकता, उनके पास तीन सौ किस्म की केतली होंगी, जिसमें इटली की भी, ईरान की भी, चाईना की भी ट्रांसपरेंट भी, चाँदी के भी, श्रमंतों के लिए अलग उसमें एक मलाई की चाँदी की कटोरी होती थी, जो घर में सबसे छोटा प्रिय बच्चा हो, अगर वह उठ गया तो उसे गोदी में बैठा के उसे मलाई खिलाते, चाय बनाकर चले जाते तो सारे बच्चे रजाई में से बाहर निकलते की उस चाय पर पहला अधिकार किसका हो, उसमें चाय इतनी होती थी कि माँ और हम सब बच्चे पी लें। पंडितजी दिनभर करते क्या हैं, यह बचपन में बहुत मन होता कि ये नहाते हैं, फिर क्या करते हमारे लिए एक अजीब सा व्यक्तित्व था, एक एक तिलिस्म की तरह हम कुछ नहीं जानते, सुबह उठते हैं और चले जाते हैं, 'भारती-भवन' में उनका जब चार बजे वे नीचे आते टेबल के यहाँ चार से छह नियमित लेखन करते थे। यह नियमित लेखन इतना है कि उनके युग में जी.एस. करंदीकर इतिहासकार ने लिखा है, व्यासजी के सारे लेखों को उज्जैन से पटरी पर बिछाएँ तो दिल्ली तक बिछ जाएँगे। जो १६ पृष्ठ का नियमित संपादकीय लिखता हो, विक्रम में असंख्य लेख तो उनके इतिहास पर हैं, पुरातत्त्व पर हैं, दर्शन पर हैं, क्रांति पर हैं, धर्म पर हैं, साहित्य पर हैं, ज्योतिष पर हैं, कालिदास पर हैं, पर हैं व्यंग्य, पर किन विधाओं पर उस आदमी ने नहीं लिखा?

आरंभिक दौर में कभी कवि भी थे पर नियमित दो घंटे उनका लेखन, अच्छा टाईपराइटर उनका अपना था, छोटा सा पोर्टेबल! तो पत्र भी स्वयं टाईप करते थे, और करीब-करीब अब सब महापुरुषों को देखा कि स्वयं मुरारजी भाई पत्र टाईप करते थे, जगजीवन राम स्वयं भी करते थे, ताकि पी.ए. भी न पढ़ ले। क्या बात, राजेंद्र प्रसाद के तीन-तीन, चार-चार पेज के पत्र मेरे पास हैं। इतना राष्ट्रपति को समय हो कि वह खुद लिख रहे हैं, वे खुद टाईप कर रहे हैं। छह बजे वे स्नान पर जाते तो स्नान उनका बाथरूम अपना खुद हाथ से साफ करना, क्योंकि टाईल्स चमकाकर धोना इटली की मार्बल्स की टाईल्स, जिनका उस जमाने में टाईम था, 'भारती भवन' में ३५ में और उसके बाद ७ बजे वे अखबार टेबल पर जितने हैं, उसे पढ़ने बैठ जाते। मेरा सामुख्य जब हुए तब वे अस्वस्थ्य हो गए तो युग के जीनियस को मैं ७२ में उनके पास जाने लगा, तो हमारे घर में अनुशासन की ऐसी सीमा थी कि कोई बच्चा उन तक जाए नहीं, हमको अगर पैसे चाहिए तो हमारे घर में नौकरों का एक वर्ग था, उसमें भी जो सबसे ऊपर थे, वो घर के अग्रज की तरह ही थे, नानू राम बा साहब, जिनके पौत्र अब मेरे साथ हैं। हम भी उनको पंडितजी की तरह ही बा साहब ही बोलते थे, वो ९२ वर्ष से घर के साथ एक जेनरेशन चली आ रही है। 'ग्रैंड फादर' को भी सँभालते थे तो उन्हें हम सब बच्चे स्लिप दे देते थे, जिसको जो चाहिए, १० रुपए चाहिए तो कारण भी लिखना होगा, क्यों चाहिए। १० रुपए चाहिए, पुस्तक खरीदनी है, २० रुपए चड्डी तो वो स्लिप इकट्ठी करके नानू रामजी उनको टेबल पर रखते थे, उसमें से वो तय करते थे जिस पे स्वीकृति हो गई उस पर १० रुपए रखे मिलेंगे नहीं तो वह स्लिप भी कचरे की टोकरी में गई, तो हमारा साहस नहीं वहाँ जाए नानू रामजी ही लेकर

आते थे, बाऊ साहब आपके १० रुपए आपका ये फलां, स्याही खत्म हो गई, कलम नहीं है तो एक बढ़िया मोबला आ जाएगा, पर उन तक जाने का साहस किसी में नहीं था।

मुझे यह सामुख्य क्यों मिला कि ७२ में उन्हें ब्रेन हमरेज हुआ और मस्तिस्क स्खलन व्याधि से ग्रस्त होकर उनकी नाक से खून बहा और स्मृति भ्रंश हो गई, सबकुछ भूल गए, लिखना-पढ़ना और जो नार्गाजुन कहते थे कि तुम्हारे पिता ऐसे जीवित विश्वकोष थे कि उन्हें एक-एक ग्रंथ 'भारती भवन' में रखा कंठस्थ। मैंने देखा था कोई आता था तो पंडितजी बताते थे कि वे फलानी अलमारी खोलो, उसमें २४वें खाने में वह जो १६वीं पुस्तक है, उसे निकालो, देखो उसके १२वें पन्ने पर क्या लिखा है, बताओ-बताओ? इस तरह से वे करते थे, वह मैंने बचपन में देखा था, लेकिन उनकी स्मृतिभ्रंश हो गई, सुमनजी भी आते थे, भगवत शरणजी भी थे, वाकणकरजी भी थे, उस समय तो उनके पास इतने प्यारे लोग थे, महान् लोगों की सूची थी, बालकवि बैरागी थे, प्रभाकर तो मुझ बालक का चयन हुआ, उनके ए.डी.सी. बनने के लिए। मेरा सलेक्शन हुआ, मैं अखबार पढ़कर सुनाऊँगा। तो मैं सुबह उठकर ७ बजे पंडित सूर्यनारायण व्यास के कक्ष में, जो १०-१२ अखबार हैं, उसका वाचन करता था। इसलिए जो तीव्रता से बोलने की आदत है, बहुत सारे लोगों ने दूरदर्शन में मेरा नाम रखा हुआ है 'स्केनर ऑफिसर'। इसकी आँख से अखबार जो निकलता है और टॉप ऐंगिल से देखता है, एक मिनट में अखबार स्मरण शक्ति में चला जाता है, वो शायद पंडितजी की कृपा कि सुबह ७ बजे एक साथ २०-१५ अखबार पढ़ूँ और जल्दी-जल्दी, क्योंकि मुझे स्कूल भागना है, और ये आदमी मुझे पूरे ही पढ़वाएगा, वह एक भी हैड़िग छोड़ता नहीं और कभी उन्हें पूरा सुनना हो समाचार तो केवल 'हूँ' तो अब मुझे वह पूरा ही पढ़ना है। मैंने हैडिंग पढ़ी—ईरान और इराक में तनाव तो 'हूँ' पूरा सुनाइए, तो खेल समाचार और व्यापार तो मैं भाग जाता था कि वे पढ़ेंगे नहीं, सुनेंगे नहीं, दो-तीन चीजों से बचते थे, पर वो संपादकीय अवश्य ही सुनना उनको जो सुबह जल्दी से अखबार पढ़ते, मैं सुनाता, गलती भी बोलता, बच्चा था, पंजाब में आंतक फैला था, चपत पड़ती, आतंक मैंने ठीक नहीं बोला, आतंक बोल दिया, हिंदी भी ठीक करते, पत्र लिख रहे, अगर तुमने श्रद्धेय नहीं लगाया, त्रिपाठीजी तुम्हारे पुत्र हैं क्या? श्री लिख दिया आपने श्री कमलेशदत्त त्रिपाठी, श्रीयुत भी लिख दिया, सम्मान कैसे दिया जाता है पत्र लेखन की तो उनकी बड़ी नियमित परंपरा थी।

मैंने देखा कि मैं जब स्कूल से लौटकर आऊँ, ये व्यक्ति क्या कर रहे हैं, इससे पहले मैंने देखा कि ८ से १० बजे लोगों से २ घंटे मिल रहे हैं। ८ से १० और ये ज्योतिष का समय है, इसमें लगभग-लगभग आप समझ लीजिए कि छह माह पूर्व के उनके अपॉइंटमेंट सिस्टम, जो मैं आज देख रहा हूँ, वो होता है, चाहे वो मुंबई से हो, कलकत्ता से हो, कहीं हो और यहाँ उज्जैन का एक 'भारे' वाला भी आ जाएगा कलेक्टर, कमिश्नर, पर जो जिस क्रम से आए, उस क्रम से भेजा जाए। यह निर्देश और व्यक्ति से मैंने बातचीत टोन मैंने देखी कि वो एक व्यक्ति बैठा है, दो मिनट उसने बात कर ली, ज्योतिष संबंधित चर्चा हो गई तो उसे वे कितना वजन देते थे, देखिए आप कितना ही बड़ा गवर्नर है, चीफ मिनिस्टर है, उसके बाद उसको वो इग्नोर करना शुरू कर देते थे। वो उसका एक्जीटेंस ही भूल जाते थे कि यह भी यहाँ है। घंटी बजी अगला आदमी आ जाना चाहिए, अगला आया तो उससे वार्त्तालाप शुरू, अब इसमें शर्म हो, लज्जा हो तो स्वयं उठ जाएगा, पर ये बैठा है कि मैं और बैठूँ, तब तक तीसरा भी आ जाएगा और तीसरा भी नोटिस बंद इससे चर्चा शुरू, इस दरमयान तो कोई नौकर भी ऊपर आ जाता कि चलिए बाबू साहब, और भी लोग वेट कर रहे हैं। क्योंकि ८ से १० सुबह समय में उन्हें २०-२५ लोग निपटाने हैं और उन्हें कुंडली देखकर के बहुत ज्यादा बात करने की जरूरत भी नहीं होती थी। एक शब्द, दो शब्द, मुझे लगा वाक् सिद्धि का चमत्कार और सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडियन एस्ट्रोलॉजी या उन्हें ज्योतिष जगत् का सर्वोच्च न्यायालय जो कहा जाता है, ज्योतिष जगत् के सूर्य, एक शब्द जो कह दिया, वही घटना है, ऐसी अंसख्य घटनाएँ हैं। लाखों लोग उनके ज्योतिष ज्ञान से प्रभावित हुए और बड़े गर्व से कहते थे, मुझे राजा दिनेश सिंह दिल्ली में रहते, हमने पंडितजी के दर्शन किए हैं। इंदिराजी भेजती थीं तो पंडितजी नीचे वहाँ नौकरों के कक्ष में बैठाते थे, दिनेश सिंह नीचे बैठे हैं, वो लिखकर ले जाए वो वहाँ सुनाते, स्वाभिमान अद्भुत था।

१० बजे बाद अगर १० बज गए हैं तो उनका भोजन लग जाना चाहिए, कोई गुस्सा नहीं, कोई क्रोध नहीं, कोई रोष नहीं, पर भोजन नहीं लगा तो पंडितजी उस दिन भूखे रहेंगे। समय का ऐसा अद्भुत तो पूरे घर १० बजे तो सारा घर 'बाजोट' पर खाना हमेशा उनसे ऊपर होना चाहिए, 'बाजोट' पर वे नीचे आसन पर बैठेंगे, भोजन चाँदी की थाली में दो चपाती, दाल, सब्जी, चावल, लेकिन एक कौर बच्चे को, एक कौर कुत्ते को, एक कौर कव्वे को पता नहीं, पर सबको खिलाते हुए फिर वे खाते थे। चिड़िया को भी और वह कुत्ता भूखा है तो वो नहीं खाएँगे, उस दिन उन्होंने नहीं खाया तो डॉगी भी नहीं खाएगा। जिस दिन पंडितजी थाली छोड़कर चले गए तो उस दिन हमारा डॉगी भी खाना नहीं खाएगा। वह पंडितजी दिवंगत हुए तो वहाँ तक गया शवयात्रा तक, फिर कभी वहीं रह गया लौटकर नहीं आया! तो पंडितजी उसे भोजन कराएँगे और पाँच-सात मिनट उनका यह जो है, मौन रहता है, घर में कोई बड़ी-बुजुर्ग महिला उनकी जीजी थी, एक बहन, जो बाद में हमें मालूम पड़ा कि रियल सिस्टर नहीं थी, पर पंडितजी उनका बहुत आदर करते थे। उनको भोजन फिर उठकर अपने पाँच मिनट वे लेटते थे अपने बिस्तर पर बाएँ, पाँच मिनट दाएँ और वह 'श्वान निद्रा बको ध्यानम्' वह एक क्षण आप टेलीफोन भी बजा तो टेलीफोन उठाकर रख दिए जाते थे, घर के सारे बच्चे भी पाँव में चप्पल न पहने नंगे पैर कितना ही बड़ा आदमी आ जाए, अंदर प्रवेश वर्जित। मैंने बचपन में एक मूर्खता कर दी थी, वह किस्सा सुनाता हूँ, प्रकाश चंद्र सेठी हमारे चीफ मिनिस्टर प्रचार को निकले, कहीं रास्ते में उनके युवा नेताओं ने कह दिया, गाड़ी रोकते हुए व्यासजी का आशीर्वाद ले लें तो हाँ-हाँ आ

जाओ और भूल गए कि वक्त ११ बजे रहे हैं। पंडितजी नियम के कितने पाबंद हैं। मैंने भी आव देखा न ताव, बैगर यह सोचे की सूर्यनारायण व्यास है कौन? प्रकाश चंद्र सेठी आए हैं, बहुत बड़े आदमी हैं मेरे लिए और सबसे ज्यादा दिलचस्प बात यह कि वो जब 'मालवी' में एक शब्द बोलते थे कि मुझे यहाँ से हिलना मत, शायद मुझे उस सिद्धि साधना का आनंद मिला, आशीर्वाद मिला। मैं वाकई हिलता नहीं था, आशय यह था कि यहाँ से कहीं जाना मत। मैं दो क्षण विश्राम कर रहा हूँ, तो मालवी में बोलते थे, यहाँ से हिलिए मत। मैं क्या सोचता था कि मुझे यहाँ से हिलने के लिए मना किया है। तो मैं मूर्ति बन के बैठा रहता था, मच्छर भी अगर चेहरे पर चल रहा है तो मैं हाथ नहीं उठाता था कि उसे हटा दूँ, जैसा माँ कहती कि तुमने जो पितृ-भक्ति की है, बड़ी विलक्षण दिमाग है, देखती है ऐसे बैठा है मूर्ति बने की, क्यों पिताजी बोले थे हिलिए मत तो हिलना नहीं है। इस भाव से बैठता था तो उस दिन वो मुख्यमंत्री आए मैंने एक अकस्मात् गलती की, वो मुख्य द्वार खोल दिया, जो कभी-कभी खुलता था, जिससे बहुत ही उनके प्रियजनों का प्रवेश होता था। पंडितजी चौंककर उठे, मैंने कहा सेठीजी आए हैं तो पहली बार मुझे एक चपत पड़ी, सेठीजी के सामने ही, सेठीजी को जो डाँट पड़ी, वैसी दहाड़ मैंने शेरों की सुनी होगी कि उनकी आवाज पंडितजी की जो भयावह डाँट के उसने नीचे उतार दिया उस आदमी को, वो बरदाश्त नहीं करते थे कि उसकी नींद में खलल हो, दो शब्द उसके बाद फिर वो १२ से २ बजे दिन में जितनी डाक आ गई, उन चिट्ठियों का उत्तर लिखते थे और आज सुबह की जो डाक आई, उसका जवाब २ बजे की डाक से न गया तो पंडितजी को बहुत दुःख पहुँचता था। पीड़ा होती थी चिट्ठी नहीं निकली डाक डाकखाना यहाँ बंद है तो यहाँ जाएँ दिल्ली जाएँ, वहाँ जाओ आप हैड पोस्ट ऑफिस जाओ, इंदौर एक आदमी रवाना हुआ गाड़ी में बैठ के डाक डाल के आए। डाक डालना ऐसा काम था जैसा कोई प्राण दे देगी, मतलब उनके ११ बजे की चिट्ठी का जवाब २ बजे तक निकल जाना चाहिए। सब नियमित पत्रोत्तर और उस दरमयान लेखन, अध्ययन स्वाध्याय, चिंतन बहुत सारी पत्र-पत्रिकाएँ मैं पढ़ता तो मुझ बच्चे को जब क्रिकेट खेलना नहीं मिल रहा, हॉकी नहीं, फुटबॉल नहीं, लोग पतंग उड़ा रहे हैं, मैं अखबार पढ़ रहा हूँ, किताब और अब स्कूल से आया हूँ फिर इनको बुक पढ़कर सुनाओ, चिट्ठी भी सुनाओ, मैं सोचूँ ये आदमी मुझे कब चैन लेने देगा, शुक्रवार, शनिवार, को तो आंनद आएगा, रविवार को डाक नहीं आएगी तो मैं मजे करूँगा।

मैं रविवार को सोचूँ तो वो कोई बड़ा सारा ग्रंथ निकाल के बैठ जाए 'घुमक्कड़ शास्त्र' पढ़ो, वो राहुल सांस्कृत्यायन ने लिखा है, मैं क्या करूँ, ९ साल का बच्चा राहुल सांस्कृत्यायन का घुमक्कड़ शास्त्र जिज्ञासा कोई दूसरा ग्रंथ निकाल लिया, ये पढ़ो, मतलब उन्हें ये नियमित एक वाचन और दोपहर में कुछ सुनाना ये २ बजते थे द्वार खुलता था २ से ५वें साहित्यकजनों से मिलते, जिनको स्नेह करते, उनसे मिलते, बगीचे में अकसर वो इस समय जाते दोपहर के अवकाश में उनके कितने रूप हैं, उन पर कितनी बात करें तो चौक जाता हूँ, वे अच्छे-खासे गार्डनर थे, पौधों को आकार दे देना, कैंची से हाथी बना देना, कैंची से 'विद्या की देवी सरस्वती' बना देना वीणा बजाती हुई। शेप देना, पौधों को नहलाना, धुलाना और सहलाना और पानी पिलाने का जो आदेश है, घर में माली है, एक माली यूनिवर्सिटी से भरूलाल माली भी आते थे पार्ट टाईम दो घंटे कभी पर पंडितजी का काम ये कि पानी तुम पिलाओ पाईप से ना पिलाओ और पौधों को झारे से पिलाओ, नहलाओ, हिलाओ अच्छे से सहलाओ, ये एक अजीब काम रोज का काम बगीचा उनका इतना सुव्यवस्थित और सुंदर। दो से पाँच में वह पचास लोगों से मिलना है, वो साहित्यिक है, प्रेमी है। पाँच बजे फिर भोजन है और वो भोजन क्या विलंब हुआ तो फिर नहीं होगा। पाँच बजे एक्जेक्ट उसके बाद पंडितजी सहज-सरल दिखते थे।

बाल कवि बैरागीजी ने कहा है कि एक जो पंडितजी का पान जो ना ले, पंडितजी उससे बहुत-बहुत गुस्सा हो जाते थे और बोलते नहीं थे, गुस्सा कैसे प्रकट करते थे, रूसा जाते थे। वो उठके उस कक्ष से चले जाते थे, अपने ही कक्ष से अपनी ही कुरसी से वो उठके चले गए, अब आप बैठे रहिए, आपको पान दिया है आपने नहीं लिया है तो पंडितजी रूसा के अपने दूसरे कमरे में बैठ गए, यानी उनके पान को प्रसाद समझ के जो ना खाते थे, वो भी खा लेते थे।

मुझे लेखक, साहित्यकार आम आदमी से मिलने-जुलने, उठने-बैठने, चहल-कदमी करनेवाले देवव्रत्त जोशी ने एक जगह लिखा है कि एक दिन मैं उनके पास बैठा घर के लोगों से मालवी में बात करते, साहित्यकारों से मालवी में बात करते, जो मालवी में बात न करें, उससे बहुत नाराज हो जाते। बाल कवि बैरागीजी ने कहा है कि एक जो पंडितजी का पान जो ना ले, पंडितजी उससे बहुत-बहुत गुस्सा हो जाते थे और बोलते नहीं थे, गुस्सा कैसे प्रकट करते थे, रूसा जाते थे। वो उठके उस कक्ष से चले जाते थे, अपने ही कक्ष से अपनी ही कुरसी से वो उठके चले गए, अब आप बैठे रहिए, आपको पान दिया है आपने नहीं लिया है तो पंडितजी रूसा के अपने दूसरे कमरे में बैठ गए, यानी उनके पान को प्रसाद समझ के जो ना खाते थे, वो भी खा लेते थे। मुझे याद है, एक आदमी उनपर पी-एच.डी. करने आया तो पहले दिन सुमनजी ने कहा कि वो आप पर डॉक्टरेट करना चाह रहा है, घर आया तो पंडितजी ने उसे पान दिया, उसने कहा, मैं पान नहीं खाता। व्यासजी ने कहा तो तुम मुझ पर पी-एच.डी. भी नहीं कर सकते। तम जाओ यहाँ से तम पान ही नहीं खाओ तो कोई पी-एच.डी. करोगे, रवाना कर दिया तो उनका यह था कि आत्मीयता की हदतक। शाम ६ बजे वह सहज-सरल दुलार सबके लिए द्वार खुला बहुत सुलभता से उपलब्ध चाय, पकौड़ा, चायवाला घर था एक पृथक् जहाँ चाय बनती रहती है। पानवाला घर था, जहाँ पान बनते रहते थे, कुछ लोग ऐसे थे, जिनके लिए

द्वार सदैव खुला जिनमें सुमनजी, भगतशरणजी हैं, वाकणकरजी उनकी साहित्यिक सद्भावना का उल्लेख असंख्य लोगों ने किया, महादेवी वर्माजी को हमने घर में देखा, हमको सौभाग्य मिला कि ऐसे-ऐसे लोग घर आते थे, जिनको लोग देखने छूने को तरसते हैं। तो वे पंडितजी के पास आते थे तो हम ओंकारनाथ ठाकुर, कुमार गंधर्व उनको बचपन में हमने घर में प्रवेश करते हुए देखा है।

व्यासजी को सुनाते हुए देखा पंडितजी को, 'कुमार' गाकर सुना रहे हैं। पंडितजी तन्मयता से सुन रहे हैं, तो देवव्रत जोशी लिखते हैं, एक मजेदार किस्सा कि एक बार उनके पास कोई गवर्नर साहब आए हुए हैं। थोड़ी देर में राजस्थान के चीफ मिनिस्टर मोहन लाल सुखाड़िया आ गए और उनसे कुछ राय ले रहे हैं। इसी बीच एक बकरीवाला आदमी गाँव का वह भी ऊपर भेज दिया गया, जयसिंहपुरे का ठेठ और उसका कहना है कि पंडितजी मेरी बकरी गुम हो गई, तो अब यह बड़ा अजीब सा दृश्य है कि उसको भी भेज दिया गया क्रम में है, वो और ये जो वी.वी.आई.पी. आए हैं, इधर से आए हैं, तो देवव्रतजी उठके जाने लगे, ये गवर्नर साहब आए हैं, कुछ व्यक्तिगत बात करना चाहते होंगे तो मैं जाऊँ, पंडितजी ने कहा कि तुम बैठो, तुम तो घर के हो, उसकी जो चर्चा थी गवर्नर को विदा किया, चीफ मिनिस्टर की जो बातचीत थी उसको विदा किया, फिर इस बकरीवाले को भी बताया कि तुम्हारी बकरी वहाँ मिलेगी जाओ। कोई कुंडली-उँडली नहीं जाओ। देवव्रत जोशी ने कहा कि मुझे एक क्षण यह लगा कि विश्व का इतना बड़ा विद्वान् इसको डाँट के भगा देगा। तुम यहाँ अंदर कैसे घुस आए बकरी गुम गई तो? या कुछ दुर्व्यवहार करेगा, इसको बहुत सहजता से लेता है। इसको प्यार से बताया और जाओ तो उसने कहा पंडितजी, ये कैसे आप सब कर लेते हो, पंडितजी कहने लगे, देखो देवव्रतजी, ये जो गवर्नर आयो थो और चीफ मिनिस्टर और ये बकरीवालों म्हारा लिए दोई एक सरीखा है, इकी बकरी गुम गई है, इकी कुरसी गुमी गई है, ये अपनी कुरसी के गुमने के सवाल से चिंतित है कि अब कुरसी का क्या होगा, कितने दिन मेरे पास रहेगी, इसकी बकरी गुम गई, इसलिए मैं दोनों को एक ही भाव से लेता हूँ, वो जिस सहजता से वो आलथी-पालथी मारे बैठते थे और कितना ही बड़ा आदमी हो, डॉ. राजेंद्र प्रसाद से संबंध उतनी ही आत्मीयता के और जितने ही आत्मीयता के गोवर्धन माली के साथ शहर का एक सबसे बड़ा हरिजन वर्ग परिवार था, उसके घर के दु:ख-सुख सुनना, ये सहज मानव के जो विरल गुण है, अहंकार रहित और स्वाभिमान कूट-कूटकर भरा पड़ा तो आज जो एक सरल रेखा साहित्य में बड़ी मुश्किल से खींची जाती। स्वाभिमान और अहंकार के बीच का भेद लोग भूल गए हैं।

विनम्रता और कायरता के बीच का भेद लोग भूल गए हैं तो मुझे रह-रहकर व्यासजी की विद्वत्ता का स्वाभिमान और हिमालय सी ऊँचाई और इतनी सरलता की एक छोटा सा प्रसंग और बताऊँ कि एक दिन बाल कवि बैरागी ने लिखा है अभी 'महाकाल के महाशय' और एक लेख लिखा है, 'भारती भवन के भुवन भास्कर', उसमें एक बहुत बढ़िया प्रसंग लिखा कि एक दिन व्यासजी के कक्ष में एक आदमी आया, फूट-फूटकर रोने लगा तो हम फिर उठके जाने लगे, पंडितजी ने कहा, वैरागी तम तो बैठो, इससे यह प्रसंग बन गए ये बैठे होंगे तो वो आदमी रोया, उसने पत्र पंडितजी के चरणों में इतने सारे कुछ पत्र रखे, पंडितजी ने पत्र देखे हँसे, फिर एक दराज खोली, कुछ उसे पत्र दिखाए, फिर वह हँसा, फिर वह चला गया। यह सब घटना में एक रहस्य थी कि बालकवि बैरागी ने कहा कि क्या घटना है दा साहब! दा, सा कि वो आए उसने कुछ पत्र दिया आपने भी पत्र दिया, वो रोता हुआ आया था फिर हँसा, फिर चला गया, घटना क्या है। बैरागीजी से पंडितजी ने कहा कि मैं जो बात कहूँगा, वैरागी तुम्हें अजीब लगेगी। इस आदमी को कोई गंदे-गंदे पत्र लिखता है, गंदी गालियों भरे फोन भी गंदे-गंदे करता है, इसके घर में सबका जीना हराम। ये बहुत बड़ा आदमी है, उद्योगपति था और बहुत डरा हुआ है कि कौन गंदी गालियाँ लिखता है। कोई गंदे पत्र लिखता है तो आपने बोले, क्या किया मैंने, दराज खोली ऐसे पत्र मुझे भी रोज आते हैं दो-चार। तो बैरागीजी ने कहा कि आपको भी कोई गाली बकता है? पंडितजी ने कहा कि तो आप क्या सोचते होंगे बैरागी! मुझे नहीं लिखते होंगे लोग। तो उनका आप क्या करते हैं, पंडितजी ने कहा—कहीं नहीं—पहाड़ बनो तो बोले उत्तर कितनी गंभीर शालीनता से व्यासजी के बारे में बैरागी लिख रहे हैं—किस ऊँचाई पर खड़ा आदमी कितनी सहजता से क्या कह गया। बैरागी महारौ उत्तर थमारे मैहारा स्तर से थौडों नीचो लगेगो मे पन भाषा मालवी की याज है। पहाड़ बनों तो लोग उनपे हगने-मूतने भी आए। जब पहाड़ बनते हो तो लोग गंदगी करने आते हैं, मल-मूत्र विसर्जन तो उके कैई सोचनो बैरागी-क्षिप्रा है कि नहीं सामने! उनमें लोग कितनी गंदगी उलीची जाय, ऊकी कोई चिंता करो? यह एक संस्मरण बालकवि बैरागी ने लिखा है कि वे इतने सहज-सरल, उन्हें लोग गालियाँ बकते, विक्रम विश्वविद्यालय बनाया होगा तो कितनी लड़ाइयाँ लड़ी होंगी कि उनके घर पर उनकी निजी जिंदगी पर क्या आरोप-प्रत्यारोप नहीं आए होंगे। आज जब सार्वजनिक जीवन में लोग आचरण और नैतिकता की बात करते हैं, कभी-कभी मुझे लगता है कि ये सब बस के आसान है हर काम का हो दुश्वार होना आदमी को मयस्सर नहीं इनसान होना। यों उस खुदा की तलाश में हूँ अंजुम जो खुदा होकर भी आदमी सा लगे। ये सबसे मुश्किल काम है। इसलिए मैं तो अकसर यही कहा करता कि चंदन की छाया में कुछ दिन रहने का सौभाग्य मिला था, सो दुनिया समझ रही मुझको मैं भी मलयानिल हूँ, मैं भी चंदन हूँ। वो जो चुंबक की एक स्पर्शीय विधि है, जिसमें जंग लगे लोहे पे भी चुंबक घिस दो तो वह भी चुंबक हो जाता है, अकसर उर्दू के शायर के लहजे में कहूँ तो मुझे लगता है—

ये सिर्फ तुम्हारा नूर है जो पड़ रहा है मेरे चहरे पर,
वरना कौन देखता मुझे भी अँधेरों में?

अपर महानिदेशक
दूरदर्शन एवं आकाशवाणी, आकाशवाणी महानिदेशालय
संसद मार्ग
नई दिल्ली-११०००१

कहानी

बौनी दादी

• पी.सी. वशिष्ठ

घृणा और सम्मान एक ही समय पर—यह बड़ा अजीब लगता है, परंतु कस्तूरी के साथ नहीं। कम उम्र में ही ललुआ और बबुआ उसे अपहरण कर अपने गाँव ले आए। गाँव के ही एक मित्र के घर में फेरे डालकर उसे बबुआ की पत्नी बना दिया। परंतु ललुआ भी उस पर अपना पूरा अधिकार रखता था। अविवाहित होने के कारण ललुआ के हिस्से की थोड़ी-बहुत जमीन भी बबुआ के बच्चों को ही मिलनी थी और कस्तूरी उसकी किसी भी इच्छा को अधूरा नहीं रहने देती थी। लोग तो यहाँ तक कहते थे कि वह दोनों की पत्नी थी और सातों बच्चे भी दोनों के ही थे, कोई ललुआ का और कोई बबुआ का। गरीबी में कुछ हो न हो, परिवार में संतानों की संख्या अपनी गति से बढ़ती रहती है। २-४ बीघा जमीन से दस सदस्यों के परिवार का काम चलना नामुमकिन था। कस्तूरी और उसके बच्चे दिनभर जंगल से सूखी लकड़ियाँ और जंगली जानवरों का सूखा गोबर इकट्ठा करते। यही था सर्दियों की रातों को घर को गरम रखने का साधन। उपले के अलाव पर माटी की हँड़िया में सरसों का साग उबलता कई घंटे और घर भी गरम रहता। जाड़े के दिनों में सरसों की कोमल फुनगियाँ एवं अधखिले फूल और ताजी-हरी पत्तियाँ खेतों से लाकर किसी प्रकार रात्रि के भोजन का प्रबंध हो जाता।

एक बार किसी पड़ोसी किसान की पत्नी ने पूरे परिवार को खाली सरसों का साग खाते हुए देखा तो सुझाव दिया कि चाची, इसमें मक्की के आटे का आलन लगाने से साग का स्वाद बढ़ जाता है। कस्तूरी ने मौन रहकर कहा कि मक्के का आटा हो तभी तो आलन लगाया जा सकता है। कस्तूरी बड़ी जुझारू थी। किसी भी हालत में आगे बढ़ने का रास्ता निकाल ही लेती थी। साग और अलाव जलाने से तैयार रात के भोजन पर खर्चा शून्य था। कभी-कभी कोई किसान अपने खेत में से सरसों की कोमल डालियाँ एवं पत्तियाँ तोड़ने पर एतराज करता। कस्तूरी ने एक नया रास्ता निकाल लिया, उसने खेत में से सिर्फ बथुआ उखाड़ा और खेत के मालिक को अपनी झोली में सिर्फ बथुआ दिखाकर कहा कि 'जमीदारजी, मैंने सिर्फ वे पौधे उखाड़े हैं, जो आपके द्वारा बोए नहीं गए, स्वयं उगे हैं।' जमींदार निरुत्तर, कस्तूरी ने घर आकर बथुआ धोया, उबाला और सिल-बट्टे पर पीसकर चटनी जैसा बना लिया, फिर पड़ोसी किसान के घर से छाछ माँग लाई, बथुआ की चटनी छाछ में घोली, फिर उसमें नमक और मिर्च भी मिलाकर अपने पूरे परिवार को एक-एक गिलास वह छाछ पिलाई और साग खाने से परिवारजनों को कुछ राहत मिली। यह एकदम नई डिश थी, जिसे पीकर सभी को एक नए खाद्य पदार्थ का रसास्वादन करने का मौका मिला।

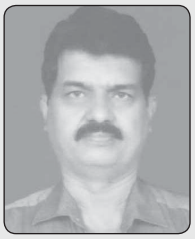

सेना में शिक्षा अधिकारी के पद पर ३४ वर्षों की सेवा के बाद सेवानिवृत्त। उत्तर प्रदेश के जिला बुलंदशहर में जन्म, सेवानिवृत्ति के बाद पुणे में निवास, सैन्य सेवाकाल में हिंदी-अंग्रेजी, अंग्रेजी-हिंदी अनुवाद कार्य तथा रेजिमेंटल मैगजीनों में हिंदी सेक्शन का संपादन कार्य। दोहा लेखन तथा कहानी लेखन में रत।

कस्तूरी मानव मन तक पहुँचने की कला में माहिर थी। गाँव में जिसके भी परिवार में कोई परेशानी होती तो वह अपने सुझाव और सहयोग लेकर पहुँच जाती। कभी किसी के बड़े आँगन में अकेली औरत लिपाई कर रही होती तो वह साथ लग जाती और काम पूरा होने पर घर की मालकिन बिना खाना खिलाए जाने नहीं देती। कभी घरों की बाहरी दीवारों की लिपाई हो रही हो तो सीढ़ी पर चढ़कर मुँड़ेर तक लिपाई करा देती। हल्के वजन के कारण इस कार्य में उसे कोई मुश्किल नहीं रहती। फिर उस घर के लोग भोजन और धन्यवाद साथ-साथ देकर उसे विदा करते। इन कार्यों को देखकर लोग उसके सहयोग की सराहना तो करते, परंतु इस गाँव में जबरिया शादी करने और ललुआ बबुआ दोनों की पत्नी होने के कारण लोग हिकारत की नजर से भी देखते थे। सम्मान और अपमान का मिला-जुला भाव सहती हुई कस्तूरी गाँव के ज्यादातर घरों में आने-जाने लगी थी।

जिस परिवार में प्रसव होनेवाला हो, वहाँ कस्तूरी की सलाह एवं सहयोग के लिए उसे बुलाकर ले जाते। वह यह भी बताने लगी कि प्रसव दो दिन में होगा या चार दिन में। निश्चित समय पर चाहे दिन हो या रात, लोग प्रसव पीड़ा बढ़ने पर कस्तूरी को रात में सोते से जगाकर ले आते। पूरी रात वह प्रसूता के पास रहती एवं प्रसव पूरा हो जाने पर ही वहाँ से हिलती। गाँव के लोगों को एक कुशल नर्स मिल गई थी। मुख्य कार्य के समय वह तेल का दीपक दूसरी स्त्रियों को थमा देती एवं शिशु के अंगों को जन्म के समय अपने कुशल हाथों से पकड़ती। धीरे-धीरे उसे संसार में लाती, पोंछती, नाल काटती और कपड़े में लपेटकर बच्चे की माँ की गोद में रख देती, हजार दुआएँ देती। बाहर बैठे हुक्का पीते लोगों को सबसे पहले खुशखबरी सुनाती। नवजात के परिवारवाले लड़की होने पर कस्तूरी को ११ रुपए एक पहरावनी देते और लड़का होने पर ५१ रुपए और पहरावनी के साथ पाँच सेर गेहूँ तथा गुड़ का एक भेला उपहारस्वरूप देते। कस्तूरी आशीर्वाद देती हुई उनसे विदा लेती।

इस प्रकार कस्तूरी ने कोई ३६ प्रसव गाँव में करा दिए। जैसा जीवन था, वैसे ही प्रसव थे, दोनों ही चल रहे थे। गाँव में धीरे-धीरे वह पीढ़ी भी बड़ी होने लगी, जिनका प्रसव कस्तूरी ने कराया था।

इस पीढ़ी को दोनों प्रकार की बातें कस्तूरी के बारे में सुनने को मिलीं। उसके इस गाँव में प्रवेश की कथा तथा उसका सहयोगी स्वभाव। परंतु पुरानी पीढ़ी सिर्फ पूर्वभाव से ही उसे देखती थी। एक दिन गाँव के किसान के लड़के को गिरने के कारण पैर में मोच आ गई। गाँव में विघ्नहर्ता की तरह लोग कस्तूरी के पास भागे। फिर क्या था, दर्द से चिल्लाते किसान के बेटे को कस्तूरी के कुशल हाथों ने कुछ मिनट में दर्द मुक्त करा दिया। मोच में अपने स्थान से विस्थापित हड्डी को कस्तूरी ने चंद मिनटों में अपनी मूल स्थिति में ला दिया और ३-४ घंटे के आराम और सिंकाई के बाद किसान का बेटा भला-चंगा हो गया। कस्तूरी की वाह-वाह बढ़ती गई, परंतु उसका अतीत उसका पीछा नहीं छोड़ता था। कम ऊँचाई के कारण लोग उसे 'बौनी दादी' कहने लगे, जिसे उसने सादर स्वीकार कर लिया।

बौनी दादी के सामाजिक व्यवहार ने उसे पूरे गाँव का प्रिय बना दिया। इसके कारण गाँव में जाति-पाँति की दीवारें भी ढह गईं और वह सभी लोगों के घर निर्बाध रूप से अपनी सेवाएँ तथा सलाह देती थी। जिन घरों में प्रसव होते थे, वहाँ लड़का होने पर रात को मिलकर स्त्रीगान तथा नाच-धमाल करके खुशियाँ मनाई जातीं तो बौनी दादी उसमें भी बढ़-चढ़कर हिस्सा लेती। इस उत्सव में भी खातिरदारी होती और नामकरण के दिन हवन-पूजा के बाद भी उसे सम्मान और उपहार मिलते। स्थिति यह थी कि गाँव में जितने ज्यादा प्रसव तो बौनी दादी को उतने ज्यादा सम्मान एवं ज्यादा उपहार।

पर गरीबी और पूरे परिवार का पालन सिर्फ उपहारों से नहीं होता था। लोगों को मोच आना या प्रसव कोई रोज की क्रिया तो थी नहीं, बौनी दादी के परिवारवालों ने किसी किसान की २-३ साल की कटिआ (भैंस का बच्चा) बँटाई पर ले ली। जिसका अर्थ यह होता था कि अगले २-३ साल इन कटिया का पालन बौनी दादी का परिवार करेगा और जब ये दूध देने लगेंगी, तब इनकी जो कीमत तय होगी, उसमें से आधी इसके मालिक को और आधी पालनेवाले यानी बौनी दादी के परिवार को मिलेगी। २-३ साल की देखभाल के लिए भी रास्ता निकाल लिया गया। खेतों की मेंड़ों पर उगी तथा कुछ खाली पड़ी ग्राम पंचायत की जमीनों पर भी उग आई घास बौनी दादी का परिवार सुबह से दोपहर तक काटता और बिना एक पैसा खर्च किए कटियाओं का पेट भर जाता। बरसात आई तो चारों ओर घास ही घास हो गई और दोनों कटिया जंगल में स्वयं चरकर और कभी घर में लाई हुई घास खाकर दो साल में ही हृष्ट-पुष्ट हो गईं और फिर गर्भाधान के बाद दस माह में ही दूध देने लगी। दूध बेचना शुरू करके धीरे-धीरे तय की गई रकम चुका दी गई और बौनी दादी के परिवार का काम चल निकला। पहली बार बौनी दादी के घर पर कुछ पैसे इकट्ठे हुए। उचित समय पर बौनी दादी ने एक-एक करके अपने सभी बच्चों के हाथ पीले कर दिए।

अब बौनी दादी उम्रदराज हो चली थीं। अत: बुजुर्ग लोगों के साथ बैठने लगी थीं। यहाँ तक कि ग्राम पंचायत या दो परिवारों के विवाद में भी राय देने लगी थीं। उचित और निष्पक्ष न्याय होने के कारण लोग उनकी बात मानते भी थे। उनके प्रयास से जब फसाद निबटने लगे तो उनका सम्मान कुछ और बढ़ गया। परंतु आँखों-आँखों में लोग अब भी दादी के अतीत पर टेढ़ी नजरों से कटाक्ष करने से नहीं चूकते थे। कई वाचाल बुजुर्ग और कुछ नई पीढ़ी के लड़के दादी के अतीत के कारण अन्य बुजुर्ग महिलों की तुलना में दादी का सम्मान कम आँकते थे एवं कई तो मुँह बिचका लेते और किसी मुद्दे पर बहस के दौरान दादी के चरित्र पर व्यंग्य करने से नहीं चूकते थे। दादी के लिए अपना अतीत बदलना असंभव था, परंतु वह पूरे गाँव की सभी परेशानियों में उनका सहयोग देकर अपने बीते समय की कलुष को धोने का प्रयास जीवन भर करती रहीं। गाँव की फिजाओं में दादी की बदनामी और सदाशयता का मिला-जुला भाव हरपल मौजूद रहता था। आज भी कई बुजुर्ग उन्हें गाँव की बहू मानने में हिचकिचाते थे। नई पीढ़ी के कई लोगों ने दादी को शत-प्रतिशत सम्मान नहीं दिया, परंतु दादी की सामाजिक सेवा के कारण कोई भी उनके महत्त्व को नकार नहीं सकता था। बौनी दादी जिजीविषा की जिंदा मिसाल थी। पर जिंदगी में रिवर्स गियर नहीं होता, जो दादी को पूरी तरह से उसके खोए हुए सम्मान को वापस दिला सकता।

अस्सी को पार करते-करते बौनी दादी बीमार पड़ गईं और अपने पुत्र के पास इलाज के लिए दिल्ली चली गईं। कई माह की बीमारी के बाद उनका जीवन पूरा हो गया, दिल्ली से उनका शव अपने ही क्षेत्र से बहनेवाली गंगा नदी के तट पर अंतिम संस्कार के लिए लाया गया। गंगातट पर पहुँचने से पहले शव गाँव से कुछ मील दूर से गुजरनेवाली दिल्ली-अनूपशहर सड़क से गुजरा तो गाँव के लोग उनकी शवयात्रा को देखने के लिए उमड़ पड़े। पूरा गाँव खाली हो गया। दादी के हमउम्र लोग पैदल चलकर वहाँ पहुँचे। वह पीढ़ी, जिसका प्रसव दादी ने कराया था, सपरिवार पहुँचे और दादी के शव पर सम्मानपूर्वक चादरें चढ़ाईं। सड़क के किनारे रखे शव पर चादरों का ढेर लग गया। और उस दिन पूरे गाँव ने कस्तूरी यानी बौनी दादी को अपने गाँव की वधू मानकर उसे उसका छीना हुए सम्मान वापस दे दिया। वहाँ स्थित दोनों पीढ़ियों की आँखें नम थीं। उनके मन में पछतावा था। सभी ने बौनी दादी के अतीत को पूरी तरह भुला दिया। एक कोमल सम्मान सबके दिल में जाग उठा। बौनी दादी को वह सबकुछ मिल गया, जिसे वे जीते-जी प्राप्त नहीं कर सकी थीं।

ई-१-५०१, हरिगंगा सोसाइटी
आर.टी.ओ. के पीछे, विश्रांत बाड़ी
पुणे-६ (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ७७९८४२४२९३

भारत-रक्षक सम्राट् स्कंदगुप्त

● राकेश कुमार उपाध्याय

स्कंदगुप्त को महान् इतिहासकार प्रो. आरसी मजुमदार ने 'द सेवियर ऑफ इंडिया' की उपाधि यों ही नहीं दी है। सेवियर ऑफ इंडिया, अर्थात् भारत का रक्षक, भारत का त्राता, भारत को बचानेवाला। इतिहास में हूणों की दुर्दांत सेनाओं को अपने बाहुबल से स्कंदगुप्त ने ही सबसे बड़ी टक्कर दी, इस हद तक टक्कर दी कि मध्य एशिया में हूणों के ठिकानों में विधवाएँ-ही-विधवाएँ बचीं और उन इलाकों में पुरुषों का मानो अकाल ही पड़ गया।

स्रोतों से जो जानकारी मिलती है, उसके अनुसार, कम-से-कम दो लाख हूणों की अश्वबल से संपन्न सेना में सबके मारे जाने की सूचना देने के लिए मुट्ठी भर ही बचे, जो मध्य एशिया के अपने उन वीरान ठिकानों तक पहुँच सके, जहाँ से हूण जत्थे दनादन निकले थे—यह सोचकर कि भारत के सुंदर बसे समृद्ध ऐश्वर्यशाली और प्रचुर धन-संपदा से संपन्न गाँवों और आबाद लोगों को लूटकर वह सदा के लिए मालामाल हो जाएँगे, किंतु वीर स्कंदगुप्त और उसकी महासेना के पराक्रम के सामने हूणों का सारा अभियान ही धरा रह गया, आए तो थे गरजती-लपलपाती तलवारों को झनझनाते हुए, भारत के लोकजीवन को डराते-मारते-लूटते, लेकिन स्कंदगुप्त की कुशल व्यूह-रचना के कारण गंगा-यमुना-गोमती आदि नदियों के प्रवाह में ऐसे फँसे कि भागने के लिए भी जगह नहीं बची। जिन कुछ हूण-टुकड़ियों को स्कंदगुप्त ने क्षमादान दिया भी तो पश्चिम की ओर जानेवाले उत्तरापथ से जुड़े गणराज्यों यौद्धेय, मालव, क्षुद्रक के वीरों ने मार-मारकर यमलोक पहुँचा डाला।

हूणों पर स्कंदगुप्त की यह ऐतिहासिक विजय इतनी आसान नहीं थी। गुप्तचरों ने जब पहली बार हूणों की टक्कर से तबाह हुए पुरु और कुरु, गंधार आदि गणराज्यों का हाल तब के केंद्रीय साम्राज्य पाटलिपुत्र (पटना) पहुँचाना प्रारंभ किया तो लगभग ६० वर्ष की उम्र पार करके बुढ़ापे की दहलीज पर खड़े सम्राट कुमारगुप्त की छाती भी धस्स कर गई। ईस्वी सन् ४१३ के करीब सिंहासन पर बैठे सम्राट् कुमारगुप्त महेंद्रादित्य ने चालीस वर्ष तक कुशलतापूर्वक भारत को केंद्रीय नेतृत्व प्रदान किया। जिनके अमर पुरखों के पराक्रम से सजी-धजी राजधानी पाटलिपुत्र के ऐश्वर्य की कहानियाँ सारे संसार को तब चकित और स्तंभित कर देती थीं। महाराजाधिराज चक्रवर्ती सम्राट् समुद्रगुप्त विक्रमादित्य और उनके अजेय बलशाली पुत्र चक्रवर्ती सम्राट् चंद्रगुप्त विक्रमादित्य द्वितीय के द्वारा खड़े किए गए साम्राज्य की सेवा में कुमारगुप्त ने कोई कमी नहीं रख छोड़ी। यूनान और रोमन साम्राज्य या तबके रंक यूरोप के हिस्से तो

दिल्ली में राष्ट्रीय मीडिया में कार्य करने का डेढ़ दशक का अनुभव। जी न्यूज, लाइव इंडिया, न्यूज २४ एवं आजतक समेत टी.वी. टुडे ग्रुप के संपादकीय विभाग में दायित्वों का निर्वहन। संप्रति काशी हिंदू विश्वविद्यालय में नवस्थापित भारत अध्ययन केंद्र प्रथम सेंटेनियल चेयर प्रोफेसर के रूप में कार्यरत। भारतीय प्रबंध चिंतन, भारतीय वर्ण विमर्श समेत अनेक पुस्तकों के लेखक।

भारत की समृद्धि के सम्मुख कहीं खड़े तक नहीं होते थे। राम-कृष्ण जैसे महान् धुरंधरों को जन्म देनेवाली जगज्जननी मातृभूमि भारत की पताका तब पश्चिम में गांधार के पार यूनानी-ग्रीक राज्यों तक फहर रही थी तो पूरब में आज का जो मलेशिया, इंडोनेशिया, बाली आदि अनेक द्वीपसमूह हैं, सबके सब भारत के चक्रवर्ती साम्राज्य के अभिन्न अंग थे, भारत में लोकतंत्र तब शिखर पर था, सैकड़ों जनपद और गणराज्य अपने केंद्रीय चक्रवर्ती साम्राज्य की देख-रेख में प्रत्येक ग्राम और पुर तक स्वायत्त शासन और ग्रामीण स्वावलंबन की बेमिसाल गाथा लिख चुके थे।

वह भारत संसार में सोने की चिड़िया कहा जाता था तो कोई सोने के अंडे देनेवाली मुरगी बता-बताकर दुनिया को भारत पर कब्जे के लिए उकसाता था। उसी भारत की बुनियाद पर जो गुप्त साम्राज्य खड़ा हुआ था, उसे संसार की सबसे बर्बर हूण सेनाओं से मुकाबले की जब चुनौती मिली तो वीरों की भुजाएँ फड़क उठीं, तनी छाती प्रतिकार के लिए धड़क उठीं, तलवारें रक्तपान को मचल गईं, किंतु देश के सामने नेतृत्व का संकट खड़ा था कि रणभूमि में सेना की कमान सँभालेगा कौन? देश के लिए मृत्यु बन खड़े इस विकराल संकट को ललकारेगा कौन? सम्राट् कुमार गुप्त का स्वास्थ्य इस स्थिति में नहीं था कि वे स्वयं सेनाओं का नेतृत्व कर रणभूमि में हूणों को ललकारने उतर पड़ते। सबके मन में प्रश्न था तो स्वयं सम्राट् नेतृत्व नहीं करेंगे तो कौन? राजपुत्रों में उत्तराधिकार तय नहीं था और प्रश्न यह भी कि हूणों के साथ सैन्य संघर्ष में जीवित बचकर लौट आने की गारंटी नहीं। तब काँपती भुजाओंवाले उस पिता कुमार गुप्त के सबसे युवा पुत्र स्कंदगुप्त ने स्वयं ही आगे बढ़कर पिता का धर्मसंकट दूर करते हुए भरे दरबार में सिंह गर्जना के साथ हूणों के मुंडों की माला से भारत जननी के शृंगार का संकल्प लिया।

हूणों के पराभव से जुड़े पुरातत्त्व के अक्षर-गीत

हुणैर्यस्य समागतस्य समरे दोर्भ्यां धरा कम्पिता भीमावर्त करस्य¨ ।

भितरी के शिलालेख में लिखी उपर्युक्त पंक्ति का अर्थ लिखते

हुए कलम भी रोमांचित हो उठती है। उस महाप्रतापी के बल-विक्रम का स्मरण भारत के अपराजेय स्वरूप का ध्यान दिलाने लगता है। जरा खुली आँखों से पढ़िए कि इन पंक्तियों में क्या भाव लिखा है। लिखा है कि ''समरभूमि में हूणों के सामने आने पर दोनों हाथों में तलवार लिए स्कंदगुप्त और उसके सैन्यबल ने अपने प्रबल बाहुबल से जो पराक्रम प्रकट किया, उसे देख सुनकर बर्बरता का पर्याय बने हूणों का हृदय ही नहीं बल्कि समस्त भूमंडल का अत्याचारी वर्ग मानो कंपित हो उठा।''

अश्व पर सवार होकर वह बाहुबली महावीर स्कंदगुप्त विक्रमादित्य दोनों भुजाओं से अपनी तलवारें चलाता हुआ जिधर से भी निकलता था कि उधर-ही-उधर रक्त से सने हूणों के नरमुंडों से पृथ्वी पट गई। भितरी के पास जो मुड़ियार गाँव है, वहाँ स्कंदगुप्त और उसकी महासेना ने हूणों के मुंडों का पहाड़ खड़ा किया, हौणहीं गाँव में हूणों की लाशों से कितने ही गड्ढे-गड़ही पाट दिए, औड़िहार में उस महाप्रतापी ने हूणों के खिलाफ संगर प्रारंभ करने का जो शंखनाद किया, इस संगर ने ही उसे इतिहास में सदा के लिए अमर कर दिया।

भितरी शिलालेख स्कंदगुप्त के संपूर्ण जीवन चरित्र और हूणों के साथ हुए महायुद्ध पर सूत्रों में गंभीर प्रकाश डालता है। इसकी एक पंक्ति में औड़िहार अर्थात हूणिआरि या अवनिहार का संकेत में वर्णन आता है। इसमें लिखा है—स्वैर्दण्डै बाहुभ्याम अवनिं विजित्य हि जितेष्वार्ततेषु कृत्वा दयाम्''। इस पंक्ति में अवनि अर्थात् पृथ्वी पर उसके द्वारा शत्रुओं (हूणों) को हराने का सीधा वर्णन है। अवनि पर विजय अर्थात अवनि-हार या हूणिआरि शब्द यहाँ पर प्रतिध्वनित होता दिखाई देता है। पूरी पंक्ति का जो भाव निकलता है, उसके अनुसार, ''अपने बाहुबल से उसने (स्कंदगुप्त ने) पृथ्वी (अवनि) पर अर्थात् शत्रुओं पर विजय प्राप्त की, (पराजित हूणों में) जिन आर्तजनों ने उससे दया की भीख माँगी और प्राणों की गुहार लगाई उन्हें स्कंदगुप्त ने छोड़ दिया, लेकिन ऐसा करते समय उसमें रंचमात्र भी अहंकार नहीं आया और न ही उसके चेहरे पर किसी प्रकार का क्षुब्धभाव ही दिखाई पड़ा।''

अनेक इतिहासकार भितरी अभिलेख में गंगा नदी के वर्णन के आधार पर भी मानते हैं कि हूणों से स्कंदगुप्त का आमना-सामना औड़िहार के गंगा तट के समीप ही कहीं हुआ था। भितरी अभिलेख में एक पंक्ति में लिखा है—शत्रुषु शरा''विरचितं प्रख्यापितो दीप्तिदा न द्योति''नभीषु''लक्ष्यत इव श्रोत्रेषु गाङ्गध्वनिः (गंगध्वनिः)॥ अर्थात् शत्रुओं के बाणों''के प्रत्युत्तर में जब स्कंदगुप्त के धनुर्यंत्रों से बाणों की बौछार निकलती थी तो आसमान पर बाणों का भँवर छा जाता था। शत्रुओं के कानों में तीखे बाणों की सनसनाती बौछार इस तरह सुनाई पड़ती थी, जैसे कानों में गंगा की कलकल ध्वनि सुनाई पड़ रही हो।

गाजीपुर-भितरी से स्कंदगुप्त का कैसा गहरा रिश्ता था, यह तथ्य इतिहास में सिद्ध है। स्कंदगुप्त की लाट और उसका शिलालेख और उसके द्वारा वहाँ स्थापित विशाल विष्णु मंदिर के भग्नावशेष सारी कहानी खुद ही बयाँ कर देते हैं। किंतु स्कंदगुप्त का रिश्ता तो संपूर्ण भारत-भुवन की रक्षा के प्रश्न से कहीं गहरे जुड़ा था, उसने भितरी और औड़िहार की भूमि से हूणों के विरुद्ध जिस महायुद्ध का प्रारंभ किया, उसके बारे में इतिहास के स्रोत और लोकमन की स्मृतियों के जरिए हम अनेक कथाएँ सुनते हैं। इतिहासकारों की कलम से पुरातत्त्व के द्वारा सामने लाई गई जानकारी से और लोकस्मृतियों से छनकर आनेवाली कथात्मक जानकारी, इन सबको मिलाकर ही स्कंदगुप्त की सही तसवीर आधुनिक भारत के सम्मुख रखी जा सकती है।

औड़िहार (गाजीपुर) से कुछ ही किलोमीटर की दूरी पर गोरखा नामकी न्यायपंचायत है। इसी में जो तेलियाना मौजा पड़ता है, वहाँ हुणरही माता का करीब एक बिगहे में फैला हुआ विशाल परिसर आज भी सुरक्षित है, इसके चारों ओर कई एकड़ भूमि ऊसर है, आबादी थोड़ी है; हालाँकि इसके बड़े इलाके में अब लोग खेती करते हैं। जो चित्र यहाँ दिया गया है, यह उसी हुणरही माता के मंदिर परिसर का है, जहाँ रहनेवाले ८० साल के पुजारी के कथनानुसार, उन्हें नहीं पता कि यह मंदिर परिसर कितना पुराना है। पुजारी और स्थानीय निवासियों के अनुसार, उनके दादे-परदादे के जमाने से माता की पिंडी यहाँ लोग देखते आ रहे हैं, साफ है कि यह स्थान सैकड़ों साल पुराना है। सवाल है कि क्या इस स्थान का कोई संबंध हूणों और स्कंदगुप्त की टक्कर से हो सकता है? जैसा कि मैंने पिछले भाग में बताया था कि पूर्वांचल के लोकमन में आज भी हूणों का खौफ विविध किंवदंतियों के रूप में जीवित है। यहाँ माताएँ आज भी बच्चों को सुलाते वक्त कहती हैं कि बचवा सुत जा, नाहीं त हूणार आ जाई, अर्थात् बेटा सो जा नहीं तो हूण आ जाएगा।

गोरखा-तेलियाना के इस हुणरही मंदिर के बारे में और लोक किंवदंतियों पर अगर गौर करें तो इतिहास के अनेक रहस्यों से परदा उठ सकता है। स्थानीय लोग बताते हैं कि मंदिर परिसर में पीपल के पेड़ के नीचे जो पिंडी रखी है, वह असल में हूणों का अंत करनेवाली हूणरही (हूण-अरि) चौरा माई का स्थान है। स्कंदगुप्त ने हूणों के विरुद्ध जो सैन्य व्यूह की रचना की थी, इसमें यह स्थान कहीं-न-कहीं केंद्र में अवश्य रहा होगा, क्योंकि आज भी इस स्थान के प्रति लोकमन में असीम श्रद्धा का भाव भरा हुआ है। हो सकता है कि यहीं पर हर युद्ध के पहले रणक्षेत्र में परंपरा रूप में भवानी भगवती की प्रतिमा स्थापना का कार्य स्कंदगुप्त ने पूरा किया हो। हूणारि यानी हूण-अरि अर्थात् हूणों का वध करने के लिए प्रेरक भवानी भगवती महिषासुर मर्दिनी देवी दुर्गा की प्रतिमा की स्थापना के बिना तब भारत में युद्ध जीतने की कल्पना कठिन थी।

इस हुणरही मंदिर के बारे मे लोकमन में प्रचलित कहानी है कि एक गड़रिए की मासूम बच्ची को रात के अँधेरे में हुणार उठा ले गए और फाड़कर उसे खा गए, उसकी क्षत-विक्षत लाश के अवशेष जब देखे गए तब स्थानीय लोगों ने माता से हुणारों के विनाश के लिए यहीं पर प्रार्थना की, माता ने उनकी सुनी और हुणारों के विनाश के लिए सिंह पर सवार होकर अपनी तलवार से सदा के लिए हुणारों का खात्मा करना तय कर लिया। भारत की लोकस्मृति में दर्ज यह कहानी और हूणों के अंत से जुड़ा यह हूणांतक स्थान रोमांचकारी है। लोककथाओं में माता जिस सिंह पर सवार होकर हूणों का वध करने निकली थीं, वह सिंह कोई और नहीं बल्कि वही नरव्याघ्र स्कंदगुप्त था, जिसका नाम कालांतर में इतिहास ने

भुला दिया, लेकिन जिस खौफ से उसने भारत को बचाया, वह खौफ लोगों के मन में अब तक बसा रह गया।

आचार्य वासुदेव शरण अग्रवाल उसकी वीरता का बखान करते हुए लिखते हैं, ''मध्य एशिया से चींटियों की तरह असंख्य दल बाँधकर जंगली और बर्बर हूण चीन से फ्रांस और यूनान तक समस्त भूभाग में फैल गए थे। डैन्यूब से वोल्गा तक तथा थ्यूरिंजिया और रोमन साम्राज्य तक इनकी लपलपाती हुई तलवारों ने अनगिनत मनुष्यों को चाट लिया था। हूणों के कंधे बड़े-बड़े और नाक बैठी हुई थी, माथे का हिस्सा छोटा था और जैसे उनकी आँखें काली-काली उनके उठे सिरों में ही घुसी रहती थीं, क्रोध के समय पुतलियाँ इधर-से-उधर डोलने और नाचने लगती थीं, होंठों के दोनों किनारों से पतली मूँछें खड़ी फड़कती थीं और मृत्यु को गेंद की तरह ठुकराते हुए ये बलशाली वेग से संपन्न घोड़ों पर सवार होकर समस्त जन-धन, नगर और देशों को रौंदते हुए ऐसे चलते थे, जैसे कि खेतों को नष्ट कर झुंड में चलनेवाला असंख्य टिड्डी दलों का झनझन सुर में उड़ता समूह। इन हूणों के अत्याचारों से यूरोप काँप उठा, इनकी लगातार टक्कर और ठोकर से यूनान-मिस्र और रोम धरती के धूल में मिल गए। ऐसे विश्व को कँपा देनेवाले प्रलयंकारी हूणों से समरांगण में लोहा लेने जब स्कंदगुप्त अपने सैन्यबल के साथ दो-दो हाथ करने उतर पड़ा तो जैसे बाजी ही पलट गई।'' स्कंदगुप्त के रणकौशल, बाहुबल और पराक्रम को देखकर हूणों की सेनाएँ थर्रा उठीं, उसकी अद्वितीय वीरता देखकर जन-मन के भीतर पसरा डर जाता रहा, ऐसे महान् सेनानी स्कंदगुप्त को भारत का महान् रक्षक, असल गोप्ता या महात्राता अर्थात् The Saviour of India नहीं कहें तो फिर कौन है इतिहास में जिसे भारत-रक्षा-केसरी की उपाधि से नवाजा जाए।

जैसे ही हूणों ने तक्षशिला विश्वविद्यालय को नष्ट-भ्रष्ट किया, वैसे ही तब के भारत के केंद्र पाटलिपुत्र में सैन्य हलचल बढ़ गई, दरबार में केवल एक ही चर्चा कि हूणों पर लगाम कैसे लगेगी, इनका संख्याबल कितना है, जो समूचे विश्व को रौंदते चले आ रहे हैं, क्या उन्हें रोक पाने के लिए आवश्यक सैन्यबल और संसाधन हमारे पास हैं? और सबसे अहम सवाल यह कि आखिर युद्ध का नेतृत्व कौन करेगा, क्योंकि सम्राट् तो बुजुर्ग हो चले हैं, रणभूमि में उतरने की हालत में नहीं हैं और उनके तीन पुत्रों पुरुगुप्त, स्कंदगुप्त और घटोत्कचंगुप्त में उत्तराधिकार भी तय नहीं है। कहते हैं कि संकटों से घिर जाने के समय ही महानायक की पहचान होती है। स्कंदगुप्त ने स्वयं ही आगे बढ़कर हूणों के विरुद्ध सैन्यबल का नेतृत्व करने का प्रस्ताव दिया और इस प्रकार राष्ट्र रक्षा के महायज्ञ में उसने अपने जीवन की आहुति देने जैसा बड़ा फैसला कर अपनी कर्तव्यपरायणता और सम्राट् का वास्तविक उत्तराधिकारी होने की योग्यता सिद्ध कर दी।

इतिहास के स्रोत बताते हैं कि हूणों ने पहला धावा किसी पुष्यमित्र या व्यूढ़मित्र नाम के व्यक्ति के नेतृत्ववाले सैन्यदल को आगे रखकर बोला था। इसमें यह रहस्य भी जाहिर होता है कि हूणों ने गुप्त साम्राज्य के केंद्र को कब्जे में लेने के लिए पहले देसी शक्तियों को साथ आने का लालच दिया था, जिसमें से यह पुष्यमित्र नामक गद्दार हूणों से जाकर मिल गया। इस तथ्य की ओर प्रोफेसर आर.सी. मजूमदार ने संकेत किया है कि 'पुष्यमित्र के जत्थे हूणों से संबंधित ही थे।' क्योंकि स्कंदगुप्त की हूणों से अंतिम टक्कर के बाद इनका भारतीय इतिहास में अता-पता तक नहीं चलता है।

भितरी शिलालेख संकेत करता है कि अपने सैन्यबल को उत्साह से भरने के लिए इस महान् सेनापति युवराज ने सैनिक शिविर के बिस्तर का ही त्याग कर सैनिकों के साथ ही भूमि पर सोना शुरू किया। भितरी शिलालेख के अनुसार—'विचलितकुललक्ष्मीस्तम्भनायोद्यतेन क्षितितलशयनीये येन नीता त्रियामा।' अर्थात् उस महापराक्रमी ने राज्य बचाने के लिए समरभूमि में सैनिकों के साथ पृथ्वी पर रात्रि व्यतीत की। उसके इस फैसले ने एक बार फिर से निराश सैन्यबल में देश के लिए सबकुछ कर गुजरने का ताव भर दिया।

आचार्य वासुदेवशरण अग्रवाल लिखते हैं—''जिस देश में सेनापति इस तरह से कड़ी जमीन पर रात गुजारकर तपस्या करते हैं, भला उस देश को संसार में कौन समाप्त कर सकता है।'' फिर जो हुआ, उसे उस समय के संसार ने देखा कि हूणों के मुंड के मुंड भारत की धरती पर कट-कटकर गिरने लगे। हूणों के राजा को रणभूमि में घसीटते हुए उसके सीने को चरण-पीठ बनाकर स्कंदगुप्त ने समस्त हूण जाति के अत्याचारों पर मानो अपना बायाँ पैर स्थापित कर अंतिम विजय का डंका बजा दिया। भितरी शिलालेख में लिखा गया कि '...अमित्रांश्च जित्वा क्षितिप-चरणपीठे स्थापितो वामपादः।' हूणों को जीतकर उनके राजा के सीने को चरणपीठ बनाकर स्कंदगुप्त ने उस पर अपना बायाँ पैर रख दिया।

महापराक्रमी स्कंदगुप्त विक्रमादित्य यहीं पर नहीं रुके। हूणों के राजा के मारे जाने के बाद उसकी शेष शक्ति के उन्मूलन का व्यापक अभियान उन्होंने हाथ में लिया। कई-कई रातें अश्व पर सवार होकर अपने सैन्यबलों के साथ उसने हूणों की भागती सेना को खदेड़ते हुए बिताईं। पश्चिमोत्तर में पेशावर पार तक पीछा किया तो हूणों के भागते और रास्ता भटके सैनिकों का सफाया गुजरात तक में हुआ। बीन-बीनकर उसने हूणों के आतंक से भारत की धरती को मुक्त कराया। संपूर्ण उत्तर भारत ने मानो राहत की साँस ली। बच्चे-महिलाएँ और बुजुर्गों ने उस महान् व्यक्तित्व को हूणों पर असंभव लगनेवाली विजय प्राप्त कर वापस लौटते अपनी आँखों से देखा तो उसकी जय-जयकार से आसमान गूँज उठा।

इतिहास में अत्यंत प्रसिद्ध गुजरात के गिरनार पर्वत पर अंकित जूनागढ़ अभिलेख स्कंदगुप्त के गुजरात अभियान पर प्रकाश डालता है, जिसमें लिखा है कि 'नरपति भुजंगानाम मानदर्पोत्फणानाम प्रतिकृति गरुडानां निर्विषी चावकर्ता...' अर्थात् जैसे गरुड़ भुजंग आदि सर्पों का रक्तपान कर जाते हैं, उसी तरह से उस महापराक्रमी ने हूण नामक विषैले सर्पों के आतंक और अहंकार रूपी फन को सदा के लिए कुचल दिया।

साअ

भारत अध्ययन केंद्र
काशी हिंदू विश्वविद्यालय
वाराणसी-२२१००५
दूरभाष : ७८३८९४४४१९

पीछे छूट गई आवाजें

● राजकुमार कुंभज

जाने-माने कवि-लेखक। चार काव्य-संग्रह और एक व्यंग्य-संग्रह प्रकाशित। कई कविता-संकलनों में कविताएँ सम्मिलित तथा अंग्रेजी सहित कुछ भारतीय भाषाओं में अनूदित।

चाहता हूँ धूप-धूप

चाहता हूँ धूप-धूप
ये छाँव-छाँव चलना भी क्या चलना हुआ!
ठिठुरन है, अँधियारा है, सूना है
और है वीरानी-सी वीरानी भी कोई तो हो
तनिक नहीं चाहता फुरसत, फिर भला मैं रुकता क्यों?
चाहता हूँ धूप-धूप
फिर चाहे सीने और सिर-ऊपर ही
क्यों न हो सूरज मई-जून
क्यों न हो मटमैली ही फिर एक शाम
क्यों न हो फिर-फिर क्षितिज-भ्रम
चाहता हूँ धूप-धूप
ऊँचे हों हाथ, ऊँचे हों माथ
बंद खिड़कियाँ हैं जो भी खुलें सब
फड़फड़ा रही गौरैयाँ तमाम हो जाएँ सकुशल
एकांत हो जाए आवारा, है जरूरी
चाहता हूँ धूप-धूप
कविताओं की तलाश में तिल-तिल मरता हूँ
मर रहे आदमी के जीवन में थोड़ा सा किंतु
और बहुत, बहुत ही थोड़ा सा उजास भरता हूँ
मुझे फाँसी दो या दो आजीवन कारावास
चाहता हूँ धूप-धूप।

दस्तक देते-देते

दस्तक देते-देते
बरस-दर-बरस बीत गए सत्तर
दरवाजा है कि खुलता ही नहीं है बेशर्म
क्या करूँ, क्या करूँ, क्या करूँ मैं कि खुले वह
शायद ठोकर मारने से खुल जाएगा सोचता हूँ
लेकिन क्या यह तब भी लोकतंत्र कहलाएगा?
सोचता हूँ, सोचता हूँ आजकल यही
दस्तक देते हुए।

देखते-देखते

देखते-देखते
थक-हार जाती है दृष्टि
दूर तक एक हाहाकार समुद्र है सिर्फ
ज्यादा दूर तक देखूँ तो
ज्यादा देर तक देखूँ तो
सिर्फ एक अँजुरी भर धुंध के सिवाय
कुछ भी नहीं
थक-हार जाती है दृष्टि
देखते-देखते।

आवाजों की दुनिया में

आवाजों की दुनिया में
अकसर कुछ आवाजें छूट जाती हैं पीछे
पीछे छूट जाती हैं जो आवाजें
उन आवाजों की पहचान भी छूट जाती है पीछे
पीछे छूट गई आवाजें
पीछे छूट गए लोगों की आवाजें हैं
पीछे छूट गई आवाजें
और पीछे छूट गए लोग, जब मिलते हैं कहीं
एक-दूसरे से, एक-दूसरे की तरह
तो हँसने लगते हैं अपनी-अपनी अजनबीयत पर
उनकी हँसी में छुपा होता है उनका रुदन
उनकी हँसी में छुपी होती है उनकी भरपूर असफलताएँ
उनकी हँसी में छुपे होते हैं उनके भरपूर संघर्ष
बदलते मौसम की फुसफुसाहटें बता रही हैं
कि अब जरा भी अकेले नहीं वे
उनके पीछे, पीछे छूट गई आवाजों का एक काफिला है
आवाजों की दुनिया में।

३३१ जवाहर मार्ग
इंदौर-४५२००२
दूरभाष : ०७३१-२५४३३८०

दक्षिण अफ्रीका का दामाद

मूल : **ज्योतिर्लता गिरिजा**

अनुवाद : **ए. भवानी**

प्रसिद्ध तमिल लेखिकाओं में ज्योतिर्लता गिरिजा का विशिष्ट स्थान है। उनका जन्म तमिलनाडु के वत्तलकुंडू नामक स्थान पर हुआ। उन्होंने एस.एस.एल.सी. तक ही पढ़ाई की, मगर प्रसिद्ध तमिल लेखक श्री रा.कि. रंगराजन के द्वारा बाल साहित्यकार के रूप में उनका पहला परिचय साहित्य-जगत् को मिला। उनके उपन्यास के लिए 'दिनमणि कदिर पुरस्कार', 'कल्कि स्वर्ण जयंती ऐतिहासिक उपन्यास पुरस्कार', 'अमुद सुरभि पुरस्कार', 'तिरुप्पूर कलै इलक्कियप पेरवै पुरस्कार' आदि मिले। 'नम्नाडु' बाल उपन्यास के लिए उन्हें तमिलनाडु सरकार द्वारा श्रेष्ठ उपन्यास का पुरस्कार मिला। लघु कथाओं के लिए 'लिली देव शिखामनी न्यासी पुरस्कार' और 'राजा सर अण्णामलै पुरस्कार' आदि मिले। उनका उपन्यास 'नम्नाडू' उग्रेन में अनूदित होकर सन् 1987 में मास्को में लोकार्पित हुआ। सन् 1975 से वे अंग्रेजी में भी लिखने लगीं। अंग्रेजी में उनकी पच्चीस कहानियाँ और एक लघु उपन्यास प्रकाशित हैं। उन्होंने अंग्रेजी में 'कंब रामायण' के 1789 पद्यों का अनुवाद भी किया है। यहाँ उनकी एक तमिल कहानी का हिंदी भाषांतरण दे रहे हैं।

'अंबुलु, ओ अंबुलु, सुनते हो!' ऊँची आवाज में पुकारते हुए घर के अंदर प्रवेश करते हुए रामभद्र को चकित नजरों से देखते हुए विशालम ने पूछा।

'क्या बात है? क्या कोई खजाना हाथ लग गया है?'

दालान के एक कोने में दीवार से सटकर बैठी, पत्रिका पढ़ती विमला भी पिता को आश्चर्य से देख रही थी। पत्नी को जवाब देने से पहले रामभद्र ने अपनी पुत्री की ओर मीठी मुसकराहट फेंकते हुए कहा, ' खजाने से बढ़कर कुछ हाथ लग गया है। दक्षिण अफ्रीका के उस लड़के ने अपने पिता को पत्र लिखा है कि उसे हमारी विमला पसंद है। बाजार में स्वामीनाथन से मिला तो उन्होंने कहा और दो महीनों में लड़का भारत आ जाएगा। तब शादी हो जाएगी।' रामभद्रन ने पत्नी को बताया।

वह अपनी पुत्री को देखकर मुसकराई। विमला ने सिर उठाकर उनमें से किसी को न देखा। उलटा उसने पत्रिका के अंदर मुँह छिपा लिया, जिससे वे लज्जा से लाल हो आए उसके मुख की लालिमा न देख सके।

'देखा! मैं कब से कह रहा हूँ कि हमारी विमला तकदीरवाली है। ठीक वैसा ही हो रहा है। पहली बार जो वर देखा, वही तय हो रहा है। ऐसा भाग्य किसको मिलेगा?' जोशीले स्वर में कहता हुआ पत्नी के पीछे-पीछे रसोईघर में आ गया।

'वह कैसे इतना निश्चिंत होकर कह सकते हैं? जन्मकुंडली मिल गई है। रुपया-पैसा भी वे जितना माँगेंगे, हम देने को तैयार हैं। बस इतनी सी बात पर आप ऐसे उछल रहे हैं, मानो शादी पक्की हो गई हो?'

'बस पक्की ही समझो। फोटो देखते ही लड़के ने कह दिया कि लड़की पसंद है। अब क्या?'

'हमारी विमला को भी लड़का पसंद आए तब न?'

'क्यों पसंद न आएगा, वह भी तो सुंदर व सुडौल है। स्वामीनाथन ने फोटो दिखाया था न?'

रामभद्रन पैसेवाले थे। वे नहीं चाहते थे कि उनकी बेटी नौकरी करे। ठीक उम्र में शादी कर देने के लिए बेचैन थे वे। विशालम् तो उनसे भी अधिक बेचैन थी। दक्षिण अफ्रीका की एक बड़ी कंपनी में ऊँचे पद पर आसीन अय्यासाई अच्छा-खासा वेतन पा रहा था। रामभद्रन को उनके मित्र ने उसके बारे में बताया था। उसके बाद उन्होंने स्वामीनाथन से मिलकर बात की। उनकी मुँहमाँगी वस्तुएँ देने की क्षमता उनमें थी। जन्मकुंडली और अन्य लोकोपचार की बातों के उपरांत स्वामीनाथन ने लड़की का फोटो लेकर लड़के के पास भेजा था। उसने भी उत्तर लिख भेजा था कि लड़की पसंद है।

माता-पिता की इस बातचीत को सुनती हुई विमला वहाँ बैठी रही। यह जानकर कि लड़का मद्रास में एम.एस-सी. में सर्वप्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण आया था, वह असीम हर्ष में डूबी थी।

कॉफी पीकर रसोईघर से बाहर निकलते वक्त रामभद्र पुत्री को देखकर यह कहते गए कि रसोई का काम खूब अच्छी तरह सीख ले। विमला हँसकर मौन रही। पहला ही लड़का वर बनना तय हुआ,

जानकर वह आश्चर्य में पड़ गई। अभी दस दिन ही हुए थे। विमला एक तमिल पत्रिका पढ़ रही थी। उसमें एक लेख था। वह अंग्रेजी का तमिल अनुवाद था। संयोग से उसने वह लेख पढ़ा। उसके लेखक थे—ए.एन.ए. सामी। दक्षिण अफ्रीका से प्रकाशित निबंध का तमिल अनुवाद था। वह पत्रिका विभिन्न राष्ट्रों के संबंध में विशेष स्मारिकाएँ प्रकाशित करती थी। उस क्रम में यह दक्षिण अफ्रीका की विशेष स्मारिका थी। दक्षिण अफ्रीका शब्द ने उसमें एक गुदगुदी पैदा कर दी थी। उसने उस पत्रिका का एक शब्द भी न छोड़ा था। उसी में वह होश खो बैठी थी। शायद उसका विचार यह रहा हो कि वहाँ जाकर बसना पड़े तो उस देश की जानकारी रखना अच्छा है।

उस लेख का शीर्षक था 'अपारतीड'। पता नहीं अनुवादक ने शीर्षक का अनुवाद क्यों नहीं किया। लेख सशक्त गंभीर शैली में था। उसने मन-ही-मन सोचा कि जब अनुवाद का प्रभाव इतना प्रभावकारी एवं गतिशील है तो मूल का प्रभाव कैसा होगा!

दक्षिण अफ्रीका में अल्पसंख्यक अंग्रेज शासक थे। वे स्वदेशी काले लोगों को अछूत बनाकर किस तरह यातनाएँ देते थे—इसी का सविस्तार सजीव वर्णन उस लेख में था। लेखक ने यह तर्क दिया था कि हमारे देश में छुआछूत की प्रथा उन यातनाओं की तुलना में कुछ भी नहीं। लेखक ने यह भी चाबुक लगाई थी कि समस्त मानव शरीर में खून का रंग लाल ही है। बाहरी चर्म के कालेपन को देखकर किसी की उपेक्षा करना मानवता के खिलाफ है। विमला ने हमेशा की तरह यह पढ़ा, फिर भूल भी गई।

एक सप्ताह बीता कि उसके पिता ने उत्साह भरे स्वर में उसे यह सूचना दी कि 'हिमालय' नामक उस पत्रिका में 'अपारतीड' नामक लेख लिखनेवाला ए.एन.ए. सामी और कोई नहीं, अपितु वह दक्षिण अफ्रीकावाला वही लड़का अय्यास्वामी है।

ए.एन. अय्यास्वामी को संक्षेप में उसने ए.एल.ए. सामी रख लिया था। उसके दफ्तर में भी उसका वही संक्षेप नाम चलता है। अपना नाम पुरानी परिपाटी का जानकर उसे बदल लिया है।

विशालम् जो यह सारा विवरण सुन रही थी, बोली—

'मेरा भी विचार था कि नाम पुराने ढंग का है।'

'नाम में क्या रखा है, अय्यास्वामी हो या अण्णासामी! हमें तो असामी अच्छा चाहिए। क्यों ठीक है न?'

हँसते हुए रामभद्रन ने पुत्री की ओर कनखियों से देखा। विमला के मन में गर्व का अनुभव हो रहा था। अब की बार वह अपने लज्जा से हो आए लाल चेहरे की लालिमा छिपाने में असमर्थ थी। थोड़ा-बहुत छिपाना चाहे भी तो हाथ में पत्रिका कहाँ थी? उसके मन में अंग्रेजी में लिखे मूल लेख को पढ़ने की तीव्र इच्छा जाग्रत् हो गई, पर दक्षिण अफ्रीका में प्रकाशित वह पत्रिका भारत में न मिलने के कारण वह बहुत निराश थी।

दो महीने बीते। लड़का भारत आया। लड़की देखने-दिखलाने का अध्याय पूरा हुआ। विमला को लड़का पसंद आया। लड़के के माता-पिता बोले, 'हम समाचार भेजेंगे।' यह सुनकर रामभद्रन चौंक पड़े। उनका मन उद्विग्न हो उठा। दो दिनों बाद पत्र आया। वह पढ़कर रामभद्रन और विशालम् निराश हो गए। विमला को झटका लगा और वह आपा खो बैठी। कारण यह न था कि उसने उसको उदासीन किया था, पर उदासीनता का कारण जो उसने बताया था, जिससे उसे धक्का लगा, झटका लगा; कारण था''विमला काली है।

अभिषेक अपार्टमेंट, ४१/६२ अ,
न्यू बोग रोड, टी. नगर, चेन्नै-६०००१७

पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 1110734393 IFSC–CBIN 0280297 में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा sahityaamritindia@gmail.com पर इ-मेल करें।

काहे प्रिंसिपल माथुर भए त्यागी

• हरीश नवल

प्रिंसिपल माथुर ने अचानक त्याग-पत्र दे दिया, यह बात कॉलेज परिसर में उसी दिन और विश्वविद्यालय में रातोरात फैल गई। अभी उन्हें पद ग्रहण किए दो महीने भी नहीं बीते थे कि पद त्याग दिया, जबकि वे एक वर्ष का लियन लेकर आए थे कि यदि नहीं जँचेगा तो प्राचार्य पद छोड़कर पुन: अपने कॉलेज वापिस चले जाएँगे, अन्यथा एक वर्ष बाद लियन समाप्त होने पर नए कॉलेज में परमानेंट प्रिंसिपल हो सकते थे। वे दूसरे कॉलेज में तीस वर्ष प्रोफेसरी करने के बाद मेरे कॉलेज में प्राचार्य पद पर चयनित होकर आए थे। स्टाफ के लिए चूँकि वे नए थे, इसलिए अभी उन्हें पूरे तरह समझा नहीं जा सका था। अलबत्ता उनकी मारक हँसी सबके मन-मस्तिष्क में कौंधने लगी थी। वे बातें कम करते थे और हँसते ज्यादा थे। कॉलेज की कोई समस्या उनकी हँसी को दबा न पाई थी। स्टाफ की बैठक में भी वे जोर-जोर से हँसकर दूसरे की बात अनसुना करने में एक्सपर्ट घोषित किए गए थे।

मैं उनका पुराना मित्र रहा था, जब भी उनके पिछले कॉलेज में जाता, चाय-पान उन्हीं के साथ होता था। मुझे उनकी हँसी बर्दाश्त करने की गहन आदत थी, जब वे मेरे कॉलेज में प्रधानाचार्य के रूप में मेरे बॉस बने, बकौल उनके एक मैं ही बिना लिए-दिए (बतर्ज 'ले दे के') उनका मित्र था, इसलिए कुरसी सँभालते ही उन्होंने सबसे पहले मुझे ही प्रिंसिपल कक्ष में बुलाया था। और मेरी दोस्ती की दुहाई देते हुए मुझसे गुजारिश की थी कि मैं उनके कार्य में उनकी सहायता करूँ। उनके आदेश अथवा निर्देशानुसार जब भी मेरी कक्षा न हो रही हो, उनके साथ उनके कार्यालय में बैठकर प्रशासन में हाथ बँटाऊँ। वे कार्यालय में होते थे, मैं भीतर प्रवेश करता था, वे मृदुल हास्य से मेरा स्वागत करते थे और रौद्र-हास्य से चपरासी को चाय-समोसे लाने का ऑर्डर देते थे, समोसा भक्षण के साथ-साथ उनकी अट्टहासमयी हँसी से मैं कर्ण-रक्षण करता रहता था, मादक हास्य से वे मुझसे कार्यालयी मुद्दों पर चर्चा करते थे। इस संपूर्ण कार्यक्रम में मेरे आकर्षण का घोर केंद्र गरम समोसे और ताजी चाय होते थे। आखिरकार चाय-समोसे कॉलेज प्रधानाचार्य के कक्ष में भली-भाँति पदार्पित होने होते थे, उस दिन उनके त्यागी होने की खबर सुनकर मैत्री के नियमानुसार उनसे मिलने उनके कक्ष में गया, यह क्या

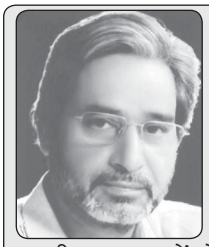

प्रख्यात व्यंग्यकार। अब तक छह व्यंग्य-संकलन, तीन आलोचनात्मक पुस्तकें, नौ संपादित ग्रंथ और बावन ग्रंथों में सहयोगी रचनाकार के रूप में रचनाएँ प्रकाशित। एक हजार से अधिक रचनाएँ पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। 'बागपत के खरबूजे' पर युवा ज्ञानपीठ पुरस्कार तथा तेरह राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित। अनेक व्यंग्य अंग्रेजी, बल्गारियन, मराठी, उर्दू, बँगला, पंजाबी और गुजराती में भी अनूदित।

मुझे देखने के बावजूद भी उनके होंठों और आस-पास के परिवेश में एक कण भी हँसी का नहीं छिटका। उन्होंने दोनों हाथों से अपना माथा पकड़ा हुआ था। मैंने पूछा, डॉ. साहब, क्या आपके सिर में दर्द है? और सुना आपने, त्याग-पत्र दे दिया आप तो यहाँ खुश थे, ऐसा क्या हुआ कि आपको यह करना पड़ा?

उन्होंने धीरे से अपना माथा अपनी हथेलियों से अलग किया और हाथ मलते हुए कातर भाव से मेरी ओर ताक, मेरे चेहरे पर उभरे सवालिया निशान उन्हें नजर आ गए। उन्होंने नॉर्मल होने की फीकी सी कोशिश की। उठे, दरवाजा बंद किया, अपनी कुरसी पर न बैठे मेरे साथवाली कुरसी पर बैठ गए।

मेरा हाथ हाथोहाथ लेकर करुण स्वर में पूछने लगे, 'क्या तुम पर्मानेंट हो?' बड़ा विचित्र सा सवाल उन्होंने किया था। मैंने उत्तर दिया, 'बाईस साल से पढ़ा रहा हूँ, तब भी आप यह सवाल कर रहे हैं?'

मेरे जिज्ञासा और आश्चर्य के वशीभूत चेहरे की ओर देखकर वे बोले, 'तब तो ठीक है।' मैंने कहा, 'डॉ. साहब, कुछ खुलकर तो बताइए, मेरा सवाल कुछ और था आपका जवाब कुछ और?'

एक गहरी और ठंडी साँस लेकर वे बोले, 'अरे भई, सुबह लगभग नौ बजे की बात है, जब मैं कॉलेज आया और अपनी गाड़ी पार्क करके मुख्य लॉन से गुजरता हुआ ऑफिस की ओर जा रहा था। मैंने देखा, एक पेड़ के नीचे एक बिल्ली की लाश पड़ी है, वहाँ पानी दे रहे एक कर्मचारी से मैंने कहा, 'देखो, इस बिल्ली को यहाँ से हटवा दो।' उसने हाथ जोड़ते हुए बताया कि वह दिहाड़ी मजदूर है, इसलिए मैं बड़े माली से बात करूँ। मैं ऑफिस में आया और मैंने हेड माली को बुलाने का आदेश दिया।

हेड माली हाथ जोड़ता हुआ आया और मुझसे आदेश माँगा। मैंने अपने स्टाइल में हँसते-मुसकराते उसे लॉन में आम के वृक्ष के नीचे पड़े बिल्ली के शव को तुरंत हटा देने के लिए कहा। उसने दोनों कानों से मेरी बात सुनी और मुख से संयत स्वर में कहा, 'सर, अभी चेक करता हूँ।' मैंने कहा कि चेक क्या करना, बिल्ली का शव हटाओ, वह एक कंधे से अपना अँगोछा हटाकर दूसरे पर रखते हुए बाहर निकल गया।'

दस-बारह मिनट बाद वह आया और बोला, 'सर, चेक कर लिया हूँ, यह मेरी ड्यूटी में नहीं है। सर्विस बुक में कहीं नहीं लिखा।' और इसके पहले मैं उसे कुछ कह पाता, वह तीर हो गया। मुझे झुँझलाहट हुई, अपमान महसूस हुआ, मैंने एस.ओ. को बुलाया, वे आए, मैंने उनके सामने समस्या रखी, उन्होंने उसे अपने पास धरा और प्रश्न फेंका—सर, इसमें मैं क्या कर सकता हूँ? मैं और झल्ला गया और उन्हें याद दिलाया कि वे सेक्सन ऑफिसर हैं, माली को वे धमकाएँ और बिल्ली उठवाएँ। एस.ओ. ने हाथ जोड़ते हुए शालीनता से उत्तर दिया, 'सर, मेरे ऊपर ए.ओ. साहब हैं, हम सब पर उन्हीं का प्रशासन है, आप कहें तो मैं उन्हें आपके पास भेज देता हूँ। घंटेभर बाद एडमिनिस्ट्रेटिव ऑफिसर आए, मैंने उन्हें सारा किस्सा बताया और मरी हुई बिल्ली को उठवाने की बात पुनः दुहराई, यह भी बताया कि माली इसे अपनी ड्यूटी नहीं मान रहा।

ए.ओ. साहब ने आत्मविश्वास संचित दीर्घ स्वर में बताया कि सच में यह माली की ड्यूटी नहीं है यह सफाई कर्मचारी की ड्यूटी है, जब भी कोई ऐसी घटना होती है, सफाई कर्मचारी ही करते हैं।

सफाई कर्मचारी के मेरे कक्ष में पहुँचने से पहले ही मैंने पाया कि मेरा तापमान काफी बढ़ चुका है। सफाई कर्मचारी ने समस्या का श्रवण किया और उसी माली की भाँति अपनी ड्यूटी सर्विस बुक देखने की बात कही, अब पारा आसमान पर था। मैंने उसे बताया कि प्रशासनिक अधिकारी बता गए हैं कि ऐसी घटना घटने पर तुम्हीं कार्य करते हो, सर्विस बुक में क्या देखना है?

कर्मचारी ने भौंहें उठाते हुए कहा—सर, मैंने कब मना किया, मैं या मेरे विभाग का कोई साथी इसे हटाएगा, पर डयूटी बुक में मुझे यह देखना है कि इसके हटाने का रेट क्या है? मैं अभी देखकर आता हूँ। मैंने उसका रास्ता रोकते हुए पूछा, इस काम के लिए क्या अलग पैसे देने होते हैं, ऐसा तो कोई नियम नहीं होता, तुम्हें तो पूरा वेतन मिलता ही होगा? उसने कॉलर ऊपर किया और कहा—सर, जब प्रोफेसर लोग वेतन मिलने के बावजूद पेपर चेक करने के पैसे लेते हैं, अतिरिक्त इनजवजिलेशन ड्यूटी के पैसे उन्हें मिलते हैं और सर, माफ कीजिए, आप गवर्निंग बॉडी की मीटिंग से बाहर जाते हैं, आपको टी.ए., डी.ए. मिलता है तो क्या हमें एक्स्ट्रा काम करने पर एक्स्ट्रा पैसा नहीं मिलेगा। मैं रूल-बुक लाता हूँ, देख लीजिएगा।

अब मैं भौंचक्का सा रूल-बुक के इंतजार में जुट गया। एस.ओ. और ए.ओ. दोनों रूल-बुक उठाए हुए सफाई कर्मचारी के साथ आए। रूल-बुक में साफ-साफ लिखा था कि किसी पक्षी या जानवर या अन्य प्रकार के जीव के शव को कॉलेज परिसर से हटाने के अतिरिक्त चार्ज देने होते हैं।

अब मैं किंकर्तव्यविमूढ़त्व को प्राप्त था। मैंने स्वर में आदेशात्मकता भरने का प्रयास करते हुए कहा, 'ठीक है तो चार्ज दे दो, लेकिन इससे पहले कि दुर्गंध उठे, उसे उठवा दो।'

वे तीनों चले गए और पाँच मिनट बाद ही सफाई कर्मचारी रूल बुक लेकर हाजिर हो गया, उसने रूल बुक में वह पृष्ठ दिखाया, जिस पर रेट लिखे हुए थे, मुझे वह पृष्ठ दिखाते हुए कर्मचारी बोला—सर, इसमें एक पेंच है। मैं चौंककर बोला, कैसा पेंच? उसने कहा, 'सर, देखिए, इसमें कुत्ते के शव के रेट हैं, कौवे के हैं, कबूतर के हैं, छोटी चिड़िया के हैं, मैना के भी हैं, लेकिन सर, कहीं भी बिल्ली के रेट नहीं लिखे, इसलिए यह काम हो न सकेगा। यह रूल के विरुद्ध है।' मैंने खीझ जमा असमंजस भरे स्वर में तनिक तल्खी से कहा, अरे भाई, पैसे दे देंगे, तुम बिल्ली हटाओ, जितने बनते हैं, उतने ले लेना। वह कुटिल सी मुसकराहट के साथ बोला, 'सर, बिल्ली का रेट क्या रहेगा, यह आप या मैं नहीं बता सकते, न एस.ओ., वे तो हमारे कॉलेज की सफाई कर्मचारी यूनियन विश्वविद्यालय की सफाई कर्मचारी यूनियन से मीटिंग करके ही बता पाएगी।'

मुझे अपने कॉलेज प्राचार्य पद का गौरव टूक-टूक होता धराशायी नजर आने लगा। रुका हुआ पारा आसमान से कूदा, मैंने क्रुद्ध साँड़ की तरह भभकते हुए कहा, 'जानते हो, तुम प्रिंसिपल के सामने बोल रहे हो, जो यहाँ सबसे बड़ा ऑफिसर है। मैं तुम्हें नौकरी से निकाल सकता हूँ।'

मेरा स्वर सुनते ही वह अदना सा कर्मचारी मानो मुझपर चढ़ बैठा, अपनी वाणी में पर्याप्त बदतमीजी भरकर बोला, 'प्रिंसिपल साहब, आप क्या निकालोगे मुझे, मैं यहाँ परमानेंट हूँ और आप अभी टेंपरेरी। एक टेंपरेरी आदमी परमानेंट को निकाल ही नहीं सकता, अलबत्ता परमानेंट टेंपरेरी को बाहर कर सकता है।' कहकर वह जोर से दरवाजा उँड़ेलता हुआ मेरे कमरे से बाहर हो गया। मुझे पछतावा हुआ कि मैं अपने कॉलेज में प्रोफेसर ही ठीक था, यहाँ क्यों आया। अभी तो शुरुआत ही थी, आगे जाने क्या होता, यह तो कर्मचारी था, फिर कभी विद्यार्थी अड़ जाते और फिर लैक्चरर भी तो। सो मैंने त्याग-पत्र दे दिया। ऐसा लगा, सिर पर का अत्यधिक बोझ कम हो गया।' उन्होंने अपनी दुखभरी दास्तान बंद की और मेरी ओर अर्थपूर्ण ढंग से निहारा।

मैं अवाक् था, क्या बोल पाता, बस मौन बैठा का बैठा रह गया।

संप्रति माथुर साहब अपने पुराने कॉलेज में फिर से कक्षाएँ लेने लगे हैं, बस उनकी हँसी अब पहले जैसी नहीं रही है।

६५ साक्षरा अपार्टमेंटस
ए-३, पश्चिम विहार, नई दिल्ली-११००६३
दूरभाष : ९८१८९९९२२५

नई सुबह

● मंजरी शुक्ला

''काँच के अंदर झाँकने से किताब पढ़ने को नहीं मिल जाएगा।'' चाय की गुमटी से बापू गुस्से से चीखे, जो लाइब्रेरी के पास ही बनी हुई थी।

छोटू पर इस बात का कोई असर नहीं हुआ। वह चेहरे से बारिश की बूँदें पोंछता हुआ शीशे के अंदर देखता रहा।

अंदर का दृश्य उसके लिए किसी स्वप्न लोक से कम नहीं था। उसी के हमउम्र बच्चे, ढेर सारी किताबें, एक तरफ बड़ा सा पीला शेर, जिस पर छोटे बच्चे किताबें रखकर पढ़ रहे थे और दूसरी तरफ एक आदमी बच्चों को एक किताब से कुछ पढ़कर सुना रहा था।

सड़क पर बैठा छोटू, बच्चों के मुसकराने और उदास होने से अपने मन में फिर एक नई कहानी बुन रहा था। तभी उसे बापू की आवाज आई, ''जल्दी से तीन चाय लाइब्रेरी में देकर आ।''

छोटू के मानो पंख लग गए। ढीली नेकर को ऊपर कर, पेट पर फटी बनियान के छेद को छुपाते हुए वह चाय की गुमटी की ओर दौड़ा।

बापू ने चाय के गिलास और केतली पकड़ाते हुए छोटू से कहा, ''बारिश, धूप और ठंड में भी सड़क पर बैठा शीशे के बाहर से झाँककर किताबें देखता रहता है। तू जानता है कि मेरे पास तुझे स्कूल भेजने के पैसे नहीं है।''

पर तब तक तो छोटू लाइब्रेरी की ओर तेज कदमों से चल पड़ा था। काँच का दरवाजा खोलते ही हमेशा की तरह वह मुसकरा उठा। ललचाई नजरों से रंग-बिरंगी पुस्तकों को देखता हुआ, वह वहाँ पर बैठे लोगों को चाय देने लगा। चाय का गिलास पकड़ते हुए शर्माजी उससे बोले, ''काँच के बाहर से झाँका करते हो, अंदर आ जाया करो।''

छोटू का गला भर आया। डबडबाई आँखों से दो बूँद आँसू फर्श पर गिर पड़े। छोटू जानता था कि सिर्फ शर्माजी ही हैं, जो उससे अच्छे से बात करते हैं। बाकी के लोग तो गिलास पकड़ते हुए भी उसका हाथ छूने से बचते हैं।

सुपरिचित लेखिका। अब तक बाल-साहित्य की पाँच पुस्तकें। देश की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित। संप्रति कुरुक्षेत्र आकाशवाणी में एनाउंसर। स्वतंत्र रूप से साहित्य लेखन में रत।

तभी शर्माजी उससे बोले, ''बारह साल तक के बच्चों के लिए कहानी प्रतियोगिता है। कोई भी बच्चा भाग ले सकता है। कल दस बजे आ जाना।''

एक पल को छोटू की आँखें खुशी से चमकीं, पर दूसरे ही पल उसे याद आया कि उसे तो लिखना ही नहीं आता। छोटू ने चुपचाप चाय के खाली गिलास उठाए और किताबों की ओर ताकता हुआ चल पड़ा।

वह दौड़ता हुआ अपनी चाय की गुमटी पर पहुँचा और गुमटी के पीछे की दीवार पर सिर टिकाकर फूट-फूटकर रोने लगा। बापू उसका रोना सुनकर दौड़ते हुए आए और घबराकर उसे अपनी गोद में उठा लिया। सिसकियों के बीच लाल आँखों से छोटू ने उन्हें पूरी बात कह डाली।

बापू सिर पकड़कर मिट्टी पर ही पसर गए। आज पहली बार अपनी बेबसी और लाचारी पर वह छोटू के गले लगकर रो रहे थे।

सारी रात छोटू कहानियाँ बुनता रहा, मिटाता रहा। बापू भी सूनी आँखों से छत ताकते हुए सारी रात जागते रहे।

दूसरे दिन सुबह छोटू चुपचाप एक पत्थर पर बैठा हुआ था। बापू से उसका दर्द देखा नहीं जा रहा था। वह बोले, ''हम दोनों लाइब्रेरी में चाय देकर आते हैं।''

छोटू ने न में सिर हिला दिया।

पपड़ी हुए होंठ, कुम्हलाया हुआ चेहरा और पतले-दुबले छोटू को देखकर बापू का कलेजा रो उठा। उन्होंने छोटू का हाथ पकड़ते हुए कहा, ''चल, देखकर तो आते हैं, किसे इनाम मिला?''

छोटू किसी तरह खुद को घसीटता हुआ बापू के पीछे चल पड़ा। बापू ने लाइब्रेरी के अंदर पहुँचकर सबको नमस्ते किया और एक कोने

में खड़े हो गए।

तभी शर्माजी उनकी तरफ लगभग भागते हुए आए और छोटू से बोले, ''तुमसे कहा था न, दस बजे आना, अभी ग्यारह बज रहे हैं।''

छोटू बापू के पीछे छिपता हुआ रुँधे गले से बोला, ''मुझे लिखना नहीं आता।''

शर्माजी उसका हाथ पकड़कर आगे खींचते हुए बोले, ''बोलना तो आता है ना, यहाँ कहानी बोलनी है। अब वह बच्चा जैसे ही अपनी जगह पर बैठे, तुम जाकर एक कहानी बोल देना।''

छोटू की आँखों के सामने हजारों कहानियाँ नाच उठीं, जो उसने शीशे के बाहर से ताकते हुए सोची थीं।

वह मंत्रमुग्ध सा आगे बढ़ा और उसने अपनी ही सच्चाई को एक कहानी बनाकर बोलना शुरू किया।

कहानी खत्म करने के बाद उसने सबकी ओर देखा। सभी एकटक उसी को देख रहे थे।

छोटू का ध्यान अब जाकर अपनी कई जगह से घिसी हुई शर्ट, घुटनों तक झूलती नेकर और नीली बद्दी की चप्पल पर गया।

वह सिर झुकाकर जैसे ही चलने को हुआ, तालियों की गड़गड़ाहट से हॉल गूँज उठा। छोटू के कदम रुक गए और उसने सकुचाते हुए शर्माजी की ओर देखा।

शर्माजी ने भावातिरेक में उसे गोदी में उठा लिया और बोले, ''क्या अपना प्रथम पुरस्कार बिना लिये ही चले जाओगे?''

खन्ना मैडम मुसकराते हुए बोलीं, ''दो हजार का इनाम है। अब तुम भी स्कूल जा सकोगे।''

छोटू शर्माजी के गले लगकर जोरों से रो पड़ा, पर इन आँसुओं में कई इंद्रधनुषी रंग झिलमिला रहे थे, जो उसके लिए ढेर सारी खुशियाँ लेकर आए थे और दूर खड़े बापू''वह बार-बार अपने कुरते की आस्तीन से आँखें पोंछते हुए मुसकरा रहे थे।

क्वार्टर नं. डी-१४३३
इंडियन ऑयल कॉरपोरेशन लि.
रिफाइनरी टाउनशिप, गाँव व पोस्ट-बहोली
पानीपत-१३२१४० (हरियाणा)
दूरभाष : ९६१६७९७१३८

किसी की उधारी है जिंदगी

गजल

● जॉनी अहमद

जिंदगी

इस एहतियात से हमने गुजारी है जिंदगी,
जैसे हम पर किसी की उधारी है जिंदगी।

बारहा किस्मत ने ऐसे सवाल हम पर दागे,
खिलती धूप में जैसे बर्फबारी है जिंदगी।

कैसे धरे इल्जाम गैरों पर कि बिखड़ गए,
अर्श से फर्श तक खुद उतारी है जिंदगी।

वो जो हर बात पे मरने की बातें करते हैं,
सच कहूँ तो उनको भी प्यारी है जिंदगी।

क्यूँ हमें चैन से जीने नहीं देता ये जमाना,
जिसे हम जी रहे हैं वो हमारी है जिंदगी।

हादसे इंतजार करते हैं कि हम सो जाएँ,
दानिश-मंद जानते हैं बेदारी है जिंदगी।

हकीकत

मैं हकीकत में था उसके या था उसके ख्वाब में,
आगाज से ही कमजोर था मैं दिल के हिसाब में।

यूँ तो हर बात में उसकी कोई एक बात होती थी,
मैं फकत ढूँढ़ ना पाया सवाल उसके जवाब में।

राब्ता ना जाने कितने दिलों का उसके दिल से था,
एक मेरा ही नाम शुमार न था उसकी किताब में।

उसकी आदत-ए-बेरुखी ने मुझे गुमशुदा कर दिया,
मैं दश्त-ए-तसब्बुर में मिला हाल-ए-इजितराब में।

मुराद-ए-कुर्बत ही दिल की आखिरी ख्वाहिश थी,
पर तकदीर मेरी भी ऐसी तू मिली बस सराब में।

तोहमत-ए-इश्क फकत एक तेरी ही जायदाद नहीं,
मैं भी शायद कमजोर ही था इश्क के निसाब में।

टी.जी.टी. शारीरिक एवं स्वास्थ्य शिक्षा
केंद्रीय विद्यालय, मिसा कैंट-७८२१३८
जिला-नगाँव (असम)

किस्सा नीलकंठ

मूल : **मार्क ट्वेन**

अनुवाद : **मोजेज माइकेल**

यह सच है कि जानवर आपस में बातें करते हैं। इसमें किसी तरह का कोई संदेह नहीं हो सकता; लेकिन मैं सोचता हूँ कि बहुत कम लोग ही ऐसे हैं, जो उनकी बातें समझ सकते हैं। मुझे अभी तक बस एक आदमी ऐसा मिला है, जो उनकी बोली समझ सकता है। वैसे मुझे भी इस बात का पता इसलिए चला, क्योंकि उसी ने मुझे बताया था। वह एक अधेड़ उम्र का सीधा-सच्चा खदानकर्मी था, जो कई साल कैलिफोर्निया के एक एकांत कोने में जंगलों और पहाड़ों के बीच रहा था, और उसने अपने एकमात्र पड़ोसियों यानी जानवरों और पक्षियों के तौर-तरीकों का अध्ययन किया था; और अंत में उसे विश्वास हो गया था कि वह उनकी कही किसी भी बात का बिलकुल सही अनुवाद कर सकता है। उसका नाम जिम बेकर था। जिम बेकर के अनुसार कुछ जानवरों का शब्दभंडार काफी बड़ा होता है, भाषा पर उनका अच्छा अधिकार होता है और वे हाजिरजवाबी से फटाफट बोलते चले जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप ऐसे जानवर बहुत ज्यादा बोलते हैं; उन्हें यह अच्छा लगता है। उन्हें अपनी प्रतिभा का पता होता है और उन्हें 'दिखावा करने' में मजा आता है। बेकर का कहना था कि काफी समय तक ध्यान से देखने के बाद वह इस नतीजे पर पहुँचा था कि पक्षियों और जानवरों में सबसे ज्यादा वाक्पटु नीलकंठ होते हैं। उसने कहा था—

''और किसी भी प्राणी के मुकाबले नीलकंठ में बोलने की अधिक क्षमता है। उसमें दूसरे प्राणियों के मुकाबले अधिक मनोस्थितियाँ और भावनाओं की अधिक विविधता देखने को मिलती है; और यह समझ लो कि नीलकंठ जो कुछ भी महसूस करता है, उसे वह भाषा में व्यक्त कर सकता था। और वह आम भाषा का भी इस्तेमाल नहीं करता, बल्कि खरी-खरी किताबी भाषा बोलता है—और वह भी रूपकों से भरपूर—बस भरपूर! और जहाँ तक भाषा पर अधिकार का सवाल है, तो कोई नीलकंठ आपको कभी भी किसी शब्द के लिए अटकता नहीं मिलेगा। शब्द तो जैसे उसके अंदर से फूटे पड़ते हैं! और एक और बात, मैंने बहुत ध्यान से देखा है और ऐसा कोई पक्षी या गाय या और कोई भी चीज नहीं है, जो नीलकंठ जैसे अच्छे व्याकरण का प्रयोग करती हो। आप कह सकते हैं कि बिल्ली अच्छे व्याकरण का प्रयोग करती है; लेकिन एक बार जरा किसी बिल्ली को रात में शेड के ऊपर किसी दूसरी बिल्ली के साथ नोंचा-खसोटी करते देखिए, तब आपको ऐसी व्याकरण सुनने को मिलेगी कि आपके जबड़े ही जकड़ जाएँगे। अज्ञानी लोग सोचते हैं, लड़ती हुई बिल्लियाँ जो शोर करती हैं, वही इतना उत्तेजक होता है, लेकिन ऐसा नहीं है; उत्तेजक तो उनकी उकताऊ व्याकरण होती है। अब मैंने तो एक-दो मौकों को छोड़कर कभी किसी नीलकंठ को खराब व्याकरण का इस्तेमाल करते नहीं सुना और जब कभी वे खराब व्याकरण का इस्तेमाल करते हैं तो वे इनसानों की तरह ही शर्मिंदा भी होते हैं। वे अपना मुँह बंद कर लेते हैं और वहाँ से चले जाते हैं।

''आप नीलकंठ को पक्षी कह सकते हैं। हाँ, एक हद तक वह है भी; क्योंकि उसके शरीर पर पंख होते हैं और वह किसी चर्च का शायद सदस्य भी नहीं होता; लेकिन इसके अलावा वह आपके जितना ही इनसान होता है और मैं आपको बताऊँगा कि ऐसा क्यों है। एक नीलकंठ की प्रतिभाएँ, भावनाएँ और रुचियाँ सबकुछ समेट लेती हैं। नीलकंठ किसी नेता से अधिक सिद्धांतवादी नहीं होता। नीलकंठ झूठ बोल लेता है, नीलकंठ अपने सबसे गंभीर वादे से मुकर भी जाता है। अहसान की पवित्रता एक ऐसी चीज है, जिसे आप किसी भी नीलकंठ के दिमाग में घुसेड़ नहीं सकते। अब इन सबसे भी बढ़कर एक और बात है : एक नीलकंठ गरियाने के मामले में खदानों में काम करनेवाले किसी भी बंदे को मात दे सकता है। आप सोचते हैं कि बिल्ली गरिया सकती है। हाँ, बिल्ली गरिया सकती है; लेकिन आप किसी नीलकंठ को ऐसा विषय देकर देखिए, जिसमें उसकी 'रिजर्व' क्षमताओं की जरूरत पड़े और फिर बताइए, कहाँ रह जाती है आपकी बिल्ली? मुझसे बात मत कीजिए—इस बारे में मैं बहुत ज्यादा जानता हूँ। और एक और भी बात है : डाँटने-डपटने के मामले में—एक नीलकंठ किसी को भी पछाड़ सकता है, चाहे वह इनसान हो या देवता। जी हाँ, नीलकंठ में वह सबकुछ है, जो एक इनसान में होता है। नीलकंठ रो सकता है, नीलकंठ हँस सकता है, नीलकंठ लज्जित हो सकता है, नीलकंठ तर्क कर सकता है और योजना बना सकता है तथा चर्चा कर सकता है। नीलकंठ को गपशप और अफवाह अच्छी लगती है,

नीलकंठ में हास्य-बोध होता है, नीलकंठ जब गधापन करता है तो उसको ठीक आपकी ही तरह पता होता है—शायद आपसे भी अच्छी तरह। अगर नीलकंठ इनसान नहीं है तो वह उसका निशान ले ले, बस। अब मैं आपको एक बिलकुल सच्चा तथ्य बताने जा रहा हूँ, जो कुछ नीलकंठों के बारे में है—

''जब मैंने पहली बार नीलकंठ की भाषा को ठीक तरह से समझना शुरू किया था तो यहाँ एक छोटी सी घटना घटी थी। सात साल पहले की बात है, मुझे छोड़कर इस इलाके का आखिरी आदमी यहाँ से चला गया था। वह रहा उसका मकान—तभी से खाली पड़ा है; लट्ठों का मकान है, तख्तों की छतवाला—बस एक बड़ा सा कमरा है, उससे ज्यादा और कुछ नहीं; कोई अंदरूनी छत नहीं है। शहतीरों और फर्श के बीच कुछ नहीं है। हाँ तो, एक इतवार की सुबह मैं वहाँ बाहर अपनी कोठरी के सामने बैठा हुआ था। मेरे साथ मेरी बिल्ली थी। मैं धूप ले रहा था और नीली पहाड़ियों को देख रहा था तथा पेड़ों में अकेले सरसराती पत्तियों की आवाज सुन रहा था, और दूर संयुक्त राज्य अमेरिका में अपने घर के बारे में सोच रहा था, तभी एक नीलकंठ उस मकान पर आकर उतरा, जिसके मुँह में एक बाँजफल (ऐकॉर्न) का दाना था। वह बोला, 'ओ हो, लगता है मुझे कुछ मिल गया है यहाँ!' जब उसने यह कहा तो दाना उसके मुँह से निकलकर लुढ़कता हुआ छत से नीचे चला गया। लेकिन उसने कोई परवाह नहीं की। उसका दिमाग तो पूरा उसी चीज पर लगा था, जो उसे मिली थी, यह छत में बना एक छेद था। उसने अपने सिर को एक तरफ मोड़ा, एक आँख बंद की और दूसरी आँख उस छेद पर लगा दी, जैसे कोई ओपोसम (एक पशु विशेष) एक जग में झाँक रहा हो! फिर उसने अपनी चमकीली आँखें उठाकर देखा और एक-दो बार अपने पँख फड़फड़ाए—जो संतुष्टि का सूचक है, समझे आप,—और बोला, 'यह तो छेद जैसा दिखता है, यह छेद जैसा बना है। मुझे मानना ही होगा कि यह एक छेद है!'

फिर उसने अपना सिर नीचे की तरफ मोड़ा और एक बार फिर देखा। इस बार उसने आँख उठाई तो बड़ा खुश था। उसने अपने पंख और दुम दोनों फड़फड़ाए और बोला, 'अरे नहीं, मैं सोचता हूँ, यह कोई मोटा छेद नहीं है! जरूर मेरा भाग्य तेज है! अरे, यह तो बिलकुल शानदार छेद है!' इसलिए, वह उड़कर नीचे पहुँचा और वह दाना उठा लाया और इसे उस छेद में डाल दिया। वह अपने चेहरे पर अत्यंत अलौकिक मुसकान लिये अभी अपने सिर को पीछे किए झुका ही रहा था कि अचानक वह सुनने की मुद्रा में जड़ीभूत हो गया और उसके चेहरे से वह मुसकान ऐसे गायब हो गई, जैसे उस्तरे के आगे साँस हो जाती है और उसकी जगह आश्चर्य का विचित्र भाव आ गया। फिर वह बोला, 'अरे, मैंने इसके गिरने की आवाज नहीं सुनी!' उसने फिर से अपनी आँख को छेद पर जमाया और देर तक उसमें देखता रहा। फिर वह उठ गया और उसने अपना सिर एक बार फिर देखा, और फिर अपना सिर हिलाया। थोड़ी देर तक वह जायजा लेता रहा, और फिर विस्तार से समझने लगा। वह छेद के चक्कर काट-काटकर कुतुबनुमा के हर कोण से उसकी छानबीन करता रहा। लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। अब वह छत के शिखर पर चिंतन की मुद्रा में आ गया और उसने एक मिनट के लिए अपने दाहिने पैर से अपने सिर के पीछे खुजाया और अंत में बोला, 'ओह, यह मेरे लिए बहुत ज्यादा है, यह निश्चित है। जरूर बहुत लंबा छेद होगा। बहरहाल, मेरे पास इतना समय नहीं है कि यहाँ फालतू दिमाग मारूँ, मुझे अपना काम भी देखना है। मैं सोचता हूँ, यह बिलकुल सही है—फिर भी, कोशिश करके देखता हूँ।'

''इसलिए वह वहाँ से उड़कर गया और एक और दाना (ऐकॉर्न) ले आया और उसे उस छेद में गिरा दिया और उसने जल्दी से अपनी आँख छेद पर लगा दी, कि देखें उसका क्या हुआ, लेकिन फिर भी उसे बहुत देर हो चुकी थी। उसने करीब एक मिनट तक अपनी आँख को वहाँ जमाए रखा; फिर वह उठ गया और ठंडी साँस भरकर बोला, 'मेरी समझ में तो यह चीज आती नहीं दिखती; बहरहाल, मैं फिर से इसे समझने की कोशिश करूँगा।' वह एक और दाना ले आया और यह देखने की उसने भरसक कोशिश की कि उसका क्या हुआ, लेकिन वह नहीं देख पाया। वह बोला, 'अब से मैंने पहले ऐसा छेद कभी नहीं देखा। मेरी यह राय है कि यह बिलकुल नई किस्म का छेद है।' फिर वह पागल होने लगा। वह थोड़ी देर के लिए रुका और छत के शिखर पर इधर से उधर अपना सिर हिलाते और मुँह-ही-मुँह में बड़बड़ाते हुए टहलने लगा; लेकिन इस समय उसकी भावनाएँ उसपर हावी हो गईं और वह ताबड़-तोड़ अपने आपको भला-बुरा कहने लगा। मैंने किसी पक्षी को इतनी छोटी सी बात पर इतना परेशान होते नहीं देखा। जब वह बक चुका तो फिर चलकर छेद तक गया और आधा मिनट तक फिर उसमें झाँकता रहा; फिर वह बोला, 'ओह, तुम एक लंबा छेद हो और एक गहरा छेद, और कुल मिलाकर जबरदस्त छेद हो; लेकिन मैंने तुम्हें भरना शुरू कर दिया है और लानत होगी मुझ पर, अगर मैं तुम्हें भरूँ नहीं, चाहे इसमें सौ साल लग जाएँ!'

''और इतना कहकर वह वहाँ से चला गया। आपने अपने पैदा होने के बाद से आज तक किसी पक्षी को इतनी मेहनत करते नहीं देखा होगा। वह अपने काम में एक हब्शी की तरह जुट गया और इस तरह करीब ढाई घंटे तक उसने उस छेद में ऐकॉर्न के दाने भरे। वह एक ऐसा रोमांचक और आश्चर्यजनक दृश्य था, जो मैंने पहले कभी नहीं देखा। अब वह छेद में झाँकने के लिए बिलकुल नहीं रुका। वह बस दानों को छेद में डालता और फिर और दाने लेने चला जाता। और, अंत में वह इतना पस्त हो गया कि अपने पंख फड़फड़ाने लायक भी नहीं रहा। एक बार फिर वह उड़ता हुआ नीचे आया। वह बर्फ से भरी सुराही की तरह पसीने-पसीने हो रहा था। छेद में दाना गिराकर वह बोला, 'अब मैं सोचता हूँ कि अब तक तो मैंने तुम्हारा पेट फुला दिया होगा!' इसलिए वह देखने को नीचे झुका। आप मेरा विश्वास नहीं करेंगे, जब उसने फिर से अपना सिर उठाया तो वह गुस्से से

लाल-पीला हो रहा था। वह बोला, 'मैंने वहाँ इतने दाने गिराए हैं कि उसमें पूरा परिवार तीस साल तक खा लेगा। और अगर मुझे उनमें से एक का भी निशान मिल जाए तो मैं तो यही कामना करूँगा कि मैं दो मिनट में बुरादे से भरा पेट लेकर किसी म्यूजियम में जा उतरूँ!'

''उसमें बस इतनी शक्ति बची थी कि वह धीरे-धीरे छत के शिखर पर जाकर चिमनी से पीठ टिकाकर बैठ गया और फिर उसने अभी तक के अपने विचारों को इकट्ठा किया और अपने दिमाग को खोलने लगा। मैंने एक मिनट में ही देख लिया कि मैंने जिसे गलती से खदानों में ईश-निंदा समझा था, वह तो कुछ भी नहीं था।

''एक और नीलकंठ वहाँ से जा रहा था और उसने उसे भजन करते सुना तो रुककर उससे पूछने लगा कि क्या हो रहा है? पहले नीलकंठ ने उसे सारी बात बताई और कहा, 'अब वहाँ रहा वह छेद और अगर तुम्हें मुझपर विश्वास नहीं हो तो जाकर खुद देख लो।' इसलिए उस बंदे ने जाकर देखा और वापस आकर बोला, 'तुम कितने दाने बता रहे हो कि तुमने वहाँ डाले थे?'

'दो टन से कम नहीं थे।' पीड़ित नीलकंठ ने कहा। दूसरे नीलकंठ ने फिर जाकर देखा। उसे शायद कुछ समझ में नहीं आया, इसलिए उसने शोर मचा दिया और तीन और नीलकंठ वहाँ आ गए। उन सबने उस छेद की जाँच की। उन सबने मिलकर इस बारे में विचार-विमर्श किया और उसके बारे में उतने ही मूर्खतापूर्ण विचार व्यक्त किए, जितने इनसानों की एक औसत भीड़ व्यक्त कर सकती थी।

''उन्होंने और भी नीलकंठों को बुला लिया; फिर और, फिर और नीलकंठ आते गए कि जल्दी ही पूरा इलाका जैसे नीले रंग में रँग गया। पाँच हजार नीलकंठ तो जरूर रहे होंगे, और इस बार जो बक-बक और बहस, चख-चख तथा गाली-गलौज हुई, वह आपने कभी नहीं सुनी होगी। इस पूरे झुंड के एक-एक नीलकंठ ने उस छेद पर अपनी आँख जमाई और हरेक ने अपने से पहलेवाले नीलकंठ के मुकाबले इस रहस्य के बारे में कुछ ज्यादा मूर्खतापूर्ण विचार व्यक्त किए। उन्होंने मकान की भी नए सिरे से छानबीन कर डाली। दरवाजा आधा खुला था और अंत में एक बूढ़ा नीलकंठ वहाँ जाकर उतरा और उसने अंदर झाँककर देखा। सच, इससे उस रहस्य पर से एक सेकंड में परदा उठ गया। वहाँ ऐकॉर्न के दाने चारों तरफ बिखरे पड़े थे। उसने अपने पंख फड़फड़ाए और चिल्ला पड़ा—'यहाँ आओ!' वह बोला, 'यहाँ आओ, सारे-के-सारे; सारे-के-सारे नीलकंठ एक नीले बादल की तरह झपटते हुए नीचे आ गए और जब एक ने दरवाजे पर उतरकर अंदर नजर डाली तो पहले नीलकंठ की कारस्तानी का बेहूदापन उसके सामने आ गया और वह पीठ के बल लेटकर हँसी के मारे लोट-पोट हो गया, और फिर उसकी जगह दूसरा नीलकंठ आया तो वह भी हँसते-हँसते दोहरा हो गया। इस तरह वे सारे-के-सारे हँस-हँसकर पागल हो गए।

''तो साहब, वे यहाँ मकान की छत पर और पेड़ों पर एक घंटे तक डेरा डाले रहे और उस बात पर इनसानों की तरह ठहाके लगाते रहे। मुझसे यह कहने का कोई फायदा नहीं होगा कि नीलकंठों में हास्य-बोध नहीं होता, क्योंकि मैं बेहतर जानता हूँ। और उनकी याददाश्त भी तेज होती है। वे तीन साल तक हर गरमी में पूरे संयुक्त राज्य (अमेरिका) से नीलकंठों को इस छेद के अंदर देखने के लिए लाते रहे। दूसरी चिड़ियों को भी और उन सभी की समझ में असली बात आ गई, सिवाय एक उल्लू के, जो नोवा स्कोशा से था, सेमिटी देखने के लिए आया था। उसने वापसी में इस किस्से को सुना था। उसका कहना था कि उसे इसमें कुछ भी हास्यास्पद नहीं दिखाई दिया था। लेकिन फिर उसे तो सेमिटी ने भी बहुत निराश किया था।''

सा/अ

कविता

कहिए अम्माँ

● रमेशचंद्र पंत

कहाँ गए वे
सोने-से दिन,
कहिए अम्माँ!

बैठ सभी हम एक साथ
दु:ख में भी गाते थे,
सुख-वैभव के गीत मुखर
हम मिलकर गाते थे।

उड़े फुर्र से
दिन कैसे वे,
कहिए अम्माँ!

बड़े हुए हम अपना ही
घर-आँगन बाँट रहे,
अपने ही अपनों से
कैसे कन्नी काट रहे।

कैसा है यह
फेर समय का,
कहिए अम्माँ!

बही स्वार्थ की आँधी
सबकुछ पीछे छूट गया,

संबंधों का था महीन
जो धागा, टूट गया।

और चलेगा
कब तक यह सब,
कहिए अम्माँ!

सा/अ

'उत्कर्ष' विद्यापुर
द्वाराहाट, अल्मोड़ा-२६३६५३
(उत्तराखंड)
दूरभाष : ९६३९३७३७३७

जिंदा रहने की खातिर

● विनय मिश्र

जाने-माने रचनाकार। 'सच और है', 'बनारस की हिंदी गजल' संपादित (गजल-संग्रह); 'समय की आँख नम है' (गीत-संग्रह); 'सूरज तो अपने हिसाब से निकलेगा' (कविता-संग्रह); 'इस पानी में आग' (दोहा-संग्रह); 'पलाश वन दहकते हैं' स्व. मंजु अरुण की रचनावली का संपादन। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर (राज.) के हिंदी विभाग में कार्यरत।

: एक :

कम अनुमानों में निकले
लोग सयानों में निकले

मुसकाने का मन तो था
आँसू गानों में निकले

घर में यूँ बाजार घुसा
हम सामानों में निकले

थे जो खाली हाथ कभी
तीर कमानों में निकले

हम से कतराने वाले
सब पहचानों में निकले

हम ख्वाबों के रस्ते भी
किन वीरानों में निकले

मरकर भी वो जिंदा हैं
जो अफसानों में निकले

: दो :

दीन का ईमान का संकट
है बड़ा इंसान का संकट

वो नहीं है भीड़ में शामिल
फिर भी है पहचान का संकट

किस तरह खुलकर हँसी आए
हो जहाँ मुसकान का संकट

हर कोई तर्कों में उलझा है
हर तरफ है ज्ञान का संकट

जिंदगी में खुरदुरापन है
या कहें रूमान का संकट

एक डर बनकर डराता है
बीच में व्यवधान का संकट

जिंदगी की बात पीछे है
सबसे आगे जान का संकट

: तीन :

लगा हुआ है मुझमें हरदम बहना पानी का
नदी के जैसा बहता जाए सपना पानी का

जरा सी उजली धूप ने रगड़ी अपनी एड़ी जब
कहीं पे देखा पहली बार चमकना पानी का

लरजगरज है तेरी खातिर पर मेरी खातिर
कहाँ ये कम है खामोशी से सुनना पानी का

उगी हुई कविता की बेलें कल चढ़ जाएँगी
यहाँ किसी दिन तुम देखोगे खिलना पानी का

सुलग रहे हैं अपने आँसू और उदासी में
यहाँ लगा है स्मृतियों में ढलना पानी का

दबे हुए पाँवों से आई मौत बताने को
समझ न पाया जीते-जी जब कहना पानी का

: चार :

कुछ जीवन के प्रश्न बड़े हैं कुछ अपनी भी सीमाएँ
हाथ हवन करते जलते हैं कैसे दें हम समिधाएँ

ये तो हिमत्रासों के वंशज इनकी गाथा कौन कहे
जो भी ब्रह्मकमल होते हैं सहते हैं वे विपदाएँ

मेरी धरती का हर कोना भीगे जिनकी बूँदों से
वो बादल मेरी चाहत के जाने कब मुझपर छाएँ

वो सुख जो तुमने भोगा है किसने पाया है बोलो
वो दु:ख जो हमने जीये हैं क्या गाएँगी कविताएँ

एक अनय का भय है इतना, सबके होंठों पर ताले
सब अपने होंठों को सी लें, हम कैसे चुप रह जाएँ

जिंदा रहने की खातिर जीने की कुछ उम्मीदें हैं
इन उम्मीदों को लेकर ही चल किस्मत को चमकाएँ

नदियों सी बहती जाती हैं कब ठहरी हैं ये लेकिन
किसी प्रलय को आमंत्रण है जो ठहरीं ये प्रतिभाएँ

बी-१६१, हसन खाँ मेवाती नगर
अलवर-३०१००१ (राज.)
दूरभाष : ०९४१४८१००८३

दिल्ली से हेग

● ओम प्रकाश शर्मा 'प्रकाश'

फरवरी शुरू ही हुई थी कि मैंने यूरोप जाने की योजना बना ली। अहमकाना हरकत थी, लेकिन इसके पीछे भी एक कहानी थी। नीदरलैंड्स में हमारे एक संबंधी रहते थे, जिन्होंने मुझे कई बार बुलाया था। २०१२ में कहा तो मैंने २०१३ के लिए टाल दिया; २०१३ में कहा तो मैंने २०१४ के लिए टाल दिया। आखिर उन्होंने चेतावनी दे दी कि भइया २०१५ के मार्च में मेरा सेवाकाल समाप्त हो जाएगा, फिर गिला मत करना। फलत: ५ फरवरी, २०१५ को मैंने अमसटर्डम की सीट बुक करवा ली। सच्चे पेंशनधारी भारतीय की तरह मैंने ऐसे फ्लोट (रशियन एअरलाइंस) की टिकट ली, क्योंकि उसमें किराया कुछ कम था। सुबह पाँच बजे की उड़ान थी। लिहाजा तीन घंटे पहले जाने के हिसाब से दो बजे एअरपोर्ट पहुँचना था। अतिरिक्त सावधानी के चलते मैं एक बजे ही पहुँच गया। वहाँ पता चला, फ्लाइट तीन घंटे लेट है। मैं उन पर थोड़ा गरम हुआ कि सूचना तो दे देते। टाल-मटोल के जवाब का मैं क्या जवाब देता? कहा, सामान बुक कर लो, ताकि मैं निश्चिंत हो जाऊँ, उन्होंने वह भी नहीं किया। इंतजार के सिवा चारा क्या था? पाँच बजे काररवाई शुरू हुई। सामान-बुकिंग के पश्चात् सोचा कि भीतर चाय-पानी की व्यवस्था होगी, जो नियमानुसार होनी चाहिए थी, लेकिन भीतर कोई सँभालने-बतानेवाला कर्मचारी नहीं था। तीन घंटे बिताने थे। जेब से जलपान कर लिया। साढ़े सात बजे जहाज में चढ़ने से कुछ पहले एक स्थल पर यात्रियों को रोक-रोककर एअर होस्टेस पूछ रही थी—आप मॉस्को के लिए हैं? और जवाब में एक फ्रूटी और सैंडविच का पैकेट थमा रहा थी। बड़े बेमन से मैंने वह लिया, यह सोचते हुए कि पिछले घंटों में जब जरूरत थी, तब आप कहाँ थीं। मैंने कहा, मुझे गरम कॉफी दीजिए। उसने कहा, फ्रूटी वापस करनी पड़ेगी। मैंने अंग्रेजी में कहा कि क्या रशियन एअरलाइंस इतनी कंगाल हो गई है?

जहाज के भीतर बैठकर राहत मिली। इंतजार करते-करते थक गए थे। फ्लाइट मॉस्को जा रही थी। होता यह है कि प्राय: सभी एअरलाइंस अपने देश की राजधानी से होकर जाती हैं, चाहे यात्री कहीं के भी हों। ऐसे फ्लोट मॉस्को जाएगी, एअरफ्रांस पेरिस, ब्रिटिश एअरवेज लंदन और बाकी भी उसी तरह ले जाएँगी। मॉस्को में जहाज उतर रहा था। चारों ओर का दृश्य देखकर ही ठंड लगने लगी। एअरपोर्ट में हर तरफ बर्फ गिर रही थी। लोगों ने भारी-भारी ओवरकोट पहन रखे थे। सिर पर हैट या जैकेट-हुड। जहाज से उतरने पर ऐरो-ब्रिज के दराजों में जबरन घुसती हवा शरीर को कँपा रही थी; मानो कह रही हो ६ फरवरी है और तुम मॉस्को में हो।

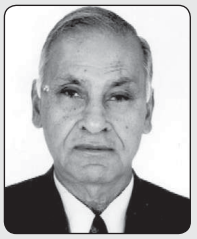

रामलाल आनंद कॉलेज (दिल्ली विश्वविद्यालय) में बत्तीस वर्षों तक अध्यापन करने के पश्चात् रीडर (वर्तमान में एसोसिएट प्रोफेसर) के पद से अवकाश ग्रहण। एम.ए. कक्षाओं के अध्यापन और शोध-निर्देशन का भी अनुभव। अब तक आठ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कविताएँ, यात्रा-वृत्तांत आदि प्रकाशित।

यहाँ फिर तीन-चार घंटे का इंतजार था। दिल्ली से आए सभी यात्रियों को यहाँ से भिन्न-भिन्न दिशाओं की फ्लाइट्स के लिए बाँट दिया जाएगा—रोम, कोपनहेगन, अमेरिका, एथेंस, लंदन, अमसटर्डम वगैरह-वगैरह।

प्रतीक्षा क्षेत्रों में लोग तो थे, लेकिन सब अजनबी हों तो आप अकेले ही होते हैं। इसी जहाज से उतरे कुछ भारतीय थे; कुछ पहले से भी मौजूद थे। ज्यादा-से-ज्यादा बातचीत होती है—अच्छा, आपको कहाँ या किस फ्लाइट से जाना है, दिल्ली में आप कहाँ रहते हैं और बस। मैंने सोचा ट्रांजिट वीजा ले लेता तो दो-चार दिन मॉस्को ही घूम लेता। घुमक्कड़ी मन, लेकिन फिर ठंड की बात सोचकर लगा, जो हुआ, अच्छा हुआ। बैग में एक पत्रिका थी। मैं उसे पढ़ने लग गया। आधे घंटे में उकता गया। उठकर दुकानों के शो-केस देखता रहा। मिनी बाजार-सा था, उसमें घूमता रहा। मानसिक स्तर पर ठंड का अहसास बना हुआ था। सोचा, कॉफी ही पी लें। हर जगह लोगों ने कहा—रूबल्स देने पड़ेंगे। अब दो-चार घंटे के लिए यूरो से रूबल्स बदल भी लेता तो बचे पैसे बेकार जाते। मन को समझाना पड़ा। पुन: मॉस्को-अमसटर्डम वाले जहाज में चढ़ गए तो राहत मिली। एक तो भीतर आप खाने-पीने

की माँग रख सकते हैं। दूसरे, इंतजार खत्म हो जाता है और मानसिक तस्कीन रहती है कि मंजिल की दिशा में बढ़ रहे हैं।

अमसटर्डम में जहाज कुछ लेट उतरा था। शिफॉल हवाई-अड्डा बहुत बड़ा है। इमिग्रेशन में जाना था। मैं निश्चिंत था, मेरे पास सारे कागज पूरे थे। दूसरे, जिनके यहाँ जाना था, वे स्वयं दूतावास में थे। राजनयिकों के प्रति सम्मान हर देश दिखाता है। पासपोर्ट देखते हुए अधिकारी ने पूछा, किस उद्देश्य से आए हो (व्हाट किस यू हियर)? मैंने बता दिया—संबंधियों के बुलावे पर उनके साथ रहने के लिए आया हूँ। विधिवत् वीजा है। उसने कहा, वह पत्र कहाँ है, जिसमें तुम्हें बुलाया गया है। मैंने बताया कि वह दिल्ली में नीदरलैंड्स की एंबेसी को दे दिया था, जिसके आधार पर उन्होंने वीजा दिया। क्या आप अपने ही देश के दूतावास द्वारा दिए गए वीजा को पर्याप्त नहीं मानते? उसने फिर कहा, आप थोड़ा इंतजार करें और हॉल में पड़े बेंच पर बैठा दिया। वहाँ और कई व्यक्ति बैठे थे—अफ्रीकी देशों के, अरब देशों के, कुछ एशियंस। मुझे कुछ अच्छा नहीं लगा। बेंच से सटा एक कमरा था, जिसमें और अधिकारी बैठे थे और जिसका दरवाजा बंद था। मैं 'नॉक' करके अंदर चला गया और कहा—मैं ऐरे-गैरे आदमियों में से नहीं हूँ; दिल्ली विश्वविद्यालय का रिटायर्ड प्रोफेसर हूँ और मैंने तत्संबंधी कई कागज दिखाए। पूछा, मुझे आपने क्यों रोका है? उन्होंने कागज गौर से देखे और कहा, आप बाहर बेंच पर न बैठें; ठंड है, भीतर आ जाइए; हीटर के पास बैठिए। आप इतमीनान से बैठें (मेक युअरसेल्फ कंफर्टेबल···)। पूछा, आप कॉफी पिएँगे? मैंने कहा, धन्यवाद। इतने में वे लोग आ ही गए और उन्होंने दूतावास का हवाला देकर परिचय-पत्र आदि दिखाया। चलते समय उन अधिकारियों ने कष्ट के लिए खेद व्यक्त किया और कहा, हम सीमा-पुलिस से हैं और हमें ध्यान रखना पड़ता है, वी आर फ्राम बॉर्डर पुलिस एंड वी हैव टू बी कॉन्शियस।

भारतीय घर के माहौल में अदरक वाली गरम-गरम चाय पीकर तसल्ली हुई। बातों का सिलसिला चल निकला।

उस परिवार में एक अच्छी आदत थी। वे सब सुबह सैर के लिए जाते थे। मैंने भी इच्छा जाहिर की तो पहले तो सौजन्यवश उन्होंने टालते हुए कहा, नहीं-नहीं, इतनी सुबह आप कहाँ जाएँगे? आराम कीजिए, लेकिन आग्रह करने पर वे मान गए। क्लिंगनडेल—जहाँ मैं ठहरा था, उसके पीछे काफी बड़ा जंगल था। हेग दुनिया का सबसे हरा-भरा शहर माना जाता है। उसी जंगल में हम सब जाते थे। ठंड गजब की थी। प्रायः पारा ३-४ डिग्री रहता। कभी-कभी एक-दो तक भी आ जाता। जैकेट तो ठीक थी, किंतु दस्तानों के बावजूद हाथ ठंडे-ठंडे रहते। ऐसे ही पैर भी। नाक, मुँह और चेहरे का कोई एक भाग खुला रहता। सब ठंडे-ठार हो जाते, लेकिन जंगल बहुत सुहावना था। पतझर था। पत्ते सब झर चुके थे। बेतरतीब ढंग से फैली शाखाएँ-प्रशाखाएँ पत्रहीन वृक्षों को एक विशेष प्रकार का सौंदर्य प्रदान कर रही थीं। हल्के पीले और काले रंग के ऊँचे-ऊँचे वृक्षों को हम ठूँठ भी नहीं कह सकते। कई बार वृक्षों से बूँदें टप से गिर जातीं। कोई पेड़ छोटा नहीं था; सब ऊँचे, लंबे-चौड़े, ताकतवर, शानवाले। नीचे बारीक बजरीवाले छोटे, कच्चे रास्ते पर हिमांश रहते। बीच-बीच में पक्की अमुख्य सड़क भी आ जाती। आतिथेय ने बताया कि पक्की सड़क पर पारदर्शी बर्फ रहती है, जिसका पता नहीं चलता और लोग उस पर फिसल जाते हैं, अतः चलने में सावधानी अपेक्षित है। बर्फ की पतली परत थी। चारों ओर एकदम शांति, सिवाए बीच-बीच में आनेवाली पक्षियों की आवाजों के। जाने अपनी भाषा में क्या कह रहे थे? मार्ग में काफी जगह पर बच्चे-बूढ़े साइकिल चलाते मिल जाते। इस देश में साइकिल चलाने का बहुत रिवाज है। ये लोग स्वास्थ्य के प्रति सचेत हैं। दूर छोटी-बड़ी सड़क के साथ कम-से-कम ढाई-तीन मीटर चौड़ा साइकिल-ट्रैक है, जिस पर बाकायदा ट्रैफिक सिग्नल्स हैं। लोग रात में भी छोटी-छोटी बत्तियाँ जलाए उसी जोश से साइकिल चलाते दिख जाएँगे। साइकिल मार्ग में कोई बाधा या अतिक्रमण नहीं। नीदरलैंड्स के साइकिल-ट्रैक्स विश्व में सर्वश्रेष्ठ माने गए हैं। कहीं-कहीं शाम को भी लोग व्यायाम करते, रस्सी कूदते या इस प्रकार की कोई गतिविधि करते दिख जाते।

जंगल में छोटी सड़कों के नीचे साफ पानी की बहती नालियाँ बीच-बीच में हमारा स्वागत करने आ जातीं और अपनी भाषा में 'नमस्कार' कहकर निकल जाती हैं। जल पर तरह-तरह की आवाजें निकालती बतखें इधर-से-उधर तैरती रहतीं। कुछ जीव जल के नीचे भी हलचल करते रहते। बीच-बीच में बैठने, आराम करने के स्थल हैं। कुछ दिशा-निर्देशक थोड़ी-थोड़ी दूरी पर लगाए गए हैं। इसी जंगल में एक बड़ा भवन दिखाई दिया। निकट जाने पर कुछ अंतर से ही दिख गया कि इसके गेट बंद हैं। यह राजमहल है। जरूरी नहीं कि इसमें राज-परिवार के सदस्य इस समय रह रहे हों, लेकिन यह महल है उन्हीं का। उनके पास ऐसे कई महल हैं। एक महल हेग के बाजार में भी है। नीदरलैंड्स में रानी है, जिसका नाम बिआट्रिक्स है। उसने राजगद्दी

अब अपने बेटे को दे दी है। कई देशों में राजा-रानी आज भी हैं, जैसे स्पेन में रानी है, इंग्लैंड की क्वीन एलिजाबेथ तो जग-प्रसिद्ध है, जो बकिंघम पैलेस में रहती है। कुछ समय पहले तक नेपाल में राजा था। भूटान के राजा हैं। जापान में आज भी सम्राट् हैं, लेकिन यह भी सच है कि मात्र परंपरा पालन वश चले आ रहे ये राजा-रानी देश की शान के प्रतीक भर हैं। वास्तविक शक्ति जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों से बनी पार्लियामेंट के पास है। एक दूसरी स्थिति भी है। एशिया, अरब और अफ्रीकी देशों के राजाओं और प्रजा के प्रतिनिधियों के बीच टकराव से कितने देश आज बरबादी के कगार पर हैं।···इस जंगल में एक पेड़ पर कुछ पट्टियाँ जैसी बँधी हुई थीं। पता चला, इस पेड़ का इलाज चल रहा है। यह सूखने लगा था। डॉक्टरों ने इसमें कई इंजेक्शन लगाए, दवाई लगाई और पट्टियाँ बाँध दीं। ये किसी पेड़ को जल्दी से मरने नहीं देते। खयाल आता है कि एक ये लोग हैं और एक हमारे यहाँ स्थिति है कि बच्चे, बूढ़े, औरतें समुचित इलाज और दवाइयों के अभाव में दम तोड़ देते हैं।

एक दिन वे मुझे घुमाने ले गए। बाजार, हाट, दुकानें देखीं। अंतरराष्ट्रीय न्यायालय देखा, जिसके लिए हेग विख्यात है। मैं अपनी तसल्ली के लिए वहाँ पुन: गया, क्योंकि मुझे कुछ नोट्स और चित्र लेने थे। अत: न्यायालय का ब्योरा आगे मिलेगा। धीरे-धीरे मैंने अकेले निकलना शुरू किया। मकान की लोकेशन देख ली। फ्लैट नंबर, फोन आदि नोट कर लिये। यहाँ से १३ नंबर बस जाती थी बस-अड्डा। बस अड्डे के साथ ही रेलवे स्टेशन था। दो-तीन मुख्य पैदल आने-जाने के मार्ग पहचान लिये। हेग कोई इतना बड़ा शहर भी नहीं, जैसा मान लीजिए, अमसटर्डम है। एक मित्र बन गया, जो भारतीय था, लेकिन वर्षों से यहाँ रह रहा था। अब यहीं का नागरिक है। वैद्यक की अच्छी जानकारी है। उनका अपना इंडिश्का नाम का एक स्टोर है, जिसमें भारत से जुड़ी लगभग सभी चीजें हैं। हिंदी और अंग्रेजी में धार्मिक पुस्तकें, पूजा संबंधी सामान, आसन, मूर्तियाँ, मालाएँ, हस्तशिल्प की वस्तुएँ, 'एथेनिक' वस्त्र, गहने, संगीत संबंधी सामग्री, कुरसियाँ मूढ-पीड़ यानी भारत से जुड़ी लगभग हर चीज। मैत्री विकसित करने में कोई बाधा नहीं हुई। वे बड़ी आत्मीयता से बात करते थे। थोड़ी-बहुत सहायता और मार्ग-दर्शन भी कर देते थे। यहाँ मैं उनके प्रति आभार प्रकट करना चाहता हूँ।

एक दिन मुझे बस का एक ड्राइवर ऐसा लगा कि भारतीय होगा लेकिन पता चला कि सूरिनामी है। हॉलैंड में बहुत सूरिनामी हैं, जो भारतीय मूल के ही हैं। बरसों तक डच सूरीनाम के शासक थे, जैसे अपने यहाँ अंग्रेज। आजादी मिलने के बाद उन्हें हॉलैंड में आने-रहने की सुविधा मिल गई। (हॉलैंड और नीदरलैंड्स एक ही देश के दो नाम हैं। हॉलैंड नाम पुराना है। आजकल इसे नीदरलैंड्स कहते हैं।)

एक और अवसर पर ऐसे ही सूरीनामी चालक था। बस में घुसते ही मैंने टिकट माँगा। उसने कहा, बैठ जाओ। थोड़ी देर मैं उठकर फिर उसके पास गया तो उसने फिर मना कर दिया। मैं बैठ तो गया, पर मन में खटका लगा रहा कि बिना टिकट यात्रा कर रहा हूँ। शर्मिंदगी तो उठानी पड़ेगी ही, देश का नाम भी बदनाम होता है। मन में बेचैनी थी। मैं फिर उठकर गया और गंभीरता से कहा कि कृपया टिकट दे दें, मैं बिना टिकट चल रहा हूँ। उसने उतनी ही गंभीरता से जवाब दिया, 'आई एम द लॉर्ड ऑफ दिस बस···डोंट वरी सिट डाउन।' अंत तक मैं ऐसे ही गया। मैं समझ नहीं सका, ऐसे क्यों, कैसे हुआ? या तो चालक को कुछ अधिकार प्राप्त होगा अथवा भारतीय होने के नाते वह कुछ विशेष स्नेह प्रकट करना चाहता था। यह भी संभव है, वह दिन विशेष हो, जैसे किसी दिन यहाँ वरिष्ठ नागरिकों या बच्चों को मुफ्त सफर (फ्री राइड) की सुविधा रहती है। नीदरलैंड्स आवास के इतने दिनों में यह एकमात्र अपवाद था।

यहाँ दुकानें सामान से भरी रहती हैं—कपड़े हों, ज्वैलरी हो, घरेलू सामान या कुछ और। साफ-सुथरी, चमचम करती दुकानें। प्रत्येक आइटम पर प्राइस-टैग लगा है। आपकी प्रश्नवाचक दृष्टि उठते ही सहायिकाएँ लपककर आ जाती हैं और आपकी समस्या का समाधान कर देती हैं। बहुमंजिले स्टोर हैं—एक ही वस्तु या अलग-अलग वस्तुओं के। सभी में विभाग हैं। एक ही वस्तु, मान लीजिए वस्त्रों के हैं तो बच्चों, स्त्रियों, पुरुषों, बुजुर्गों, सूती, ऊनी, चमड़े के कपड़े विशेषीकृत विभागों में बँटे हैं। आजकल भारत के महानगरों में भी इसी प्रकार के स्टोर हैं। कई स्टोरों में ग्राहकों के आराम करने, बतियाने के स्थान बने हुए हैं, जहाँ चाय-कॉफी की मशीनें लगी हुई हैं—बनाएँ, पिएँ और पिलाएँ। खरीदी हुई चीज सरलता से वापस की जा सकती है, बशर्ते कि रसीद हो। हफ्ता भी हो गया हो तो भी वापस ले लेंगे। झिक-झिक नहीं। 'चैंज' पर भी बहस नहीं होती। रेस्त्राँ, होटल भी भरे रहते हैं। छुट्टीवाले दिन भीड़ ज्यादा रहती है।

नीदरलैंड्स का काफी हिस्सा प्राकृतिक शोभा युक्त है। हेग तो पूरे यूरोप का सबसे हरा-भरा नगर माना जाता है, जिसके १,११,५०० हेक्टेयर में पार्क, जंगल, टीले, रेत के ढूह, समुद्र तट आदि हैं। यहाँ की गुलाब वाटिका में २०,००० पौधे हैं, जो जून से अक्तूबर में खिलते हैं। ट्यूलिप्स के लिए तो नीदरलैंड्स पूरे विश्व में जाना जाता है। ये दूसरे देशों में निर्यात भी किए जाते हैं। ये भी मई-जून से खिलने शुरू होते हैं। यहाँ का इतिहास बहुत पुराना है। इस देश का पुराना नाम हॉलैंड है, जो किसी समय जीलैंड की तरह मात्र एक प्रांत था। तब देश की सीमाएँ इस प्रकार नहीं थीं, जैसी आज हैं। यहाँ दूसरी जातियाँ भी रहती थीं। १७वीं शताब्दी में हेग में यहूदियों की बस्ती थी। नगर में स्पेनी और पुर्तगाली भी रहते थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान नीदरलैंड्स को बहुत से अत्याचारों और जुल्मों का शिकार होना पड़ा। वह यहाँ के इतिहास का सबसे काला अध्याय है। ऐतिहासिक संग्रहालय में उस समय के भयानक और करुणोत्पादक चित्रात्मक ब्योरे उपलब्ध हैं। साइकिल चालकों के लिए यहाँ सबसे सुरक्षित मार्ग बनाए गए हैं।

नीदरलैंड्स में हवा के बड़े-बड़े पंखे, जैसे अपने यहाँ गुजरात-तट पर हैं, बहुत जगह पर घूमते दिख जाएँगे। इन पंखों से वाटर-पंप चलते हैं, जो खेतों का फालतू पानी नदियों-नहरों में वापस डालते हैं। यहाँ नदियों, समुद्र भी, ऊँची सतह पर है और जमीन-खेत नीचे हैं। इसी समस्या से निबटने के लिए डच लोगों ने हजार साल पहले 'डाइकेस' यानी तट-दीवार बनाई, ताकि समुद्र-नदियों का पानी भीतर न आए। बाँध-निर्माण की तकनीक में आज भी कोई देश नीदरलैंड्स का मुकाबला नहीं कर सकता।

नीदरलैंड्स के कई घरों में मैंने लकड़ी के जूतों की जोड़ी सजावटी वस्तु के रूप में देखी। मेरे मेजबान के घर में भी थी; पीले रंग की छोटी सी जोड़ी। मैंने जानना चाहा कि सज्जा-सूची में जूतों की विशिष्टता क्यों है? उन्होंने कहा—बस, यहाँ सजावटी खिलौनों के तौर पर लोग रखते ही हैं। मेरी जिज्ञासा इधर-उधर घूमती रही। पता चला कि कुछ पुराने लोग अभी भी लकड़ी के जूते पहनते हैं। एक जमाना था, जब लकड़ी के जूते पहनना बहुत बड़ा फैशन माना जाता था। देखिए, इतिहास किस तरह समय में अटक जाता है। परंपराएँ या रिवाज बहुत समय तक किसी-न-किसी रूप में जीवित रहते हैं। आज उसी यादगार के तहत देशवासी इन्हें अपने घरों में रखते हैं और पर्यटक खरीदकर ले जाते हैं।

हेग के पास ही लाइडन नगर है। वहाँ के विश्वविद्यालय के हिंदी के प्राध्यापक मोहन के. गौतम मुझे दिल्ली में एक बार मिले थे। सोचा, विश्वविद्यालय घूम आएँगे और उनसे मिल भी लेंगे। वहाँ गया, लाइडन विश्वविद्यालय बहुत बड़ा है और मुख्यत: तकनीकी शिक्षा केंद्रित है। काफी कठिनाई अनुभव की। एक तो वहाँ विभाग इस तरह से बँटे हुए नहीं हैं, जैसे अपने यहाँ हैं। कहीं एशियन भाषाएँ और संस्कृति विभाग हैं या क्षेत्रीय अध्ययन अथवा विशेषीकृत अध्ययन केंद्र हैं। सीधा हिंदी विभाग उस तरह से नहीं है। यहाँ सभी केंद्रों के भवन दूर-दूर तक फैले हुए थे। प्रो. गौतम शायद अब रिटायर भी हो गए होंगे। उनके विषय में कोई अन्य सूत्र—घर का पता या टेलीफोन नंबर मेरे पास नहीं था। फिर भी मैंने हिम्मत नहीं हारी। खोज-बीन से पता चला कि लाइडन इंस्टिट्यूट फॉर एरिया स्टडीज (भारत और तिब्बत) में अभिषेक अवतंस नामक एक हिंदी अध्यापक हैं। बताया गया कि शॉर्ट में लाइपस पूछ लेना। वहाँ गया। अभिषेक का कमरा था, नेमप्लेट थी, लेकिन वे नहीं थे और यह पता लगाना भी मुश्किल था कि वे कब आएँगे या मिलेंगे। बस इंस्टिट्यूट के दर्शन करके आ गया।

हेग नगर

नीदरलैंड्स की राजधानी बेशक अमसटर्डम कही जाती है, किंतु वास्तविक राजधानी हेग है, जहाँ सारे महत्त्वपूर्ण कार्यालय, दूतावास आदि हैं। देश की संसद् भी हेग में है। हेग के लिए अमसटर्डम हवाई-अड्डे पर उतरना पड़ता है, जहाँ से आप आधा घंटा, बीस मिनट में हेग पहुँच सकते हैं। एक बात और व्यक्तिवाचक संज्ञा होने से संसार के किसी नगर के पहले डेफिनेट आर्टिकल 'द' नहीं लगता, लेकिन हेग के लिए द हेग का प्रयोग होता है। अपनी भाषा (डच) में वे इसे डेन हाग बोलते-लिखते हैं। हो सकता है, इसमें ध्वनि इसे विशिष्ट नगर मानने की हो।

वर्तमान में अंतरराष्ट्रीय न्यायालय तथा स्थायी मध्यस्थता पंचाट हेग में हैं। यह सदा से न्याय और शांति का नगर माना जाता रहा है। नीदरलैंड्स के संविधान के आर्टिकल ९० में दर्ज है कि अंतरराष्ट्रीय कानूनी व्यवस्था को बढ़ावा देना देश की जिम्मेदारी है। यह न्यायालय जिस भवन में है, उसे शांति-महल कहते हैं, जिसका इतिहास बहुत पुराना है। बहुत छोटे से रूप में इस न्यायालय की स्थापना २८ अगस्त, १९१३ को डच महारानी विल्हेल्मिना की उपस्थिति में हुई थी। इससे पूर्व सन् १८९९ में विश्व के २६ देशों के लोगों ने सम्मेलन किया था, जिसमें निशस्त्रीकरण तथा शांति-स्थापना पर विचार किया गया था। मजे की बात यह है कि इसकी मूल प्रेरणा रूस के सम्राट् निकोल्स द्वितीय की ओर से आई। रूस युद्ध के परिणामों से अवगत था। उसका विचार था कि बातचीत और शांति-प्रयासों से युद्ध रोके जा सकते हैं। निकोल्स ने परामर्शवार्त्ता के लिए हेग को ही क्यों चुना? कई कारण थे। हेग की डच महारानी निकोल्स की दूर की संबंधी थी। दूसरे, नीदरलैंड्स पक्षपात-रहित देश माना जाता है। हेग यूरोप के लगभग मध्य में है, जहाँ पहुँचना सबके लिए सुगम था। इस सम्मेलन ने अंतरराष्ट्रीय मध्यस्थता पंचाट की नींव रखी, जिसके लिए स्कॉटिश-अमेरिकी एंड्रयू कारनेजी ने उस समय १५ लाख डॉलर दिए। बाद में इसी कारनेजी ने शांति-प्रासाद का उद्घाटन भी किया। शांति-प्रासाद में पीड़ा और कष्टों के त्राता-रूप में जीसस क्राइस्ट की कांस्य-मूर्ति स्थापित की गई, जो उन दो देशों के हथियारों को गलाकर बनाई गई थी, जो उस समय युद्धरत थे। ये देश थे—चिली और अर्जेंटीना। हेग की प्रशंसा में तत्कालीन ब्रिटिश पत्रकार जी.एच. पेरिस ने १५ जुलाई, १८९९ को अपनी डायरी में लिखा—''(यह नगर) चिंतन, सद्भाव और धैर्य का है। यहाँ शांति की संसद् बुलाना एक उत्तम विचार है। हेग को इसका पुरस्कार मिल चुका है, क्योंकि यह अब विश्व के विधि-अध्ययन

केंद्र के रूप में विकसित हो रहा है।···किसी नगर को इससे बड़ी और कौन सी प्रतिष्ठा मिल सकती है?''

अंतरराष्ट्रीय विवादों और युद्ध-अपराधों के विचारार्थ बाकी संस्थाएँ भी धीरे-धीरे यहाँ स्थापित होती चली गईं। १९९३ में यूगोस्लाविया विषयक अपराध निर्णायक पंचाट यहाँ खोला गया था। ईरान-यू.एस.ए. के दावों का निपटारा भी यहीं किया गया था। युद्ध-रत देशों की शांति-वार्त्ताओं के लिए हेग आदर्श स्थान माना जाता है। अंतरराष्ट्रीय कानून अध्ययन का यह सर्वश्रेष्ठ केंद्र है। २०११ में विश्व न्याय संस्थान खोला गया, जहाँ न्याय, शांति, सुरक्षा विषयक शोध होता है। एक अंतरराष्ट्रीय विधि अकादमी तथा पुस्तकालय है, जहाँ कई देशों के न्यायाधीश प्रशिक्षण ग्रहण करने आते हैं। न्याय और कानूनी व्यवस्था को सर्वोपरि माननेवाले इस भवन के बारे में लिखा गया है कि यह क्षेत्र सैन्य-शक्ति और पशु-बल के लिए अलंघ्य और अदूषणीय है।

अंतरराष्ट्रीय न्यायालय का मुख्य द्वार बंद रहता है। सामान्य जन का प्रवेश निषिद्ध है। सप्ताह में केवल एक दिन, शायद बुधवार को आम पब्लिक के लिए इसका बाग-बगीचे वाला केवल एक भाग खोला जाता है। बड़े गेट से सटी एक गैलरी है, जहाँ दर्शक बहुत सी वस्तुएँ, चित्र, इतिहास के पन्ने आदि देख सकते हैं। फिल्म के द्वारा भी काफी देख, सुन सकते हैं। छोटा सा संग्रहालय है, जहाँ जजों के पुराने चोगे, पदक, ऑर्डर-ऑर्डर कहते हुए मारे जानेवाले टुल्ले, कानून की खुली पुस्तक आदि वस्तुएँ हैं। कुछ उद्धरण और लिखावट है। And the work of righteousness shall be peace; and the effect of righteousness quietness and assurance for ever. अर्थात् नेकी और न्यायपरायणता का लक्ष्य शांति है···तथा न्यायपरायणता, शांति और आश्वासन सदा बने रहें···। एक और अंश २८ अगस्त, १९१३ का है, जो जर्मन/डच भाषा में होने से मैं समझ नहीं सका।

गैलरी के एकदम बाहर की दीवार पर धातुअक्षरों में संसार की कई भाषाएँ लिखी हैं। इनमें देवनागरी में 'स्वागतम्' तथा 'अतिथि देवो भव' देखकर मैं अति आनंदित हुआ। थोड़ा गर्व भी हुआ। शायद तमिल लिपि में भी कुछ लिखा हुआ था। बाहर एक विश्व शांति-पथ बना हुआ है, जिसमें ९६ देशों ने शिरकत की थी। उन देशों से पत्थर मँगवाए गए थे। उन्हीं को जोड़कर इस पथ का निर्माण किया गया। कुछ देशों के पत्थर नहीं भी पहुँचे। वे तारांकित हैं। 'आई' वाले वर्णक्रम में इंडिया, यानी भारत का पत्थर साफ दिखाई पड़ता है। शांति के किसी भी उपक्रम में भारत का योगदान सदा ही रहा है। इसका उद्घाटन २७ अप्रैल, २००४ को हुआ। यह प्रार्थना भी की गई है—"Please add your prayer for peace as you walk around." (प्रदक्षिणा करते हुए शांति के लिए अपनी ओर से भी प्रार्थना कीजिए।)

निकट ही एक शांति-ज्योति प्रज्वलित है, जो सदा प्रकाशित रहती है। यह ज्योति १९९९ में स्थापित की गई थी, जब पहली बार पाँचों महाद्वीपों से सात शांति ज्योतियाँ सागर, पर्वत, जंगल लाँघकर यहाँ पहुँची थीं और मानव-शांति तथा कल्याण के लिए एक-दूसरे में मिल गई थीं। कामना है कि सर्वजन हिताय यह ज्योति अखंड रहे। यह तथ्य भी गर्व करने लायक है कि भारत के दो विधिवेत्ता डॉ. नागेंद्र सिंह और दलवीर भंडारी अंतरराष्ट्रीय न्यायालय के न्यायाधीश रहे हैं।

ट्यूलिप्स का रंगीन संसार

क्लिंगनडेल से लगभग २० मिनट की ड्राइव पर क्योकेन हॉफ में खेत हैं, जहाँ ट्यूलिप्स की बड़े पैमाने पर खेती होती है। हेक्टेयर पे हेक्टेयर तक यह जमीन फैली पड़ी है, जहाँ मौसम आने पर पूरी दुनिया बदल जाती है। हॉलैंड के ट्यूलिप्स विश्व-प्रसिद्ध हैं। ये कई दिनों तक, बिना किसी विशेष देखभाल के तरो-ताजा रह सकते हैं। इनके निर्यात से नीदरलैंड्स को अच्छी-खासी आदमनी होती है। इनके खिलने का मौसम है लगभग मई-जून महीना, जिसे यहाँ की वसंत ऋतु कह सकते हैं, जब लाखों ट्यूलिप्स खिलते हैं, जो शोभा का दस्तरखाना बिछाकर हर आम-खास को आमंत्रित करते हैं। अच्छा, ट्यूलिप्स को हिंदी में क्या कहें? मोटे रूप से नलिनी कह सकते हैं। वस्तुतः यह कंद जाति का पुष्प है—बल्व-फ्लावर।

दुर्भाग्य से जब मैं गया तो वह फरवरी मास था—भारत के हिसाब से बहुत-बहुत ठंडा। यूरोप तो तब और भी ठंडा होगा। नीदरलैंड्स में इन दिनों बारिश और बर्फ भी पड़ सकती है। सर्दी तो हाड़ कँपानेवाली होती ही है। अतः जब मैं गया तो पाया कि ट्यूलिप्स अभी उगे ही थे। छोटी-छोटी कोपलें सर उठाकर चकित नेत्रों से नए संसार को आँकने का प्रयास कर रही थीं। मन-ही-मन गणना कर रही होंगी कि फलने-फूलने के दिन अभी दूर हैं। शिशु से बालिका, फिर कैशोर्य और तब नवयुवती का मदमाता यौवन, जिसकी हिलोरें कभी इधर हिलाएगी कभी उधर। चित्रों और फिल्मों के माध्यम से मैंने देखा है कि उस ऋतु में लाल, पीले और गुलाबी ट्यूलिप्स मीलों तक मस्ती में झूमते हैं, खुशी के गीत गाते हैं और सौंदर्य तथा सुगंध से पूरे प्रांतर को मालामाल कर देते हैं। जमीन तो दिखती नहीं, उसके ऊपर लाल-पीली आभावाली एक नई जमीन उठकर दूर तक बिछ जाती है, उतनी दूर तक, जहाँ तक आँखें देख सकती हैं। तब हजारों पर्यटक इस दृश्य को देखने के लिए व्यग्र हो उठते हैं। ट्यूलिप्स के अतिरिक्त डेफोडिल्स, हाइसिंथस आदि दूसरे पुष्प भी इस उल्लास के मेले में अपना योगदान करते हैं। कितने कैमरों की आँखें पलभर झपककर इन्हें प्रशंसकों की दुनिया के लिए बाँध ले जाती हैं। भारत की और दूसरे देशों की भी, कितनी ही फिल्मों की शूटिंग यहाँ हुई है। कई गाने भी फिल्माए गए हैं। किसी क्षेत्र के लिए सुंदर पुष्पों का वरदान भी देवी प्रसाद से कम नहीं।

कितना अच्छा होता, यदि मैं इस मौसम की जगह मई में आया होता!

सा अ

सी-४, बी/११०, पॉकेट-१३
जनकपुरी, दिल्ली-११००५८
दूरभाष : ९८७०१०३४३३

बाल-कथा

पॉलीथिन और गौ-हत्या

● राजीव नामदेव 'राना लिधौरी'

एक दिन मैं अपनी छोटी बच्ची के साथ देवीजी के मंदिर में दर्शन करने गया, तो वहाँ पर मंदिर के बाहर प्रसाद व अगरबत्ती के खाली पैकिट और पॉलीथिन यहाँ-वहाँ फैली पड़ी थीं। उस कचरे के ढेर में से एक गाय उन पॉलीथिनों को खाकर अपना पेट भर रही थी। यह देख बच्ची ने पूछा कि पापा, लोग यहाँ पॉलीथिन क्यों फेंक देते हैं? उन्हें यह गाय खा रही है, जो कि बहुत नुकसानदायक होती है। हमें स्कूल में पर्यावरण में पढ़ाया जाता है कि पॉलीथिन बहुत समय तक नष्ट नहीं होती है। अत्यधिक मात्रा में खाने से यह गाय के पेट में एकत्र हो जाती है, जिससे गाय का पेट फूल जाता है और अंत में गाय मर जाती है। इस प्रकार पूरे देश में हजारों गाय असमय ही मौत के मुँह में चली जाती हैं। गाय के अलावा बकरी, भैंस, कुत्ते, सुअर आदि जानवर भी इन पॉलीथिनों को खा जाते हैं।

हम लोग मंदिर में प्रसाद चढ़ाकर पुण्य कमाने के लिए जाते हैं, किंतु अनजाने में ही इन पॉलीथिनों को फेंककर हम गाय की मौत के भागीदार भी बन जाते हैं और गौ-हत्या का कुछ पाप हमारे ऊपर भी लग जाता है। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि हम कचरे को एक स्थान पर ही फैंके? मैंने कहा, हाँ, हो सकता है, इसीलिए तो एक कोने में कचरे का बड़ा सा डिब्बा रख दिया जाता है, किंतु लोग लापरवाही एवं आलस में पॉलीथिन यहाँ-वहाँ ही फेंक देते हैं।

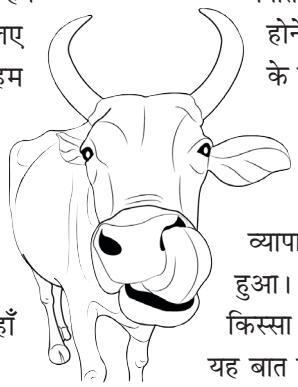

घर आकर मैंने विचार किया कि बच्चे ने सही कहा है, हम मंदिर में पुण्य कमाने जाते हैं, लेकिन उल्टे गौ-हत्या का पाप कमाकर आ जाते हैं। मैंने सोचा कि कुछ तो हमें करना पड़ेगा। मैंने एक योजना बनाई और उसमें अपनी बच्ची को भी शामिल कर लिया। उस पर अमल करने के लिए शुक्रवार का दिन चुना और सुबह से ही शुक्रवार को मैं बच्ची के साथ देवीजी के मंदिर में पहुँच गया। अगरबत्ती व प्रसाद चढ़ाने के बाद अगरबत्ती की पॉलीथिन को गेट की जाली में एक गाँठ लगाकर बाँध दिया, ऐसा ही बच्ची ने भी किया। यह देख मंदिर के पुजारी ने पूछा कि यह क्या कर रहे हो? मैंने कहा, पंडितजी, देवी माँ आज रात में इस बच्ची के सपने में आई थीं और माँ ने कहा था कि जो भी भक्त मेरे मंदिर में सच्चे मन से पाँच शुक्रवार पूजा करके पॉलीथिन से एक गाँठ बाँधकर जो भी मनौती माँगेगा, उसकी मनौती अवश्य पूरी होगी। मेरा व्यापार इस समय बहुत घाटे में चल रहा है, मेरी उधारी बहुत है, लोग पैसा वापस करने ही नहीं आ रहे हैं, इसीलिए मैंने देवीजी से मनौती माँगी है कि मेरा उधार मिल जाए तथा मेरे व्यापार में लाभ होने लगे। इस प्रकार मैंने पाँच शुक्रवार जाकर देवीजी के मंदिर के पॉलीथिन बाँधकर मनौती माँगी।

संयोग से कहें या सचमुच, माँ की कृपा से मेरा उधार में डूबा पैसा धीरे-धीरे वापस मिलने लगा और मुझे व्यापार में भी दिनोदिन अधिक लाभ होने लगा। मेरा व्यापार खूब चलने लगा। यह देख मेरे पड़ोसी को बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने हमसे पूछा तो हमने वही देवीजी के सपनेवाला किस्सा उन्हें सुना दिया, मंदिर के पंडितजी ने भी अनेक लोगों को यह बात बताई, इस प्रकार यह बात धीरे-धीरे पूरे गाँव में आग की तरह फैल गई। अब जो भी लोग देवीजी के मंदिर जाते, वे पॉलीथिन को यहाँ-वहाँ नहीं फैंकते बल्कि उन्हें वहीं गेट पर ही जालियों में बाँध देते। जो लोग पॉलीथिन नहीं लाते, वे लोग वहीं पर पड़ी हुई पॉलीथिनों को उठाकर ही बाँधकर मनौती माँग लेते। इस प्रकार अब मंदिर में कहीं भी पॉलीथिन नीचे गिरी हुई नहीं दिखाई देती। अब मैं संतुष्ट था कि इस मंदिर के पास से कोई भी गाय पॉलीथिन खाकर नहीं मरेगी। मेरे एक झूठ से यदि सैकड़ों गायों की जान बचती है तो यह मुझे उचित लगा।

सुपरिचित साहित्यकार। 'अर्चना' (कविता-संग्रह); 'रजनीगंधा', 'नौनी लगे बुंदेली' (बुंदेली हाइकु संग्रह); 'विश्व में बुंदेली कौ पैलो हाइकु-संग्रह, 'राना का नजराना' (गजल-संग्रह); 'लुक-लुक की बीमारी' (बुंदेली व्यंग्य-संग्रह) तथा पत्र-पत्रिकाओं में दो हजार रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी से रचनाएँ प्रसारित; कई संस्थाओं के अध्यक्ष एवं पदाधिकारी। कुल ७४ साहित्यिक सम्मान प्राप्त।

नई चर्च के पीछे, शिवनगर कॉलोनी
टीकमगढ़-४७२००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९८९३५२०९६५

पक्षियों से प्रेम

● वंदनागोपाल शर्मा 'शैली'

''आसमान में पक्षियों को उड़ते देखकर मुझे भी उड़ने का मन करता है, बाबा!''

''बेटा! पक्षियों के तो पंख होते हैं, इसलिए उड़ते हैं!''

''हाँ, बाबा! हमारे पंख होते तो हम मानव नहीं कहलाते!''

भगवान् ने जीव-जंतु पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, जानवर सभी में अलग-अलग अंग बनाए हैं! सबकी कार्यप्रणाली अलग-अलग बनाई है···खान-पान, रहन-सहन में भी भिन्नता है। पशुओं में कुछ ऐसे भी हैं, जो मानव की भाषा समझते हैं। जो पालतू होते हैं, वह धीरे-धीरे इशारे की भाषा भी समझने लगते हैं।

ईश्वर ने मानव को अधिक समझदार बनाया है। मानव के पास अच्छे-बुरे, सही-गलत की पहचान करने की शक्ति है। कुछ मानव अच्छा कार्य करके अन्य प्राणियों की रक्षा कर देवतुल्य भी बन जाते हैं। बिट्टू जब भी बाबा के पास बैठता, तब नई-नई जानकारियाँ लेता था। वह जिज्ञासु प्रवृत्ति का बालक था और अपनी उम्र के बालकों से भी काफी होशियार था। सबसे ज्यादा लगाव उसे पक्षियों से था, जब भी वह पैदल आता-जाता, तब रास्ते में पड़नेवाले पेड़ों से आती पक्षियों की आवाज को ध्यान से सुनता, तो एक पल के लिए रुक जाया करता था। वह उन पक्षियों की बोली से काफी प्रभावित होता था। एक दिन वह पाठशाला से आते समय छोटी-छोटी पगडंडियों से होकर गुजरा, क्योंकि वहाँ अधिक झाड़ियाँ थीं, उसे हरियाली से विशेष प्रेम था।

आज तो वह कोयल की कूक सुनकर आया था, अपने बाबा को बताकर खुश हो रहा था—''बाबा, आज मैंने कोयल की कुहू-कुहू सुनी···कितना मीठा गाती है, मुझे बया भी अच्छी लगती है, वह बेसुरा कौवा पसंद नहीं!''

हा···हा···हा बाबा को हँसी आ गई, ''क्यों बेटा··· ?''

''कोयल मीठा गाती है, उसकी बोली कर्णप्रिय लगती है और कौवे की बोली काँव-काँव फटे ताल की भाँति लगती है। बया भी कितना प्यारा चहचहाती है, मुझे इनसे अपनापन लगता है!''

''शाबाश बेटा, तुम्हें अब पक्षियों की बोली में अंतर समझ में आने लगा है!''

सुपरिचित लेखिका। अब तक 'आने की आहट' (काव्य संकलन), 'अहसास प्रेम का' (कहानी-संकलन) तथा पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित एवं आकाशवाणी रायपुर से कविता पाठ व कहानियों का प्रसारण, परिचर्चा महिला विषयों पर, मंच पर काव्य पाठ में प्रतिभागिता। छोटे-बड़े ३० से अधिक सम्मान प्राप्त।

बिट्टू जब कोयल की आवाज सुनकर घर लौटता तो बाबा के सामने कोयल की वाणी बोलकर ताली बजाकर झूमता-नाचता था। कभी-कभी तो वह उसी पेड़ के नीचे बैठकर खाने का डिब्बा खोलकर खाता और कुछ भोजन वहीं आस-पास बिखेर देता था, यह सोचकर कि पक्षी भी खाएँगे! वह अपने मित्रों से कम और इन पक्षियों से ज्यादा बातें करता था, उसे पेड़ से भी विशेष लगाव हो गया था।

एक बार बारिश में भीग जाने की वजह से बीमार बिट्टू दो दिन पाठशाला नहीं जा सका। जब उसके स्वास्थ्य में कुछ सुधार लगा तो वह जिद करने लगा, ''मुझे पढ़ने जाना है!''

माँ ने उसे समझाकर भेजा कि ''घर का साफ पानी ले जाओ, उसे ही पीना और घर का ही डिब्बा खाना···खुली वस्तुएँ मत खाना!''

''ठीक है माँ, मैं अपना खयाल रखूँगा!''

खुशी-खुशी वह पाठशाला गया, आज वह बहुत खुश था, रास्ते में बया-कोयल से दो दिन बाद बातें जो करने को मिली थीं, लेकिन लौटते वक्त वह यह दृश्य देखकर हतप्रभ रह गया, सुबह जो पेड़ वहाँ रास्ते में था, चार घंटे पश्चात् ही वह कहाँ गया?

करीब से उसने यह देखा कि पेड़ सड़क के किनारे गिरा पड़ा है। कुछ लोग भीड़ लगाकर वहाँ पर खड़े हैं! घोंसले व बिखरे अंडों को देखकर बिट्टू जोर-जोर से रोने लगा—मेरा पेड़ किसने गिराया···बया-कोयल कहाँ गए और उनका घोसला किसने तोड़ा?

भीड़ से निकलकर बाबा बाहर आए, उन्होंने बिट्टू को चुप कराया।

''बिट्टू यह सब अतिक्रमण हटानेवालों ने किया है!''

बया दूसरे पेड़ पर बैठकर यह सब देख रही थी, वह भी दु:खी थी कि अपने अंडों को नहीं बचा पाई! बिट्टू घर लौट आया, आज उसने किसी से कोई बात नहीं की और कुछ भी नहीं खाया।

बाबा ने सारी बातें बिट्टू की माँ को बताते हुए कहा, ''बिट्टू ने आज कुछ भी नहीं खाया, क्योंकि वह पेड़ों को लेकर परेशान है!''

बिट्टू पाठशाला के लिए उसी मार्ग से निकला···उस स्थान को रिक्त पाकर वह अनमना सा कक्षा में उपस्थित हुआ। मास्टरजी भी इस घटना के विषय में जानते थे, उन्होंने भी बिट्टू को ढाढ़स बँधाया और बच्चों को बताया कि कभी भी स्वयं को अधिक ताकतवर और पक्षियों को कमजोर मत समझो, वे पुन: तिनका-तिनका जोड़कर घोंसला बना लेंगे, लेकिन मानव को अपना घर बनाने में महीनों लग जाते हैं।

बच्चों ने पूछा, ''मास्टरजी, उस घोंसले वाले पेड़ को किसने गिराया?'' ''बच्चो, उसे जिन निर्दयी लोगों ने गिराया था, उन्हें पुलिस पकड़कर ले गई और बतौर सजा के जुर्माने में पाँच पेड़ लगाने का संकल्प दिलवाया है! यह भी कहा कि उन पेड़ों की देखभाल वृक्ष बनने तक एक छोटे बच्चे की देखरेख जैसी ही करनी होगी!''

अंत में मास्टरजी ने कहा, ''सभी बच्चे प्रण करो कि 'पेड़ कभी नहीं काटेंगे और यदि कोई काटे तो उसे रोकेंगे···!''' बच्चों ने मास्टरजी की बात को स्वीकार किया। बच्चों ने कहा, ''मास्टरजी, सजा देने का तरीका हमें पसंद आया, उस व्यक्ति ने एक पेड़ गिराया था, लेकिन पाँच पेड़ लगाने से कितने ही पक्षियों को घर मिल जाएगा, अर्थात् घोंसला बनाने के लिए स्थान मिल जाएगा। पेड़ हमारे गाँव की शोभा बढ़ाने के साथ-ही-साथ शीतल हवा एवं छाया भी देंगे।'' अगले ही दिन बिट्टू ने बया को दूसरे पेड़ पर बैठा पाया और उसे पहचान लिया। बया भी स्नेहभरी आँखों से बिट्टू को निहार रही थी। जब हम किसी भी प्राणी से प्यार करते हैं तो उसे भीड़ में भी पहचान लेते हैं! अच्छा व्यवहार करने से पशु-पक्षी हमारे मित्र बन जाते हैं।

बलौदा बाजार, भाटापारा (छत्तीसगढ़)
दूरभाष : ७९७५२४२९३७

लघुकथा

शुरुआत

• मार्टिन जॉन

तपती दुपहरिया में आग उगलते सूरज से बेपरवाह, पसीने से सराबोर उन दोनों को अपनी बगिया में कड़ी मेहनत करते देख मैं जज्बाती हो गया। दिलो-दिमाग में विचारों की आवाजाही शुरू हो गई। संवेदना हरहराने लगी। शाम ढलने के साथ उथल-पुथल मचाती भावनाएँ कविता के रूप में कागज पर उतर गईं।

दिनभर की मजदूरी देने के पहले मेरी दिली इच्छा हुई कि उन दोनों को, उन्हीं पर लिखी कविता सुनाई जाए।

काम खत्म होने के बाद अपने छोटे से लाइब्रेरी में उन्हें बिठाकर बड़े उत्साह के साथ हमने कहा, ''सुनो, हमने तुम दोनों पर एक कविता लिखी है।''

''ई का होत है, बाबूजी?'' दोनों के समवेत, जिज्ञासु स्वर ने शुरू में ही मेरे उत्साह पर हथौड़ा चला दिया।

''अरे भाई, गाँव-घर में दोहा, चौपाई, गीत वगैरह सुनते हो न, बस, कुछ इसी तरह की चीज है···सुनाऊँ?''

''इससे का फायदा होगा?···कौनो पेट भरने की चीज तो है नहीं!''

''देखो, इसे मैं पत्रिका में छपवाऊँगा।'' सामने पड़ी पत्रिका की ओर इशारा करते हुए कहा, ''छपने के बाद इसे लोग पढ़ेंगे, तुम्हारे बारे में जानेंगे···आँधी-तूफान, सर्दी-गरमी में भी मजदूर भाई अपने काम में कैसे डटे रहते हैं, इसका एहसास उन्हें होगा।''

''तो का हमरे खून-पसीना के बारे में लोग अभी तक नहीं जानते हैं?''

''जानते हैं जरूर, पर इसे पढ़कर शिद्दत से तुम्हारी मेहनत को महसूस करेंगे। तुम्हारी स्थिति पर गंभीरता से सोचेंगे। लोगों की सोच में बदलाव आएगा तो तम्हारी जिंदगी में भी बदलाव आएगा।''

''तो इसकी शुरुआत आप ही कर दो न, बाबूजी!''

मैं पलभर के लिए अचकचाया। थोड़ा गुस्सा भी आया। लेकिन मैं उन्हें अपनी कविता सुनाने की जिद पर अड़ा हुआ था। सो खुद को संयत किया, ''कैसी शुरुआत चाहते हो?''

''हम लोगन का मजदूरी बढ़ा दीजिए न···इससे थोड़ा-बहुत बदलाव आ जाएगा!''

मेरी परिवर्तनकामी चेतना निरुत्तर होकर बगलें झाँकने लगी। सृजन की जमीन पर बेरहमी से कुदाल चलते देख कागज पर उतरी कविता की कुटिल मुसकान मुझे मुँह चिढ़ा रही थी।

अपर बेनियासोल, पो.-आद्रा
जिला-पुरुलिया (पश्चिम बंगाल)
दूरभाष : ०९८००९४०४७७

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक मिला। लगभग एक साल से अंक न मिलने की वेदना छूमंतर हो गई। संपादकीय में दादाभाई नौरोजी पर आपके विचार सटीक लगे। हमें अपने महापुरुषों, शहीदों को जयंती पर अवश्य याद करना चाहिए। कुछ पत्रिकाओं की चर्चा में आपने सटीक चित्रण किया है। मुख्यमंत्री, मंत्री, विधायक आदि का राजकोष से आयकर भरने का सही विवरण देकर आपने पाठकों को उचित जानकारी दी है। अनुच्छेद ३७० पर पाकिस्तान की बौखलाहट पर आपने सही राय दी है। मोदी सरकार के सौ दिन पर आपका विश्लेषण सही है। सात पृष्ठ का संपादकीय संपूर्ण पत्रिका का सार लगा। अन्य आलेख, कहानी, कविता, लघुकथाएँ बहुत अच्छी लगीं। 'दीप पर्व' के दोहे बहुत अच्छे लगे। 'राजमाता से लोकमाता' आलेख में राजमाता विजयाराजे सिंधियाजी का संक्षिप्त जीवन चरित्र बहुत अच्छा लगा।

—विजयपाल सेहलंगिया, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)

'साहित्य अमृत' का अक्तूबर अंक पढ़ने का सुयोग मिला। समय सापेक्ष यह अंक दीपावली पर्व और गांधीजी की १५०वीं जयंती पर केंद्रित है। विद्वत्तापूर्ण संपादकीय चिंतन अंतर्मन को जाग्रत् करता है। दीपावली विषयक कई आलेख—यथा 'दीप तेरे कितने रूप', 'चमक-धमक-महक का पर्व दीपावली', ललित निबंध 'ज्योति पर्व दीपावली' तथा कविता 'छाया रहा अँधेरा' आदि प्रस्तुतियाँ भावपूर्ण तथा मनमोहक लगीं। गांधीजी के महावतरण को कई मनीषियों ने स्मरण-नमन किया है। 'गांधीजी को भूल गए' कविता पूर्णत: लयबद्ध न होकर भी सारगर्भित रही। व्यंग्य के सशक्त हस्ताक्षर गोपाल चतुर्वेदी ने नियमित व्यंग्य में 'कॉफी हाउस की बहस और कट मनी' रचना हृदय को गुदगुदाती है और गंभीर विचार करने के लिए विवश भी करती है। अन्य व्यंग्य 'पाठ्यक्रम में रचनाओं का चयन' अपेक्षित हास-परिहास उत्पन्न करने में असफल रहा। बाल संसार स्तंभ में एक बाल कहानी 'झिलमिल दीपावली' देकर बाल-साहित्य के प्रति पूर्ण न्याय नहीं लगता, इसमें कुछ बाल-कविताओं का होना वांछनीय है। पत्रिका सचमुच नामानुरूप साहित्य का अमृत बाँट रही है।

—गौरीशंकर वैश्य विनम्र, लखनऊ

'साहित्य अमृत' के नवंबर अंक के संपादकीय में सदा की भाँति सामयिक घटनाओं के बारे में विशेष जानकारी बहुत महत्त्वपूर्ण लगी। 'गुरुनानक देव के जीवन के प्रेरणास्पद प्रसंग' सबके लिए अपनाने योग्य हैं। नरेंद्र कोहली की कहानी 'मेरी बेटियाँ' भारत के विभाजन के समय की हृदय-विदारक घटना की वास्तविकता को प्रकट करती है। उस समय ऐसी घटनाएँ आम बात थीं। कुलभूषण सोनी की 'कहानी रुपए और सिक्कों के जन्म की' बालकों के लिए ज्ञानवर्धक है। बाल कविता 'नाक' में वंदना मुकेश ने नाक से संबंधित मुहावरों का सुंदर प्रयोग किया है। संक्षेप में यह अंक नई कविताओं, नई कहानियों की प्रस्तुति के कारण पठनीय एवं संग्रहणीय है।

—कृष्णचंद्र टवाणी, किशनगढ़ (राज.)

'साहित्य अमृत' का नवंबर अंक समय पर मिला। कमल किशोर गोयनकाजी के आलेख से मैं अत्यधिक प्रभावित हुआ। प्रेमचंदजी के समय देश में दो प्रमुख धाराएँ प्रचलित थीं। एक मार्क्सवादी और दूसरी गांधीवादी। प्रमुख लेखकों द्वारा मार्क्सवादी मान्यता के अंतर्गत ही प्रेमचंद साहित्य का मूल्यांकन किया जा रहा था। कुछ खूनी क्रांति के समर्थक लेखक और रूसी समाजवाद के ध्वजवाहक विचारक अबतक प्रेमचंद को मार्क्सवाद का मॉडल बनाकर पेश कर रहे थे। गोयनकाजी ने प्रेमचंदजी की रचनाओं का गहन अध्ययन कर उनकी सोच को अपने ढंग से उद्धरित किया है। प्रेमचंद का कथा-साहित्य एक प्रकार से राष्ट्र एवं स्वराज्य का आख्यान है। गोयनकाजी ने उन रहस्यों को सार्वजनिक किया है, जो आम तौर पर पाठकों की नजरों से ओझल रहते हैं। प्रेमचंद की रचनाओं पर आधारित यह विमर्श आलोचना के मानदंडों को पुन: परिभाषित और प्रतिष्ठित करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

—बी.डी. बजाज, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का सितंबर अंक बड़ा ही सार्थक और जानकारीपूर्ण लगा। संपादकीय में 'अनुच्छेद ३७० निरस्त : एक ऐतिहासिक निर्णय' बड़ा महत्त्वपूर्ण और स्पष्ट लगा। धर्मवीर भारती का 'काउबेल्ट की उपकथा', कुलदीप चंद अग्निहोत्री का 'जम्मू-कश्मीर में अनुच्छेद ३७० का उदय और अस्त' बहुत जानकारीपूर्ण लगे। गोपाल चतुर्वेदी का 'खामोशी के खयाल' सन्नाटे में छंद बनता नजर आया। प्रेमपाल शर्मा का 'मेरे उत्प्रेरक मास्साब' वाकई दिल को छू गया। पहले वाकई उस तरह के गुरुजी थे, जो शिक्षा का सही अर्थ बतलाते थे। उनका जीवनदर्शन सही मार्गदर्शन देता था, मुझे भी ऐसे गुरुजी के सान्निध्य में रहने का सुख-सौभाग्य मिला है। श्रीराम परिहार का ललित-निबंध 'कोई बात तो है' बड़ा रोचक, सामयिक और समीचीन लगा। मेरे ज्ञान का आयात हो, पर विवेक के साथ हो। संस्कृति मनुष्य के चित्त की खेती है। संस्कृति मनुष्य के चिंतन की उपज है। गांधीजी ने कहा था, भारत में चाहे अंग्रेज जाएँ, पर अंग्रेजियत चली जाए। दुर्भाग्य से अंग्रेजियत रह गई। भारत गुम हो गया है, इंडिया आ गया है। पाश्चात्य विचारकों की दृष्टि से भारतीय संस्कृति को देखना, वैसा ही है जैसे मीटर से दूध और लीटर से कपड़ा मापा जाए। टॉल्सटॉय की कहानी 'ईश्वर सत्य को देखता है', प्रमोद कुमार का 'सरहद को प्रणाम-यात्रा' बड़ा ही भाया।

—नंद किशोर तिवारी, वाराणसी

'साहित्य अमृत' का नवंबर अंक पढ़ने को मिला। विष्णु प्रभाकरजी की कहानी 'गोपाल की बुद्धि' अच्छी है। नरेंद्र कोहलीजी सिद्धहस्त कहानी लेखक हैं। राकेश भ्रमर की कहानी 'हृदय परिवर्तन' एक सामाजिक कहानी है। जो लोग दूसरों की अच्छी-बुरी बातें खोजते रहते हैं, अपनी नहीं, उनके लिए यह सबक है। विनोद शंकर गुप्त का 'भय बिनु होए न प्रीति' एक जानदार व्यंग्य आलेख है। देखें तो भय हर जगह और हर बात में समाया है। अन्य कहानियाँ भी पढ़ने लायक हैं। कविताएँ भी अच्छी लगीं।

—ब्रजमोहन जैन, दिल्ली

वर्ग पहेली (१७१)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३१ दिसंबर, २०१९ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते फरवरी २०२० अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१६९) का शुद्ध हल

१भु	ख	२म	३रा	■	४का	५ना	फू	६सी
ग	■	७द	श	८म	ल	व	■	मां
९ता	१०ना	■	११न	क्का	र	■	१२धा	क
१३न	ज	१४ला	■	र	■	१५कु	रा	न
■	१६न	चा	ना	■	१७ल	क	वा	■
१८पो	ख	र	■	१९बै	■	१०र	हि	२१त
२२प	रा	■	२३आ	रा	२४म	■	२५क	ल
ला	■	२६आ	वा	ग	म	न	■	वा
२८ना	जा	य	ज	■	२९ता	र	घ	र

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **डॉ. ए. श्रीनिवासन**
राजभाषा अधिकारी
रेलवे मंडल प्रबंधक का कार्यालय
मदुरई मंडल, दक्षिण रेलवे-६२५०१६
दूरभाष : ८०५६१६२९७३

२. **डॉ. अरुणा व्यास**
२८, शंकर विहार-ई. सिद्धार्थ नगर
जयपुर-३०२०१७
दूरभाष : ९४६१५००२०४

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १६९ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री विजयपाल सेहलंगिया, खुशी खिच्ची, अंकिता, ब्रह्मानंद खिच्ची (महेंद्रगढ़), फकीरचंद ढुल (कैथल), सुभाष शर्मा, बी.डी. बजाज, दिनकर सहल, रत्ना वार्ष्णेय (दिल्ली), विनीता सहल (मुंबई), गिरधारी लाल अग्रवाल (पुसद), संतोष शर्मा (गाजियाबाद), शोभा दानी (नोएडा), माला श्रीवास्तव (ग्रेटर नोएडा), रेणु मिश्र (जयपुर), मोहन उपाध्याय, रमन गर्ग (अजमेर), बद्रीलाल व्यास (राजगढ़), सतीश जोशी (रतलाम), जगदीश राय गर्ग (मानसा), रुक्मणी संगल (पटियाला), सुधांशु शेखर, नीरजा शर्मा (अहमदाबाद), दयावंती शर्मा (सोलन), पी.के. राधामणि (कोषिकोड)।

वर्ग पहेली (१७१)

बाएँ से दाएँ—

१. लांछित (३)
४. चकित (३)
६. दयालुता, कृपालुता (५)
८. वृक्ष की शाखा (३)
१०. पैरों से दबाना, रौंदना (४)
११. विवाहित स्त्री की माँ का घर (३)
१३. पुष्प, फूल (२)
१४. स्थूलकाय होने की अवस्था या भाव (३)
१५. चिट्ठी, खत (२)
१६. अग्निशिखा, लू का झोंका (३)
१८. बिना कहे हुए (२-२)
२०. गले की नली, कंठ (३)
२२. टकटकी लगाकर किसी की ओर देखते रहना (५)
२४. नर्क में जानेवाला, दुराचारी, पापी (३)
२५. उचित (३)

ऊपर से नीचे—

१. धोखा, छल (३)
२. कामना करने योग्य (४)
३. बोझ, वजन (२)
४. अनैतिकता, अन्याय (३)
५. काल्पनिक दृश्य (३,२)
७. मुरलीधर, कन्हैया (२,३)
९. सदृश, तुल्य (३)
१२. सम्मोहकता, कामोत्तेजक (५)
१३. हुक्का पानी (५)
१५. आवरण, परदा (३)
१७. पोशाक (४)
१९. पलक झपकते ही, चिकोटी (३)
२१. भूने हुए मांस की टिकिया (३)
२३. छोटे कद का घोड़ा (२)

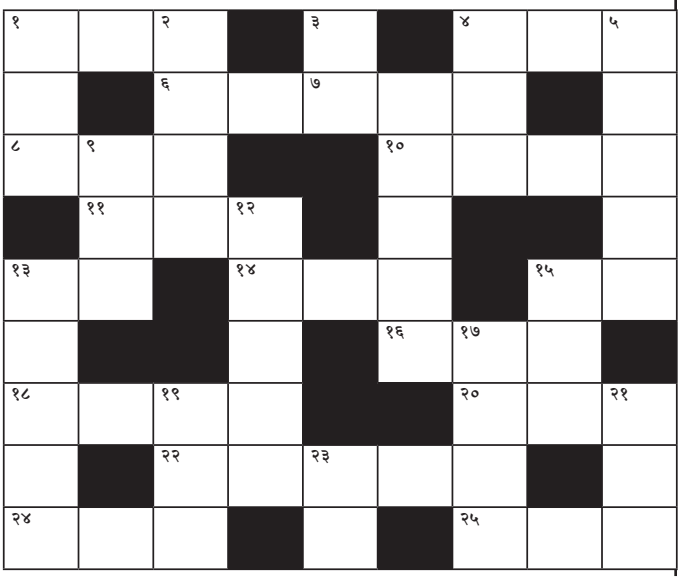

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

वर्ग पहेली (१७०) का हल अगले अंक में।

'साधो ये उत्सव का गाँव' कृति लोकार्पित

विगत दिनों वाराणसी के छावनी क्षेत्र स्थित एक होटल में पंचक्रोसी यात्रा पर आधारित पुस्तक 'साधो ये उत्सव का गाँव' के विमोचन कार्यक्रम की अध्यक्षता संकट मोचन मंदिर के महंत प्रो. विश्वंभरनाथ मिश्र, पं. देवी प्रसाद द्विवेदी, श्री यशवंत देशमुख, कवि श्री कुमार विश्वास एवं वरिष्ठ पत्रकार हेमंत शर्मा आदि ने उसके सांस्कृतिक महत्त्व पर प्रकाश डाला। किताब के संपादक सर्वश्री अभिषेक उपाध्याय, अजय सिंह व रत्नाकर चौबे हैं। यात्रा के दौरान जो अनुभव किया, उसे ३२ लोगों ने अपने-अपने लेख में साझा किया है। संचालन डॉ. जितेंद्रनाथ मिश्र व धन्यवाद ज्ञापन प्रकाशक श्री प्रभात कुमार ने किया। □

पुस्तक लोकार्पित

विगत दिनों पटना पुस्तक मेले में वरिष्ठ पत्रकार श्री कुमार दिनेश की सद्य: प्रकाशित पुस्तक 'गठबंधन राजनीति में बिहार, डबल इंजन सरकार' का लोकार्पण बिहार के उप मुख्यमंत्री श्री सुशील मोदी, एक स्थानीय अखबार के संपादक श्री भारतीय वसंत कुमार और बीबीसी के संवाददाता श्री मणिकांत ठाकुर ने सम्मिलित रूप से किया। □

बच्चों पर पुस्तक लोकार्पित

विगत दिनों पटना पुस्तक मेला और थिंकर्स एंड फिलर्स की ओर से 'आधुनिक जीवनशैली और बच्चों की देखभाल' विषय पर आयोजित चर्चा में एस.पी. श्री कांतेश मिश्रा ने अपने विचार रखे। कार्यक्रम में एडीजी सिविल डिफेंस श्री कुंदन कृष्णन, पटना ग्रामीण एसपी श्री कांतेश मिश्रा, श्रीमती अनुपम सिंह, सर्वश्री संजय जोसेफ, स्टेला पॉल शाह, वंदना झा, दिलीप झा, अंकिता मॉनेट ने भाग लिया। इस अवसर पर प्रभात प्रकाशन के निदेशक श्री पीयूष कुमार मौजूद रहे। □

'मीडिया का वर्तमान परिदृश्य' कृति लोकार्पित

विगत दिनों पटना पुस्तक मेले में प्रभात प्रकाशन के स्टॉल पर पत्रकार श्री राकेश प्रवीर की पुस्तक 'मीडिया का वर्तमान परिदृश्य' का लोकार्पण करते हुए उपमुख्यमंत्री सुशील कुमार मोदी ने कहा कि सोशल मीडिया के वर्तमान दौर में फेक न्यूज का संकट गहराता जा रहा है। इस मौके पर वरिष्ठ पत्रकार श्री स्वयंप्रकाश व लेखक श्री राकेश प्रवीर ने भी अपने विचार व्यक्त किए। प्रभात प्रकाशन के निदेशक डॉ. पीयूष कुमार ने अतिथियों का धन्यवाद ज्ञापित किया। मंच संचालन वरिष्ठ पत्रकार डॉ. ध्रुव कुमार ने किया। □

तीन पुस्तकें लोकार्पित

३ नवंबर को नई दिल्ली के साहित्य अकादेमी सभागार में प्रो. अरुण कुमार भगत द्वारा लिखित-संपादित आपातकाल विषयक तीन पुस्तकों 'आपातकाल के काव्यकार : समालोचना एवं साक्षात्कार', 'आपातकाल के संस्मरण' और 'डॉ. देवेंद्र दीपक का आपातकालीन साहित्य : दृष्टि और मूल्यांकन' का संघ के अखिल भारतीय संपर्क प्रमुख प्रो. अनिरुद्ध देशपांडे, गुजरात के पूर्व राज्यपाल प्रो. ओमप्रकाश कोहली, म.प्र. साहित्य अकादमी के पूर्व निदेशक डॉ. देवेंद्र दीपक, कुलपति प्रो. संजीव कुमार शर्मा ने लोकार्पण किया। धन्यवाद डॉ. अविनाश कुमार सिंह ने दिया □

'सृजन मूल्यांकन' का 'प्रकाश मनु विशेषांक' लोकार्पित

विगत दिनों फरीदाबाद में 'सृजन मूल्यांकन' पत्रिका के प्रकाश मनु विशेषांक का लोकार्पण मनुजी के निवास पर सुप्रसिद्ध बाल साहित्यकारों सर्वश्री शकुंतला कालरा, सूर्यनाथ सिंह, महाबीर सरवर, अशोक प्रियदर्शी, सुनीता, आरती स्मित, सुरेश्वर, वेदमित्र शुक्ल, आनंद विश्वास, अखिलेश श्रीवास्तव 'चमन' और ओमप्रकाश कश्यप ने लोकार्पण किया। 'सृजन मूल्यांकन' के इस विशेषांक के साथ ही प्रकाश मनुजी की चिर-प्रतीक्षित आत्मकथा 'मेरी आत्मकथा रास्ते और पगडंडियाँ' तथा उनके दो अन्य बृहत् ग्रंथों 'हिंदी बाल साहित्य के निर्माता' व 'प्रकाश मनु के संपूर्ण बाल उपन्यास' (दो खंडों में) तथा डॉ. सुनीता की पुस्तक 'मेरी प्रतिनिधि बाल कहानियाँ' का भी उपस्थित साहित्यिकों ने लोकार्पण किया। उपर्युक्त महानुभावों ने अपने संस्मरण सुनाए एवं विचार व्यक्त किए। □

'शब्द-शब्द मन' कृति लोकार्पित

१३ अक्तूबर को मधु प्रकाशन, बदायूँ द्वारा प्रकाशित डॉ. ज्ञानेंद्र माहेश्वरी की नवीनतम काव्य-कृति 'शब्द-शब्द मन' का लोकार्पण स्वामी शुकदेवानंद तथा डॉ. शालीन कुमार सिंह के करकमलों से श्रीमती मनोरमा जौहरी के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ। □

कहानी-संग्रह 'नमकसार' लोकार्पित

८ सितंबर को 'स्पंदन' संस्थान, जयपुर के तत्त्वावधान में श्रीमती रजनी मोरवाल के कहानी-संग्रह 'नमकसार' का लोकार्पण प्रसिद्ध उपन्यासकार श्रीमती चित्रा मुद्गल ने किया। कृति की समीक्षा में कथाकार श्री चरणसिंह 'पथिक' व श्रीमती उमा ने भाग लिया। मुख्य अतिथि श्री नंद भारद्वाज थे एवं विशिष्ट अतिथि डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल। मंच संचालन श्री प्रेमचंद गांधी ने किया, श्री महेश भारद्वाज ने धन्यवाद ज्ञापन किया। □

कवि-सम्मेलन संपन्न

१६ अक्तूबर को हैदराबाद में श्री श्याम मंदिर सेवा समिति के तत्त्वावधान में गीत चाँदनी की ३७वीं वर्षगाँठ के अवसर पर शारदोत्सव अखिल भारती कवि-सम्मेलन में डॉ. वी.के. भल्ला ने कवि-सम्मेलन की अध्यक्षता की और श्री गोविंद अक्षय ने संचालन किया। सर्वश्री मोहनलाल निगम, नरेंद्र सिंह परिहार, राकेश कुमार सिंह, मोहन गुप्ता, असलम फरशोरी, अशोक कुमार टिबरेवाल, नरेश कुमार डाकोतिया, रामदेव अग्रवाल विशेष अतिथि थे। सर्वश्री तनीषा साँकला, पंकज मेहता, सीताराम माने, जी. सदानंद लाल, सत्यनारायण काकड़ा, कुंज बिहारी गुप्ता, सुरेश गुगलिया, पुरुषोत्तम कडेल, साजिद संजीदा, लक्ष्मीकांत मोरेश्वर जोशी, संतोष कुमार मिश्र माधुर्य, शिवकुमार तिवारी कोहिरी, प्रेमलता श्रीवास्तव, नरेंद्र सिंह परिहार, टी. दिलबाग सिंह अविनाश, गोविंद मिश्र, नेहपाल सिंह वर्मा, गोविंद अक्षय, मदनलाल मरलेचा, उमा देवी सोनी, सूरज प्रसाद सोनी, मोहनलाल निगम, विजय बाला स्याल, एल. रंजना, असलम फरशोरी, सुषमा बैद, रत्नकला मिश्र, वी.के. भल्ला, महेश कुमार शुक्ला ने कविताएँ पढ़ीं। श्रीमती रत्नकला मिश्र ने आभार व्यक्त किया। □

डॉ. नागेश पांडेय सम्मानित

१२ अक्तूबर को भुवनेश्वर में बाल साहित्यकार डॉ. नागेश पांडेय 'संजय'

को बाल साहित्य सृजन, आलोचना और शोध के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए भुवनेश्वर के रॉयल कॉलेज में रिसर्च इंस्टीट्यूट ऑफ ओडिशा चिल्ड्रन्स लिटरेचर द्वारा सम्मानित किया गया। ओड़िया बाल साहित्य के शोधकर्ता डॉ. मणींद्र मोहंती ने उन्हें प्रशस्ति-पत्र, प्रतीक चिह्न, अंगवस्त्र आदि प्रदान कर सम्मानित किया। डॉ. नागेश ने हिंदी बाल साहित्य में शोध और आलोचना की दशा और दिशा पर अपना शोध-पत्र भी प्रस्तुत किया। ☐

मासिक काव्य-गोष्ठी संपन्न

१९ अक्तूबर को साहित्य के क्षेत्र में निरंतर सक्रिय संस्था, भोजपाल साहित्य संस्थान, भोपाल की मासिक साहित्यिक गोष्ठी श्री सुदर्शन सोनी की अध्यक्षता, श्री प्रियदर्शी खैरा के मुख्य आतिथ्य व वरिष्ठ साहित्यकार द्वय श्री अशोक निर्मल व श्री वीरेंद्र जैन के विशिष्ट आतिथ्य में संपन्न हुई। सर्वश्री अशोक व्यास, फरमान जियाई, अजीम असर, दीपक पगारे, घनश्याम मैथिल, अशोक निर्मल, प्रियदर्शी खैरा, सुदर्शन सोनी द्वारा व्यंग्य पाठ किया गया। संचालन श्री कमलेश ने व आभार श्री सुदर्शन कुमार सोनी ने दिया। ☐

'गांधी और स्वराज' पर राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

२० अक्तूबर को रायपुर में पब्लिक रिलेशन सोसाइटी ऑफ इंडिया द्वारा आयोजित दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी 'गांधी और स्वराज' में तीन तकनीकी सत्रों में महात्मा गांधी के स्वराज पहलुओं पर चर्चा एवं परिचर्चा के साथ ४० से अधिक शोधपत्र, शोध-लेखों का वाचन किया गया। समापन सत्र में मुख्य अतिथि के रूप में रायपुर के आयुक्त और कुशाभाऊ ठाकरे पत्रकारिता और जनसंचार विश्वविद्यालय के कुलपति श्री जी.आर. चुरेंद्र मौजूद रहे। विशिष्ट अतिथि कुलसचिव डॉ. गिरीश कांत पांडे थे। कुलपति प्रो. एल.एस. निगम ने अध्यक्षता की। सर्वश्री संजीव भनावत, सुधीर शर्मा, अजीत पाठक, गोपा बागची और श्रीकांश सिंह विशिष्ट अतिथि थे। सत्र के अंत में सभी प्रतिभागियों को प्रमाण-पत्र दिए गए। 'छत्तीसगढ़ मित्र' पत्रिका के गांधी विशेषांक का विमोचन भी किया गया। धन्यवाद ज्ञापन प्रो. आर.के. ब्राह्मे ने किया। ☐

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

कोलकाता के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक चेतना जागरण केंद्र 'परिवार मिलन' के 'काव्य वीणा सम्मान' के लिए इस वर्ष अष्टम सम्मान हेतु इच्छुक रचनाकारों से वर्ष २००५ के बाद प्रकाशित अपनी छंदबद्ध कृति की चार-चार प्रतियाँ एवं पासपोर्ट आकार के दो चित्र अपने संक्षिप्त परिचय के साथ परिवार मिलन कार्यालय ४, एस.एन. चटर्जी रोड, बेहाला, कोलकाता-४०००३८ पर भेज सकते हैं। ☐

संगोष्ठी एवं काव्य-पाठ संपन्न

२५ अक्तूबर को दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी मुख्यालय में वाल्मीकि जयंती के उपलक्ष्य में 'भारतीय संस्कृति के उन्नायक महर्षि वाल्मीकि' विषय पर संगोष्ठी एवं काव्य-पाठ कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. रामशरण गौड़ द्वारा की गई। मुख्य वक्ता डॉ. अजित कुमार रहे। सर्वश्री बबीता गौड़, गुनवीर राणा, पी.के. आजाद एवं देवीदत्त सजल विशेष रूप से उपस्थित रहे। ☐

श्री पल्लव को शब्द साधक आलोचना सम्मान

३ नवंबर को चित्तौड़गढ़ में हिंदी साहित्य की प्रसिद्ध पत्रिका 'पाखी' द्वारा दिए जानेवाले प्रतिष्ठित सम्मानों में चित्तौड़गढ़ के मूल निवासी श्री पल्लव को २०१८ का शब्द साधक आलोचना सम्मान दिए जाने की घोषणा की गई। नोएडा के इंदिरा गांधी कला केंद्र में १४-१५ नवंबर को आयोज्य 'पाखी महोत्सव' में यह सम्मान दिया जाएगा। ☐

हिंदी माह समारोह संपन्न

१४ सितंबर से १४ सितंबर तक केरल हिंदी प्रचार सभा ने हिंदी दिवस पर राज्य स्तरीय 'हिंदी माह समारोह' मनाया। समारोह में कर्मचारियों, छात्रों, अध्यापकों और हिंदी प्रेमियों ने अत्यंत उत्साह से भाग लिया। सम्मेलन में 'केरल ज्योति' के संपादक प्रो. डी. तंकप्पन नायर एवं अधिवक्ता मधु बी. द्वारा संयुक्त रूप से रचित 'श्रीनारायण गुरु की जीवनी का विमोचन श्री गौरी लक्ष्मीभाई ने किया। २१ सितंबर को केरल हिंदी प्रचार सभा के सहयोग से सरकारी महिला महाविद्यालय, तिरुवनंतपुरम में राजभाषा संगोष्ठी एवं हिंदी साहित्य सम्मेलन आयोजित हुआ, जिसमें अनेक विद्वज्जनों ने आलेख प्रस्तुत किए। ३० सितंबर को कवि-सम्मेलन का उद्घाटन श्री कुमारन तंपी ने किया, पूर्व मुख्य सचिव डॉ. के. जयकुमार अध्यक्ष थे। राष्ट्रीयकृत बैंकों आदि के कर्मचारियों के लिए प्रतियोगिताएँ आयोजित की गईं। इसका उद्घाटन केरल के पूर्व श्रमिक मंत्री श्री बाबू दिवाकरन ने किया। राजभाषा शिल्पशाला में प्रो. डी. तंकप्पन नायर और डॉ. पी.जे. शिवकुमार ने आलेख प्रस्तुत किए। १४ अक्तूबर को समापन सम्मेलन का उद्घाटन केरल राज्य की विधानसभा के अध्यक्ष श्री पी. श्रीरामकृष्णन ने किया। अधिवक्ता मधु बी. ने स्वागत भाषण दिया और श्री एस. गोपकुमार ने कृतज्ञता ज्ञापित की। ☐

सरदार पटेल की जयंती पर संगोष्ठी संपन्न

३१ अक्तूबर को दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी द्वारा भारतरत्न लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल की १४४वीं जयंती के उपलक्ष्य में शपथ ग्रहण, प्रश्नोत्तरी एवं 'एकता-अखंडता की प्रतिमूर्ति : सरदार पटेल' विषय पर संगोष्ठी का आयोजन डॉ. रामशरण गौड़ के सान्निध्य में किया गया। अध्यक्षता शिक्षाविद डॉ. अवनिजेश अवस्थी ने की एवं मुख्य वक्ता श्री कृष्णानंद सागर एवं श्री अरविंद पथिक थे। ☐

२७६वीं मूल्यांकन कवि-गोष्ठी संपन्न

३ नवंबर को हैदराबाद में गीत चाँदनी के तत्त्वावधान में मूल्यांकन कवि गोष्ठी क्रम-२७६ का आयोजन श्री गोविंद अक्षय के संचालन में तथा श्री चंद्र प्रकाश दायमा की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। सेवानिवृत्त वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी श्री गजानन पांडेय ने पत्रिका में प्रकाशित कुछ आलेखों पर चर्चा की। कवि-गोष्ठी की अध्यक्षता उर्दू की कहानीकार-कवयित्री श्रीमती नुसरत रेहाना आसिफ ने की। कवि-गोष्ठी में सर्वश्री कुमुद बाला, रत्नकला मिश्र, पूनम जोधपुरी, सुहास भटनागर, प्रदीप देवीशरण भट्ट, चंद्रप्रकाश दायमा ने अपने विचार रखे।

सर्वश्री खलीश हैदराबादी, पूनम जोधपुरी, सदानंद, विजय लक्ष्मी बसवा, गोपाल कृष्ण 'तनहा', नुसरत रेहाना आसिफ, सुहास भटनागर, गजानन पांडेय, प्रदीप देवीशरण भट्ट, कुमुद बाला, गोविंद अक्षय, चंद्र प्रकाश दायमा, रतनकला मिश्र, दर्शन सिंह, साजीद संजिदा ने काव्य-पाठ किया। श्री जाहेद हरियाणवी और श्री जईम जुमेरा गोष्ठी में विशेष अतिथि थे। ☐

श्रीमती नासिरा शर्मा को 'व्यास सम्मान'

वर्ष २०१९ के व्यास सम्मान के लिए प्रख्यात लेखिका श्रीमती नासिरा

शर्मा के उपन्यास 'कागज की नाव' को चुना गया है। इस पुस्तक का प्रकाशन वर्ष २०१४ है। व्यास सम्मान के लिए कृति के चयन का पूरा दायित्व एक चयन समिति का है। जिसके अध्यक्ष हिंदी साहित्य के प्रख्यात विद्वान डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी हैं। उनके अतिरिक्त इस समिति में अन्य सदस्य हैं—प्रो. रामजी तिवारी (संयोजक, हिंदी भाषा समिति) (मुंबई), श्रीमती ममता कालिया (गाजियाबाद), प्रो. राजेंद्र गौतम (नई दिल्ली), श्रीमती अरुणा गुप्ता (नई दिल्ली) व फाउंडेशन के निदेशक, डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण (सदस्य-सचिव)। □

सिंधी युवा लेखक सम्मिलन संपन्न

७ नवंबर को नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी द्वारा आयोजित द्वि-दिवसीय सिंधी युवा लेखक सम्मिलन के उद्घाटन सत्र की अध्यक्षता सिंधी परामर्श मंडल के संयोजक श्री नामदेव ताराचंदाणी ने की और बीज वक्तव्य श्री वासदेव मोही ने दिया। सम्मिलन के अगले दो सत्रों में युवाओं ने श्री राकेश शेवाणी एवं श्री जयेश शर्मा की अध्यक्षता में क्रमशः कविता एवं कहानी-पाठ प्रस्तुत किए। अपनी रचनाएँ प्रस्तुत करनेवाले थे—सर्वश्री निशा धनवाणी, जितेंद्र चौथाणी, दिव्या धनवाणी, मोनिका पंजवाणी एवं समीक्षा लच्छवाणी। संचालन श्री एन. सुरेश बाबू ने किया। □

पुरस्कार वितरण एवं कवि-सम्मेलन संपन्न

विगत दिनों वारासिवनी में संस्कार भारती संस्था के तत्त्वावधान में संपन्न हुई जिला स्तरीय रंगोली प्रतियोगिता एवं हिंदी ज्ञान प्रतियोगिता का पुरस्कार वितरण कार्यक्रम सरस्वती शिशु मंदिर के सभागृह में संस्कार भारती के संगठन मंत्री श्री राकेश पाठक के मुख्य आतिथ्य में एवं श्रीमती चेतना देवरस के विशेष आतिथ्य में संपन्न हुआ। अध्यक्षता एवं संचालन का दायित्व संस्कार भारती के प्रांतीय उपाध्यक्ष श्री प्रणय श्रीवास्तव ने निभाया। सर्वश्री पंचम हनवत, विजय वाहिले, संदीप रुसिया, हरिओम दुबे ने आयोजन के दायित्व का निर्वहन किया। सर्वश्री रवि नवानी, स्वप्निल डोंगरे, वसंत विराट, चंद्रेश तूफानी एवं मीना जैन ने अपनी रचनाओं से वातावरण को महकाया। आभार श्री पंचम हनवत ने दिया। हिंदी सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता के विजेताओं को पुरस्कार भी वितरित किए गए। □

त्रिदिवसीय साहित्योत्सव संपन्न

गोइन्का पुरस्कारों के लिए प्रविष्टियाँ आमंत्रित हैं। जो हिंदी भाषी साहित्यकार अहिंदी भाषी क्षेत्रों में पिछले १० वर्षों या अधिक अवधि से हिंदी साहित्य की सेवा व सृजन कर रहे हैं, वे भी इन पुरस्कारों के लिए अपनी कृति भेज सकते हैं। ऐसे हिंदी अथवा अहिंदी भाषी दोनों इन पुरस्कारों के लिए अपनी प्रविष्टियाँ भेज सकते हैं। इक्कीस हजार रुपए राशि का 'बाबूलाल गोइनका हिंदी साहित्य पुरस्कार' (दक्षिण भारत के साहित्यकारों द्वारा सर्वश्रेष्ठ प्रकाशित मूल हिंदी पुस्तक के लिए) दिया जाएगा। इस पुरस्कार के अंतर्गत सिर्फ मूल हिंदी कृति ही भेजनी होगी। इक्कीस हजार रुपए राशि का 'पिताश्री गोपीराम गोइन्का हिंदी-कन्नड़ अनुवाद पुरस्कार' (सर्वश्रेष्ठ प्रकाशित कन्नड़ से हिंदी में अनुवादित पुस्तक के लिए)। संपर्क करें—कमलेश यादव, कार्यकारी सचिव, दूरभाष : ९९०००२०१६१ पर संपर्क किया जा सकता है। □

'हिंदी लाओ, देश बचाओ' कार्यक्रम संपन्न

१४ सितंबर को साहित्य-मंडल श्रीनाथद्वारा के सभागार में 'हिंदी लाओ, देश बचाओ' समारोह का त्रिदिवसीय कार्यक्रम शुरू हुआ, जिसमें साहित्यकार, संपादक एवं समाज-संस्कृति सेवा की विभूतियों की उपस्थिति रही। हिंदी उपनिषद् एक कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ. अमर सिंह वधान ने की। विशिष्ट अतिथि थे पंडित मदनमोहन शर्मा, डॉ. राहुल आदि। देश में 'हिंदी की दशा-दिशा' पर सर्वश्री मधुसूदन शर्मा, ओम नारायण गुप्त, चुकी भूटिया, संजय कुमार, श्यामलाल भट्टाचार्य, मंजू, राजलक्ष्मी कृष्णन और मृगेंद्र राय ने विद्वत्तापूर्ण आलेखों का पाठ किया। अगले सत्र में विभिन्न सम्मान एवं पत्रिका 'हरसिंगार' तथा हितेश कुमार शर्मा रचित 'मेरी यात्रा' पुस्तक का विमोचन किया गया। विभिन्न लेखकों को मानद उपाधियाँ प्रदान करने के बाद अखिल भारतीय कवि-सम्मेलन में कविताओं का सस्वर पाठ हुआ। हिंदी उपनिषदों में 'हिंदी भाषा : अस्तित्व का दर्प' विषय पर सुश्री ममता शर्मा एवं 'जापान का हिंदी प्रेम' डॉ. यासमीन सुल्तान नकवी ने अपना आलेख पढ़ा। अगले सत्र में 'हिंदी भाषा भूषण' की मानद उपाधि एवं इक्कीस सौ रुपए की नगद राशि से डॉ. हरिराम पाठक, प्रोफेसर संजय कुमार, डॉ. केशव, डॉ. चुकी भूटिया को सम्मानित किया गया। 'श्री मनोहर कोठारी स्मृति सम्मान' डॉ. संजय प्रकाश, डॉ. श्याम भट्टाचार्य, डॉ. अशोक कुमार, डॉ. मनिका को प्रदान किया गया। अगले सत्र की अध्यक्षता डॉ. अमर सिंह वधान ने की, हितेश कुमार शर्मा एवं अन्य विशिष्ट अतिथि थे। इस अवसर पर डॉ. राहुल द्वारा रचित 'आजाद हिंद फौज' (अफसरों पर अभियोग) और 'एकात्म मानववाद के पुरोधा : पंडित दीनदयाल उपाध्याय' पुस्तकों का लोकार्पण किया गया।

हिंदी के प्रयोगात्मक और प्रचारात्मक दिशा देनेवाले साहित्य-सेवियों को श्रीमोतीलाल राठी स्मृति सम्मान से अलंकृत किया गया। इनमें प्रमुख थे—डॉ. एस. पार्थ सारथी, डॉ. यशवंत सिंह, डॉ. प्रदीप त्रिपाठी, डॉ. बी. रामकोटि पवार, प्रो. माधवेंद्र प्रसाद पांडे। 'हिंदी हुँकृति' के अंतर्गत विविध शीर्षकों 'चहुँदिशि में जिसकी पहचान/हिंदी भाषा बड़ी महान', 'अंग्रेजी के गर्व को तोड़ो/हिंदी को जन-जन से जोड़ो' और 'राजनीति ने कर दी भूल, हिंदी को चुभता है शूल' को सभी ने आत्मसात् किया और स्वरचित पदों को सुनाया। अंत में डॉ. दयाराम मौर्य रतन की कृति 'परिलोक का भ्रमण' का विमोचन किया गया। १६ सितंबर को उपनिषद् तीन में हिंदी से संबंधित विषयों पर श्री पवन तिवारी, अवधेश शुल्क, डॉ. हरिलाल 'मिलन' और डॉ. भावना शुल्क ने आलेख-पाठ किया। 'साहित्य भूषण' की मानद उपाधि से डॉ. प्रमोद श्रोत्रिय, डॉ. दयाराम मौर्य रत्न, सर्वश्री विजय तिवारी, अलका पांडे, भावना शुकल एवं सुरेंद्रपाल सीकर को सम्मानित किया गया। उपनिषद्-४ में हिंदी की दशा और दिशा संबंधी विशेष आलेखों का पाठ विद्वानों ने किया। 'हिंदी साहित्य विभूषण' की मानद उपाधि श्रीमती सुषमा चौहान, श्रीमती अर्चना चतुर्वेदी, सुरेंद्र शर्मा, नीलांबर कौशिक, डॉ. मृगेंद्र राय एवं डॉ. दीन मोहमद दीन को एवं 'हिंदी साहित्य शिरोमणि' की मानद उपाधि से सर्वश्री चंद्रसिंह तोमर, राजेंद्र शार्मा उपाध्याय सिंह, ओमप्रकाश कश्यप महेश चंद्र मिश्र एवं राजीव सक्सेना को अभिनंदित किया गया। अंतिम सत्र में 'पत्रकार प्रवर' एवं 'संपादक रत्न' की मानद उपाधि क्रमशः श्री गोपीनाथ पारीक गोपेश एवं डॉ. धनंजय भंज को प्रदान की गई। संचालन श्री श्याम प्रकाश देवपुरा एवं ब्रजभाषा के विद्वान् श्री विट्ठल पारीक ने किया। □